होलकर हिन्दी ग्रंथमालाका २१ वाँ पुष्प

स्वस्थ शरीर

दूसरा खण्ड

लेखक

इन्दौर राज्यके स्टेट-सर्जन मुन्तजिमेखासबहादुर,

रायबहादुर डाक्टर

सरजू प्रसाद तिवारी

और

रीवां निवासी पं० रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय

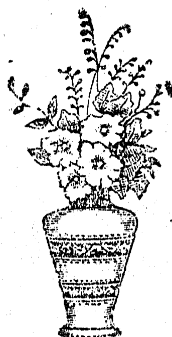
प्रकाशक

"श्रीमध्य-भारत हिन्दी-साहित्य-समिति"

इन्दौर

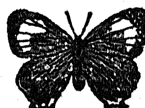
प्रथम संस्करण १००० } १९२४ ई० { मूल्य २।) रेशमी जिल्द २॥।)

प्रकाशक—
"श्रीमध्य-भारत हिन्दी-साहित्य-समिति"
इन्दौर।



मुद्रक—
रिखबदास बाहिती,
"दुर्गा प्रेस"
नं० ४, चोरबगान,
कलकत्ता।

प्रेमोपहार



विषय-सूची

चित्र-सूची



भूमिका



आज जिस व्यक्तिकी ओर हम दृष्टि उठाकर देखते हैं। उसीके मुख-मण्डलकी आकृतिसे हमें अस्वस्थताकी सूचना मिलती है। यद्यपि बहुतेरे लोग ऐसे भी हैं, जो अपनेको स्वस्थ माने बैठे हैं, तथापि बारीक नज़रसे देखनेपर वे भी अस्वस्थ ही साबित होंगे। इस प्रकार स्वास्थ्यका ह्रास हमारे बुरे समयकी सूचना दे रहा है।

कोई यह समझे कि स्वास्थ्य एक दम ही खराब हो जाता है, और वह बिना दवा दारूके अच्छा ही नहीं हो सकता। यह भूल है। मान लीजिये कि, आज एक व्यक्तिको ज्वरकी हरारत हो गई। इसका यह मतलब समझ लेना भूल है कि, आज ही ज्वरका अंश शरीरमें घुसकर ज्वर बन गया। नहीं, इस ज्वरकी नींव तो पहिले ही शरीरमें लग चुकी थी। यहाँ कुछ पाठकोंको यह प्रश्न होगा कि, संक्रामक रोगोंका अचानक होना आपके इस कथनका खण्डन करता है। किन्तु इन संक्रामक रोगोंके कीटाणु भी उन्हीं लोगोंके शरीरमें अपनी जड़ जमाते हैं, जिनके शरीर उनके बढ़ने और पनपने योग्य होते हैं। स्वस्थ-शरीर व्यक्तिकी बलवान सेलें ऐसे निर्बल रोगके बीजोंका

सामना करती हैं, और अन्तमें उनपर अपना विजय पाती हैं सारांश यह कि, स्वस्थ-शरीरपर एकाएकी कैसा भी भयानक रोग क्यों न हो, कदापि विजय नहीं पा सकता !

ऐसा कौन व्यक्ति है, जो अपने शरीरको अस्वस्थ देखकर प्रसन्न रहता हो !! कोई भी नहीं चाहता कि अस्वस्थ रहे, अथवा रोगोंके चंगुलमें फँसा हुआ अपने जीवनको निरानन्दमय बना ले। नीरोग, स्वस्थ, तन्दुरुस्त, बलवान, हृष्टपुष्ट, तेजस्वी, बननेकी सभी इच्छा करते हैं किन्तु; सफल-मनोरथ अधिकांश दृष्टि नहीं आते ! इसका कारण क्या है ?

लोग अक्सर कहा करते हैं कि, अमुक रोग कैसा बुरा है, वह पिण्ड नहीं छोड़ता ! उसने हमारे शरीरको जर्जरित कर दिया है। कई उपाय भी किये किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ अब इससे कैसे छुट्टी मिलेगी ? इत्यादि—हमारे विचारसे ऐसे लोग उस मूर्ख कप्तानसे किसी प्रकार कम नहीं हैं, जिसने आरम्भमें अपने जहाज़के छोटे छिद्रकी परवाह नहीं की, और जब छेद बढ़ गया तब समुद्री तूफानको कोसने लगा। यदि वह मूर्ख केप्टेन आरम्भमें ही उस सूराखको बन्द कर देता तो, उसे अपनी मूर्खता पर दुःख प्रकट करनेके बजाय तूफानको बुरा बतानेका अवसर ही नहीं आता। इसी प्रकार जो लोग अपने शरीरको आरम्भसे ही स्वस्थ रखनेका ध्यान नहीं रखते, और अस्वस्थ होनेपर रोगोंको तथा चिकित्सकोंको कोसते हैं वे महान् मूर्ख हैं।

"धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम् ।"

चारों पदार्थ—धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष जिनके लिये समस्त मानवजाति प्रयत्न कर रही है, केवल सुस्वास्थ्यपर ही अवलम्बित हैं। "एक तन्दुरुस्ती हजार नियामत" का मसला आज लोगोंके मुहँ मुहँ सुन लीजिये, लेकिन उसी वक्त जब कि

बीमार हो जाते हैं। यदि इसे नित्य स्मरण रखें और अपनी तन्दुरुस्तीको ठीक बनाई रखनेके लिये तदनुसार ही आचरण करें, तो क्या मजाल जो कभी अस्वस्थ बननेका मौका आवे।

लोग चाहते हैं कि अस्वस्थतासे बचकर रहें, किन्तु भारत-वर्षके लोग इस विषयमें कुछ उदासीनसे हो गये हैं। इसके दो कारण हो सकते हैं। (१) यह कि संस्कृत पढ़े लिखे न होनेके कारण वे संस्कृतके वाग्भट्ट, चर्क, सुश्रुत, निघण्टु, आदि शास्त्रोंको पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार सम्बन्धी बातें नहीं जान सकते (२) यह कि, इस विषयके उपदेशकोंकी देशमें कमी है यों तो वैद्यों और हकीमोंकी उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है, लेकिन इनकी वृद्धिसे, देशमें आरोग्यता बढ़नेके बजाय, दिन प्रतिदिन रोगकी वृद्धि होती जा रही है।

स्वस्थ-शरीर इसीलिये लिखा गया है कि, लोग इसे पढ़कर अपने शरीरको स्वस्थ बना सकें। अपने दैनिक खान पान आहार विहार (दिन चर्या) को ऐसी बना सकें ताकि उनको कोई रोग न दवा सके। यदि "स्वस्थ-शरीर"से देश-भाइयों को कुछ भी लाभ हुआ और अपने स्वास्थ्य रूपी अमोल रत्नकी रक्षा कर सके, तो हम अपने परिश्रमको सफल मानेंगे।

"स्वस्थ-शरीर" प्रथम खण्डको पढ़कर लोगोंने हमें द्वितीय खण्डको शीघ्र ही लिखनेके लिये प्रेरित किया अतएव यह दूसरा खण्ड भी पाठकोंके हाथोंमें शीघ्र ही पहुँच गया। आशा है पाठक इसे भी प्रथम खण्डकी भाँति ही अपनावेंगे।

इन्दौर
१-३-१९२५

सरजू प्रसाद तिवारी
और
रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय।

ओ३म्

स्वस्थ शरीर

दूसरा खण्ड

पहला अध्याय.

श्रम व्यायाम और विश्राम

Work temperance and rest.
of all physicians are the best.

(१) श्रम



क पुरानी और बिलकुल सच कहावतका अर्थ है 'श्रम जिन्दगीको सुखी बनाता है, और आलस्य सब दुःखोंकी जड़ है।' आलस्य या अल्पश्रम और अयथेष्ट व्यायामसेही प्रायः सब रोग पैदा होते हैं। श्रम, व्यायाम, मनुष्यके स्वास्थ्यके प्राकृतिक साधन हैं।

जागर साहबका कथन है-"जब मनुष्य अपनी स्वाभाविक स्थितिमें रहता है, तब वह आत्मरक्षा और उदर-पोषणार्थ इतना शारीरिक परिश्रम करता है, जितना उसके शरीरको ठीक दशा में रखनेके लिए काफ़ी है। परन्तु आज कल सभ्य-समाजमें, श्रम और व्यायाम का बहुत अभाव है। खुली हवामें अल्प व्यायामके कारण, स्वास्थ्यको अवश्य ही धक्का पहुँचता है। अधिकांश लोग अपनी जिन्दगी, बन्द कमरोंके अंदर काम करनेमें बिताते हैं। काम करनेमें शारीरिक श्रम तो थोड़ा बहुत अवश्य–करना पड़ता है, किन्तु बाहर ताजी और साफ़ हवामें श्रम और व्यायाम करनेसे जो लाभ होता है, उसके साथ इसकी तुलना नहीं की जा सकती।

शारीरिक-श्रमका, हमारे स्वास्थ्य और मन पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। जिसका हमारे समाजके शुभाशुभसे बहुत निकट सम्बन्ध है। मनुष्य–जातिके बुद्धिमान हित-चिंतक श्रमको सदाचारकी वृद्धिका एक मात्र साधन और आशीर्वाद समझते हैं। बुद्धिमान सिनेका का कथन है—"जो श्रम करता है वही जीता है, और जो अपना काम ठीक तौरसे करता है वह अच्छी तरहसे जानता है कि, उसका जन्म क्यों हुआ है। राष्ट्रके प्रत्येक व्यक्तिका श्रमजीवी होना ही राष्ट्रकी उन्नतिका मूल-मंत्र है। भर्तृहरिका कथन है—

"आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।"

अर्थात्–आलस्य ही मनुष्यका बड़ा वैरी है। वेद कहता है—

"कुर्वन्नेवेहि कर्माणि जिजीविषेत शतं समाः"

अर्थात्—कर्म करते हुए सौ वर्ष तक अच्छी तरह जीओ।

हिन्दुओंकी प्राण, गीतामें भगवान् श्री कृष्णने कर्मका ही उपदेश दिया है। सारी गीता कर्म-योग ही है।

वास्तवमें, कर्म द्वारा ही मनुष्य शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति कर सकता है। अकर्मण्यता जीवनको नष्ट कर देती है।

मनुष्य-जातिकी एक बड़ी संख्या कारखानोंमें काम करती है। कारखानोंमें, काम करने वालोंको या तो बहुत समय तक निरन्तर काममें लगे रहना पड़ता है, या कठिन काम करने पड़ते हैं, अथवा आराम करनेके लिये छुट्टी नहीं दी जाती। यदि दी जाती है तो बहुत थोड़े समय के लिए। इन्हीं कारणोंसे मज़दूरोंकी तन्दुरुस्ती बिगड़ जाती है। बहुत से आदमी, अपने व्यवसायोंसे होने वाली शारीरिक हानि से नहीं बच सकते।

शारीरिक या मानसिक परिश्रमोंका बदलते रहना अधिक उपयोगी है। एक ही काममें लगातार जुटे रहनेसे मनुष्य जल्दी थक जाता है, किन्तु बारीबारीसे काम बदलते रहनेसे, उतना शीघ्र नहीं थकता। मनुष्य को परिमित श्रम करना चाहिये। मानसिक परिश्रमसे थक जाने पर, शारीरिक परिश्रम करना चाहिये, अथवा विश्राम करना चाहिये।

मस्तिष्क शरीरका मुख्य अंग है। उसमें परिशुद्ध रक्त

पहुँचता है। मानसिक-श्रमके अनुसार उसमें रक्तका अभि-सरण बढ़ जाता है। रक्त जितना ही शुद्ध होता है, उतना ही अधिक पोषण मस्तिष्कको, प्राप्त होता है। इसलिए; मान-सिक-श्रम करने वालोंको कमरेकी खुली हुई खिड़कियोंसे आती हुई ताजी हवा साँस लेना चाहिए। खुली जगहमें मानसिक-श्रम करना इससे अधिक उपयोगी है। मानसिक-परिश्रम करने वालोंके लिए, खुली हवामें व्यायाम करना; बाग़ीचोंमें टहलना, शुद्ध और हल्का भोजन करना, शराब तम्बाकू चाय आदि से पूर्ण परहेज, करना चाहिए। इससे रक्त शुद्ध रहता है, और मानसिक-शक्तियोंका विकास होता है। श्रम करनेका मुख्य नियम है कि, थकावट न मालूम हो।

व्यायाम—पुराने जमानेमें यूनान और रूमवालोंमें, शरीरकी शक्ति और सुडौलपनकी सबसे अधिक क़दर थी। ऊँचे २ ओहदों पर काम करने के लिए प्रायः सबल-मनुष्य चुने जाते थे। रूमके एक बादशाहने, एक बार यात्रामें किसी जंगली आदमीको देखा। उसने उसकी शक्ति और स्वास्थ्य पर रीझ कर उसे सेनाध्यक्ष बना दिया। पीछे वही रूमका बादशाह हुआ। प्राचीन कालमें सबल-मनुष्योंकी अच्छी क़दर होनेका क़दर था। उस समय द्वन्द्व-युद्धोंमें उसी बाद-शाहको विजय प्राप्त होती थी, जिसके सैनिक सबल होते थे। विजय पाना, सैनिकोंकी शक्ति और साहस पर ही अव-लम्बित था। किन्तु अब बंदूकों, तोपों और वायुयानों

के प्रभावसे यह बात नहीं है। आज कल बहुत बड़े बड़े गोले उगलने वाली बड़ी बड़ी तोपों और सबसे अधिक ऊँचे उड़ने वाले वायुयान, सैनिकोंकी शक्ति या संख्याकी अपेक्षा अधिक महत्वकी दृष्टिसे देखे जाते हैं। फिर भी, अब फ़िजिकल ड्रिलका पहलू बढ़ा चढ़ा है। मिहनतमें चढ़े हुए फौज़ी सिपाहियोंकी बराबरी, सिविलियन नहीं कर सकते हैं।

शारीरिक बलका ह्रास,—किसी जमानेमें, भारतमें स्वस्थ और सबल मनुष्योंका प्राधान्य था। किन्तु आज-कल उसी देशमें, स्वस्थ और सबल मनुष्योंका अभाव है। पीढ़ी दर पीढ़ी निर्बलताकी मात्रा बढ़ती जाती है। आज-कलके निर्बल और नाटे शरीर, पीले चेहरे और चञ्चल-चित्त वाले लड़कोंको देख कर, आने वाली पीढ़ीका पूर्व-दृश्य कैसा दीन दिखाई देता है:—

स्वामी विवेकानन्दका निम्न-लिखित उपदेश विद्यार्थियों को सर्वदा ध्यानमें रखना चाहिए :—

Our young men must be strong first of all. Religion comes aftrwards. Be strong my young-friends, that is my advice to you. You will be nearer to heaven through foot-ball than through the study of Gita...You will understand Gita better with your Eiceps, your muscles a little stronger. You will understand a mighty genious

and the mighty strength of Krisha better with a little strong blood in you. You will understand Upnishads better and the glory of Atman, when your body stands firm upon your feet, and you feel yourself as men."

जो यन्त्र व्यवहारमें नहीं लाया जाता, उस पर मोरचा चढ़ जाता है। इस प्रकार व्यायाम अथवा यों कहिये कि, शारीरिक परिश्रम न करनेसे शरीर-यन्त्र पर दूषण-रूपी मोरचा लग जाता है। फिर भी, शरीरका जो अवयव बिलकुल काममें नहीं लाया जाता, वह सर्वथा बेकाम हो जाता है। अवयव परिश्रमके अनुसार पुष्ट होते हैं। यह प्राकृतिक नियम है। सागरके जलमें लहलहाता हुआ पेड़ भी तूफानोंके धक्कोंसे दृढ़ और पुष्ट हो जाता है। हर बार उसका धड़ हिलता है, उसकी छोटी छोटी जड़ें भूमिके भीतर अधिक अधिक गहराईमें पैठती जाती हैं; और इस प्रकार केवल दृढ़ अवलम्ब ही नहीं प्राप्त करतीं; बल्कि ऐसे छोटे छोटे मुँह बना देती हैं, जिनके द्वारा वृक्षको पोषक-द्रव्य अधिक प्राप्त होता है। मनुष्यके लिए, शारीरिक परिश्रम बहुत ही आवश्यक है। शरीरका वृद्धि-विकाश व्यायामका फल है। शारीरिक परिश्रम या व्यायाम न करनेसे मस्तिष्क, हृदय फुफ्फुस तथा पचनेन्द्रियाँ निर्बल हो जाती हैं। मस्तिष्कका दुर्बलताके कारण, अध्ययन, चिन्ता, स्मरण, कल्पना, विचार प्रभृति मस्तिष्क-सम्बन्धी-कार्य सुचारु-रूपसे सम्पन्न नहीं होते,

तथा प्रेम, दया; भक्ति, स्वार्थत्याग, कर्तव्य-परायणता आदि गुण सम्यक्-रूपसे स्फुटित नहीं होते। हृदय और फुफ्फुसोंके निर्बल होनेसे, शरीरमें रक्तका सञ्चालन सुचारू-रूपसे नहीं होता। ऐसा न होनेसे शरीरके भीतर पैदा हुए मल, शरीरको रोगाक्रांत करते हैं। पचनेन्द्रियकी निर्बलताके कारण, भोजनका परिपाक ठीक तरह नहीं होता। भोजनका अधिकांश असार रूपमें, शरीरसे बाहर हो जाता है। भोजनका बहुत थोड़ा अंश शरीरके पोषणका काम देता हैं। अविशिष्ट-अंश सुचारु-रूपसे परिपाक हुए बिना ही रक्तमें प्रवेश करता है, और इससे रक्त दूषित हो जाता है। रोग इस दूषणका परिणाम है। शरीरको स्वस्थ्य रखनेके लिए, थोड़ा बहुत व्यायाम अवश्य ही करना चाहिए। महर्षि सुश्रुत, व्यायामका लक्षण इस प्रकार लिखते हैं:—

शरीरायासजननंकर्म व्यायामसंज्ञियम्।

अर्थात्-जिससे शरीरके सब अङ्गोंको श्रम पड़े, उसी कर्मको व्यायाम कहते हैं।

व्यायामके सम्बन्धमें चरकने लिखा है:—

"शरीर चेष्टा या चेष्टा स्थैयार्था बलवर्द्धिनी।
देह व्यायाम संख्याता मात्रयाताम् समाचरेत्॥
लाघवं कर्म सामर्थ्य स्थैर्यं क्लेशे- सहिष्णुता।
दोषापायाग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते॥"

अर्थात्—शरीर चेष्टाके द्वारा देहकी स्थिरता, और शक्ति वर्द्धित होती है। इसे देह-व्यायाम कहते हैं; उपयुक्त मात्रामें व्यायाम करना चाहिए। व्यायाम द्वारा शरीरमें हलकापन आता है, कार्य करनेकी शक्ति स्थिरता, क्लेश सहिष्णुता, जठराग्निकी वृद्धि होती है, और देहके विविध दोष नष्ट होते हैं।

हमारे देशके धनाढ्य-मनुष्य शारीरिक परिश्रम करना निन्दनीय समझते हैं। वे समझते हैं कि उन्होंने शारीरिक परिश्रम करनेके लिये जन्म नहीं ग्रहण किया है। खाने, पीने, सोने, गिटपिट करने, आमोद प्रमोदके साथ या निठल्लू बैठकर घड़ियाँ काटनेके लिए ही उनका जन्म हुआ है। वे शारीरिक परिश्रमके परिणामोंसे या तो अनभिज्ञ होते हैं, या उनकी ओर लक्ष्य नहीं देते। देशवासियोंकी शारीरिक शक्तिका ह्रास होनेसे देशका अधःपतन होता ही है। पाश्चात्य देश, उन्नतिकी ओर बेतरह अग्रसर हो रहे हैं। किन्तु भारतकी दशा, देश-हितैषियोंके बहुत कुछ सिर मारनेपर भी नहीं सुधरती। इसका कारण क्या? कारण, पाश्चात्य-देश-वासियोंकी परिश्रम-शीलता, और भारतीयोंकी आलस्य-प्रियता है। जिस परिश्रम-शीलताको हमारे देशके बड़े मनुष्य निन्दनीय समझते हैं, उसीको पाश्चात्य देशके बड़े मनुष्य अनिन्दनीय समझते हैं। वे परिश्रमसे प्रेम रखते हैं, आलस्यसे नहीं। यदि देशको सुचारु-दशामें देखनेकी अभिलाषा रखते हो तो व्यायाम प्रिय बनो।

कार्य करने और न करनेके फल—लोहार अपने

बाएँ हाथसे, संसेके सहारे आगमें तपे हुए लाल लोहेको पकड़ कर, उसे निहाई पर रखता है। अनन्तर दाहिने हाथसे उस पर हथौड़ेकी चोटें चलाता हैं। उसे इस प्रकार नित्य हजारों ताकत भरी हथोड़ेकी चोटें, दाहिने हाथसे लोहेपर चलानी पड़ती हैं। इस मिहनतके कामसे उसके दाहिने हाथकी मांस-पेशियाँ बाँये हाथको मांश-पेशियोंकी अपेक्षा अधिक बढ़ जाती हैं। किन्तु बाएँ हाथकी मांशपेशियाँ भी, साधारण कार्य करनेवाले मनुष्योंके उसी हाथके पट्ठोंसे अधिक कड़ी होती हैं।

कितने ही वर्ष निरन्तर हाथ ऊपर उठा रखनेसे उर्ध्व-बाहुका हाथ, काठकी तरह कड़ा हो जाता है। वह फिर नीचे नहीं आता, उसका लचकपन चला जाता है। अन्तमें उस हाथमें चमड़ेसे ढकी हुई हड्डियाँ ही केवल शेष रह जाती हैं। पट्ठे सब नष्ट हो जाते हैं।

हम नित्य निरन्तर, अपने अङ्गोंसे थोड़ा बहुत परिश्रम लेनेसे ही चल फिर और अन्य काम कर सकते हैं। यदि कई दिनोंतक झोलीमें हाथ रखा जाय, तो शीघ्र ही वह बेकाम हो जाता है। एक सप्ताहके अनन्तर भी झोलीसे हाथ बाहर करने पर, कुहनी कसी हुई और मांशपेशियाँ कड़ी मालूम होंगी। हाथको सीधा करनेकी चेष्टा करनेसे; तकलीफ़ मालूम होगी। इसी प्रकार सारे शरीरकी मांसपेशियाँ काम न लेनेसे, बेकाम हो जाती हैं। फिर उनसे काम लेनेकी चेष्टा करना दुःखदायी मालूम होता है। बिलकुल आराम तलब बन जाने, और किसी प्रकारका परिश्रम

न करनेसे, शरीर बिलकुल बेकाम और कमज़ोर हो जाता है। कोई रोगी कई दिनोंके बाद कुछ आराम होनेपर जब खाटसे बाहर पाँव निकलता है, और ज़मीन पर खड़ा होता है, उस समय उसको बहुत कमज़ोरी मालूम होती है। उसके पाँव काँपते हैं। दो ही कदम चलनेपर उसकी साँस भर आती है। खून अधिक दौड़नेके कारण शरीरमें सनसनाहट मालूम होती है। शरीरके निम्न-भागोंमें रक्तका सहसा बहाव होनेसे, और मस्तिष्कमें काफ़ी रक्त न रह जानेके कारण चक्करसा आता मालूम होता है। कभी कभी क्रमक्रमसे आरोग्य लाभ करनेवाला व्यक्ति डर जाता है। दिलकी अधिक धड़कनसे यह सोचने लगता है कि, उसे दिलकी बीमारी हो गई है। यदि ऐसा व्यक्ति पूर्ण-आरोग्य होनेकी प्रतीक्षामें फिर चारपाई ले लेता है, तो वह दिन २ कमज़ोर होता जाता है। अन्तमें उसकी दशा शोचनीय हो जाती है। ऐसे बहुतसे रोगी देखे जाते हैं। जो महीनों और वर्षों तक खाटके बाहर पाँव नहीं निकालते। बारीक जाँचसे, उनकी बीमारीमें खास बात मांसपेशियोंकी कमज़ोरी साबित होती है। कमजोरीका कारण मांसपेशियोंसे काम न लेना है। नियमित व्यायामसे धीरे धीरे मांसपेशियोंमें ताक़त आने लगती है, और रोगी आराम हो जाता है।

व्यायामसे शरीरको विविध प्रकारसे लाभ पहुँचता है।

१—हम आगे यह लिख आये हैं कि, व्यायाम करनेसे मांसपेशियाँ बढ़ती और कड़ी होती हैं। हम अन्यत्र यह भी लिख आये

हैं कि मांसपेशियोंमें बहुत बारीक तन्तु होते हैं, और उनमें फैलने और सिकुड़नेकी शक्ति होती है। वह मांसपेशी जिससे काम नहीं लिया जाता, बहुत कमज़ोर हो जाती है। उसके तन्तु बहुत पतले और पीले पड़ जाते हैं। उनकी फैलने और सिकुड़नेकी शक्ति नष्ट हो जाती है। अच्छी पुष्ट मांसपेशीके तन्तु बड़े और लाल रङ्गके होते हैं। उनमें लचकपन और शक्ति अधिक रहती है। जिस समय पतली कमज़ोर मांसपेशीसे फैलने और सिकुड़नेका काम लिया जाता है, उस समय उसका पीलापन दूर हो जाता है। उसमें गहरा लाल रङ्ग आ जाता है। रङ्गके इस परिवर्तनका कारण अधिक और ताज़े रक्तका प्रवाहित होना है। ताज़ा खून दौड़नेसे उसे नवीन पौष्टिक पदार्थ मिलता है। उससे तन्तु पुष्ट होते हैं। व्यायाम निरन्तर और काफ़ी करनेसे पौष्टिक-पदार्थ यथेप्सित प्राप्त होते हैं। इससे वे क्रम-क्रमसे बढ़ते हैं। और उनकी असाधारण वृद्धि हो जाती है।

प्रसिद्ध डाक्टर विनशिपने निरन्तर नियमित व्यायाम करके, अपनी मांसपेशियोंकी शक्ति इतनी अधिक बढ़ा ली थी कि, वे कंधोंमें पड़ी हुई बद्धियोंके सहारे, पूरे तीन हज़ार पाउण्ड अर्थात् लगभग ३८ मनका बोझ—वह बोझ जिसे मजबूतसे मजबूत गाड़ी खींचनेवाला घोड़ा मुश्किलसे खींच सकता है, उठा लेते थे। लड़कपनमें डाक्टर विनशिपका शरीर बहुत ही कमज़ोर था। स्कूलमें लड़के उनको चिढ़ाया करते थे, उनका असह-

नीय अपमान करते थे, किन्तु वे सब सह लेते थे। क्योंकि उनके शरीरमें अच्छी शक्ति न थी। उनका कथन है कि, इस कारणसे ही उन्होंने शारीरिक व्यायाम करना शुरू किया था, और व्यायामके कारण ही उनमें ऐसी अपूर्व-शक्ति आ गई थी।

इस देशके आधुनिक भीम प्रो० राममूर्त्तिने अपने अचरज-भरे करतबोंसे संसारको चौंका दिया है। छातीपर हाथी चढ़ा लेना, लोहेकी मोटी मोटी साँकलें तोड़ना, बीस बीस घोड़ेकी ताकत रखनेवाली दो दो मोटर गाड़ियोंकी गति एक साथ रोक देना, आदि उनके लिए हँसी खेल की बात है। इसका कारण क्या? कारण, उनका नियमित व्यायाम है। नियमित व्यायामके कारण उनकी मांसपेशियाँ ऐसी दृढ़ और सबल हो गई हैं कि, वे ऐसे काम बिना किसी कष्ट या कठिनताके कर सकते हैं।

२—नवयुवकोंमें पुष्ट-मांसपेशियोंका होना एक विशिष्ट गुण है। जीवनकी ऐसी कोई अवस्था नहीं, जिसमें वे उनको योग्य न बना सकती हों, अधिक उत्तमताके साथ कार्यमें भाग न ले सकती हों। मनुष्यकी जीवन। गतिमें ऐसे हजारों कार्य आ पड़ते हैं, जिनमें सबल पुष्ट और परिश्रमी मांसपेशियाँ काम देती हैं, और उनमें उनका प्रयोग अमूल्य होता है। उचित और नियमित शारीरिक व्यायामसे केवल शरीरकी वृद्धि ही नहीं होती, बल्कि शरीर लचीला और उद्युक्त बन जाता है। घूमते फिरते समय गति शोभनीय होती है। कमरको ढिलाई, पाँव जल्दी जल्दी न

उठना, अनसोहती चाल आदि उन निर्बल मांसपेशियोंका परिणाम है, जिनसे उचित रीतिसे, घूमने फिरनेका काम नहीं लिया गया है। व्यायाम करनेसे, वह हलकापन और लचीलापन गतिमें प्रत्यक्ष होता है, जो व्यायाम न करनेवाले मनुष्योंमें नहीं दिखाई देता।

३–मांसपेशियोंको उचित रीतिसे काममें लगानेसे कन्धोंकी गोलाई, छातीका चपटापन, कमरका टेढ़ापन आदि शारीरिक कुरूपता दूर हो जाती है। शरीर सुन्दर और सुडौल बन जाता है। मुखपर प्रभा आ जाती है। मनुष्य दीर्घायु होता है।

४–मांसपेशियोंको परिश्रम देनेसे केवल स्वास्थ्य या शारीरिक शक्तिका विकाश ही नहीं होता, प्रत्युत शरीरकी प्रायः प्रत्येक इन्द्रिय पर इसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अस्थि-पञ्जरकी हड्डियोंको भी मांसपेशियोंसे मदद मिलती है। उनका सङ्गठन दृढ़ रहता है। मांसपेशियोंकी कमजोरीसे अस्थिबन्धन ढीले पड़ जाते हैं। इससे शरीरके भिन्न भिन्न भागोंकी दशा बिगड़ जाती है। मांसपेशियोंकी निर्बलताके कारण ही कन्धे गोल बन जाते हैं। छाती चपटी हो जाती है। उपयुक्त और नियमित व्यायामसे शरीरकी यह कुरूपता दूर होती है।

५–मांसपेशियोंसे परिश्रम लेनेपर हृदय और फेफड़ोंके काम बढ़ जाते है। दौड़नेसे दिलको दूना काम करना पड़ता है। फेफड़ोंको दूनेसे भी अधिक काम करना पड़ता है। फेफड़ोंको

साँसके साथ अधिक ओषजन खींचना पड़ता है। साँस अधिक गहरी हो जाती है। इस प्रकार फेफड़ोंको दूनेसे भी अधिक मिहनत पड़ती है। फेफड़ोंका काम अधिक बढ़ जानेसे शारीरिक स्वास्थ्यका आश्चर्यप्रद विकास होता है।

हृदय-केन्द्र एक ऐसा नल है, जो समस्त शरीरमें नव-जीवन देनेवाला रक्त पहुँचाता है। जिस समय हृदय बहुत तेज़ी और मेहनतके साथ काम करता है, उस समय शरीरके प्रत्येक अङ्ग अथवा इन्द्रियमें अधिक रक्त दौड़ाता है। इससे मांसतन्तुओंको खूब पौष्टिक-पदार्थ मिलता है, मल विशेष रूपसे हटाया जाता है, शरीर मल-रहित होता है।

फेफड़ोंके अधिक काम करनेसे, गंभीर श्वास ग्रहण करनेसे, शरीरके भीतर ओषजन अधिक परिमाणमें पहुँचता है। और वह रक्तके लाल कणों द्वारा इन्द्रियोंमें बँट जाता है; और उनको पुष्ट और परिष्कृत बनाता है। शारीरिक यन्त्र अधिक शीघ्रताके साथ चलता, और अधिक प्रभावोत्पादक-कार्य करता है। मस्तिष्क मलसे मुक्त, और नवजीवन देनेवाले रक्तसे सम्पन्न होकर, विचार करनेका काम उत्तम रीतिसे करता है। यकृत्, ओषजन और शुद्ध रक्तका अधिक परिमाण पाकर अधिक पित्त तैयार करता है। आमाशय बहुत तेजीके साथ कार्य करके और शुद्ध रक्तकी अधिक मात्रा पाकर, उत्तम आमाशयके रस तैयार करता है। अधिक भोजन पचाता और उसे रक्तमें प्रविष्ट होने योग्य बना देता है। अधिक भोजन करनेकी आवश्यकता होनेसे भूख

अच्छी लगती हैं, और खानेमें स्वाद मिलता है। इस प्रकार शरीरकी प्रत्येक इन्द्रियमें नव-जीवनका सञ्चार होता है। प्रत्येक इन्द्रिय फुर्त्तीली बन जाती हैं। शरीरका वृद्धि-विकास होता है। शरीरके वृद्धि-विकाससे जो आनन्द मिलता है, वह सुस्त और निरुत्साही बननेसे कदापि नहीं मिल सकता।

श्वास-क्रियाका स्वाभाविक-पथ नासिका-रन्ध्र है। मुँहसे श्वास लेना किसी तरह उचित नहीं। नासिकाके आभ्यन्तरिक भागमें छोटे छोटे रोएँ होते हैं। धूलमें, वायुके जो सूक्ष्म किनके तथा अन्य दूषित-पदार्थ मिले होते हैं, वे रोवोंमें रुक जाते हैं। वे श्वास-वायुके साथ फुफ्फुसोंमें प्रवेश नहीं करने पाते। मिट्टीके तेलके धुएँकी कालिमा नासा-रन्ध्रमें अकसर प्रत्यक्ष होती है। नासिकाके रोएँ वायुमें मिले हुए दूषित-पदार्थोंके कणोंको फुफ्फुसोंमें नहीं पहुँचने देते, इसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। मुँहसे साँस लेनेमें, वायुमें मिले हुए दूषित-पदार्थोंके कण फुफ्फुसोंमें पहुँच कर अनिष्टके कारण बनते हैं। फिर भी बाहरकी ठंढी हवा नाक होकर प्रवेश करनेसे गरम होकर फेफड़ोंमें पहुँचती है। किन्तु मुँहसे साँस लेनेमें, ठण्डी हवा खासकर शीत-ऋतुमें उसी अवस्थामें फेफड़ोंमें पहुँचती है। इससे फेफड़ोंमें प्रदाह आदि कठिन रोगोंके पैदा होनेकी सम्भावना रहती है।

दम या साँसकी अच्छी स्थिरताके लिए हृष्टपुष्ट दिल, और बड़े एवं शक्तिसम्पन्न फेफड़े जरूरी हैं। वह मनुष्य जिसका दिल और फेफड़े कमज़ोर होते हैं, अधिक- शारीरिक परिश्रम

नहीं कर सकता। वह थोड़े परिश्रमसे ही थक जाता है। उसका दम फूल उठता है। हृदय एक मांसपेशी है। मांसपेशियोंकी मददसे फेफड़े साँस भीतर खींचते, और बाहर निकालते हैं। ये मांसपेशियाँ छातीमें इस तरह रक्खी गयी हैं कि, उनके द्वारा फेफड़े धौंकनी की तरह हवा खींचते और बाहर निकालते हैं। शारीरिक-परिश्रम या व्यायाम करनेसे हृदय पुष्ट होता है। और भिन्न भिन्न अवयवोंकी मांसपेशियोंकी तरह उसकी भी ताक़त बढ़ती है। व्यायाम-विशेषसे छातीकी मांसपेशियाँ बढ़ती हैं। छाती, मांसपेशियोंके बढ़नेसे आप ही आप बढ़ जाती है। उसमें अधिक साँस ग्रहण करनेकी ताकत आ जाती है।

हृदय और फेफड़ोंकी वृद्धि-बलके लिए समय अपेक्षित होता है। इसलिए व्यायाम क्रम क्रमसे बढ़ाना उचित है। क्रम क्रमसे व्यायाम बढ़ानेसे, हृदयको अधिक शीघ्रताके साथ शरीरमें शुद्ध रक्त दौड़ानेका और फेफड़ोंको अधिक वायु साँस लेनेके साथ खींचनेका अभ्यास होता है। क्रमिक अभ्यास से छातीको मांसपेशियाँ बढ़ने लगती हैं। इससे हृदय और फेफड़े सबल होने लगते हैं।

दुर्बल-हृदय—वह मनुष्य जिसे व्यायाम या परिश्रम करने की आदत नहीं है, यदि थोड़ा भी व्यायाम करता है तो, उसे हृदय अधिक धड़कता हुआ मालूम होता है। उसका दम मुहूर्तमात्रमें ही फूल उठता है। किन्तु नियमित रूपसे व्यायाम करनेसे, दिल इतना तेज़ धड़कता नहीं मालूम

होता और न इतना जल्दी दम फूल उठता है। क्योंकि क्रम-वद्ध और नियमित व्यायामसे दिल और फेफड़ोंमें अधिक शक्ति आ जाती है।

दिलकी परिक्षा कैसे की जा सकती है?—जिस मनुष्यको अधिक परिश्रम या व्यायाम करनेकी आदत न हो, और जो शान्त बैठा हो उसकी नाड़ी देखो और उसकी गतिकी गणना करो। अनन्तर उसे सीढ़ियों पर दो तीन बार जल्दी २ चढ़ने उतरनेको कहो। इसके पश्चात् फिर उसकी नाड़ी पर हाथ रक्खो, और नाड़ीकी गतिकी गणना करो। अब उसकी नाड़ी-गतिकी संख्या प्रति मिनिट तीस या चालीस, पूर्व-गणनाकी अपेक्षा अधिक होगी। इसी प्रकार उस मनुष्यकी नाड़ी-गतिकी गणना करो जिसे व्यायाम करनेका अच्छा अभ्यास है; और अनन्तर उसको भी सीढ़ियों पर जल्दी जल्दी दो तीन बार चढ़ने उतरनेको कहो। पश्चात् फिर उसकी नाड़ीकी गणना करो। उसकी नाड़ी-गतिकी संख्या, पूर्व-गणनाकी अपेक्षा १० वा १२ से अधिक न होगी।

इस साधारण रीतिसे प्रत्येक मनुष्य, अपने हृदयकी ताकत की जाँचकर सकता है। धीरे धीरे व्यायाम बढ़ानेसे हृदयकी ताकत बढ़ जाती है, और फिर शारीरिक परिश्रम करनेपर नाड़ी-की गति-संख्या उतनी नहीं बढ़ती।

शारीरिक—व्यायामसे शरीर अपने वशमें रहता है। उचित रीतिसे व्यायाम करनेसे शरीरके दोनों ओरकी मांसपे-

शियाँ, समान रूपसे पुष्ट होती हैं। किन्तु शरीरके एक ही ओर अधिक ज़ोर लगानेसे, एक ही ओरकी मांसपेशियाँ पुष्ट होती हैं। साधारणतः जिस काममें कुशलता, फुर्ती और ताकतकी जरूरत होती है, उसमें दाहिना हाथ ही बढ़ता है। इससे मनुष्य जितना जोर दाहिने हाथपर देता है, उतना बाएँ पर नहीं, इससे बाएँ हाथकी मांसपेशियोंकी अपेक्षा दाहिने हाथकी मांस-पेशियाँ अधिक पुष्ट हो जाती हैं। इसी प्रकार शरीरके दाहिने हिस्सेपर अधिक ज़ोर देनेसे, उस हिस्सेकी मांसपेशियाँ; बाएँ हिस्सेकी मांसपेशियोंकी अपेक्षा अधिक बढ़ जाती हैं। किन्तु इससे रीढ़में, जो कि बाईं ओर झुक जाती है, कुरूपता आ जाती, और कंधा नीचा हो जाता है।

व्यायाम उस रीतिसे करना चाहिये, जिससे शरीरकी दोनों ओरकी मांसपेशियाँ समान रूपसे पुष्ट हों। वह मनुष्य जो समान-रूपसे दोनों हाथोंसे कार्य करता है, दिन भरमें एक ही हाथसे काम करनेवालेकी अपेक्षा अधिक काम कर लेता है। यदि एक हाथसे काम करनेवाले व्यक्तिका, काम करनेवाला हाथ किसी प्रकार नष्ट हो जाय, तो उसके लिए अनेक कार्य असम्भव हो जायंगे।

मांसपेशियोंसे परिश्रम लेनेसे मस्तिष्क और वातरज्जुओंको भी फ़ायदा पहुँचता है। मांसपेशियाँ मस्तिष्कके वशमें होती हैं। मस्तिष्कसे वातरज्जुओंके द्वारा आज्ञा पाकर वे फैलती—सिकुड़ती हैं। इसलिए व्यायाममें मांसपेशियोंके साथ मस्तिष्क

और वातरज्जुओंको भी काम करना पड़ता है। जिस परिश्रम या व्यायामसे मांसपेशियोंका वृद्धि-विकास होता है। उसीसे मस्तिष्क और वातरज्जुओंका भी वृद्धि-विकास होता है। शारीरिक-परिश्रमसे मानसिक-विकासमें कोई वाधा नहीं पड़ती बल्कि सहायता पहुँचती है। मस्तिष्ककी कार्य-कारिणी शक्ति बढ़ जाती है। व्यायाम-मस्तिष्क और वातरज्जु-ओंके वृद्धि-विकासका संशय-रहित साधन है।

व्यायाम करनेसे मस्तिष्कमें अधिक रक्त प्रवाहित होता है। मस्तिष्क, अधिक रक्त प्रवाहित होनेसे अधिक कार्य कर सकता है। जो लोग व्यायाम करते हैं वे साधारण मनुष्योंकी अपेक्षा अधिक देरतक, और अधिक सुचारू-रीतिसे मानसिक कार्य कर सकते हैं। जब मांसपेशियाँ व्यायामके काममें लगी रहती हैं, तो उनको कामसे खाली रहनेकी अपेक्षा अधिक रक्त मिलता है। ऐसा होनेसे मस्तिष्क और वातरज्जुओंके केन्द्रसे, वह रक्त जो कि उनमें बहुत देरतक और बहुत अधिक काम करनेके कारण इकट्ठा हो जाता है, प्रवाहित हो जाता है। व्यायाम विद्यार्थियों ग्रन्थकारों, वकीलों आदिके लिए बहुत ही लाभ-कारी है। बहुतसे विद्यार्थी, शरीरकी निर्बलताके कारण, कालेज-की शिक्षा ग्रहण करनेके पहिले ही, पढ़ना लिखना छोड़ बैठते हैं। बहुतसे वकील अपने कार्यमें असफलता प्राप्त करते हैं। यदि नियमित व्यायामके द्वारा मस्तिष्क और वातरज्जुओंके केन्द्रोंको विश्राम दिया जाय, तो ऐसा बहुत कम हो। व्यायाम करनेसे

जो हलकी थकावट आ जाती है, उससे मस्तिष्क शीतल हो जाता है, और उसे आराम मिलता है, तथा नींद अच्छी आती है।

व्यायाम सम्बन्धी साधारण नियम—व्यायाम नित्य करना चाहिए। शरीरको भोजनके समान नित्य, नियमित व्यायामकी आवश्यकता होती है। चार छः रोज निराहार रह-कर, एक रोज ठूँस ठूँस कर खाना, सर्व-साधारणके लिए जैसा हानि-कारक है, वैसा ही ४।६ रोज व्यायाम न करके एक रोज अधिकताके साथ व्यायाम करना हानिकारक है। इसलिए परिमित-व्यायाम नित्य और यथासम्भव नियमित समय पर करना उचित और आवश्यक है।

(१) व्यायाम करनेके लिए प्रातःकालका समय बहुत ही अच्छा है। किन्तु साधारणतः जिस समय नित्य व्यायाम किया जा सके उसी समय करना चाहिए। क्योंकि नियत समय पर व्यायाम करनेसे, शरीरको अधिक लाभ पहुँचता है। निर्बल मनुष्योंको जलपान करनेके बाद व्यायाम करना चाहिए। जिन लोगोंकी पाचन शक्ति–शिथिल पड़ गई हो, उन लोगोंको कुछ जलयोग किये बिना टहलने न जाना चाहिए। अन्यथा उनकी पाचनशक्ति और भी शिथिल हो जाती है, और भोजनमें स्वाद नहीं मिलता।

(२) व्यायाम उतना करना चाहिए, जितना शरीरमें थोड़ी थकावट ला सके। प्रारम्भमें व्यायाम बहुत ही कम करना

चाहिए। जरा भी थकावट मालूम होनेपर, बन्दकर देना चाहिए। धीरे धीरे व्यायाम बढ़ानेसे शरीरको लाभ पहुँचता है। बड़ी सावधानीके साथ निर्बल मांसपेशियोंसे परिश्रम लेना चाहिए। जो लोग आरम्भमें ही बहुत अधिक व्यायाम करनेकी चेष्टा करते हैं, वे जल्दी ही हताश हो जाते हैं। क्योंकि बहुत अधिक व्यायाम करनेसे, उनकी कमजोर मांसपेशियाँ कड़ी और क्षति-युक्त हो जाती हैं। क्रम-क्रमसे व्यायाम बढ़ानेसे मांसपेशियाँ पुष्ट हो जाती हैं, और अन्तमें उनमें अधिक परिश्रम करनेकी शक्ति आ जाती है। शुरू शुरूमें बहुत ही थोड़ा व्यायाम करनेसे, जितनी थकावट मालूम होती है, उतनी ही थकावट समयान्तरके अधिक व्यायामसे भी मालूम होनी चाहिए। इस बातकी ओर पूरा ध्यान रखते हुए क्रमक्रमसे व्यायाम बढ़ाना चाहिए।

(३) यह कहा जाता है कि, प्राचीन कालमें एक रूम-निवासी एक छोटे बछड़ेको, अपने कन्धोंपर लटका कर मकानकी सीढ़ियाँ चढ़ता उतरता था। उसके इस अभ्यासमें कभी एक दिन भी नागा नहीं हुआ। समयान्तरमें जब वही बछड़ा एक मोटे ताज़े बैलके रूपमें परिवर्त्तित हो गया, तब भी वह सरलता पूर्वक उसे कन्धोंपर रक्खे सीढ़ियाँ चढ़ता उतरता देखा गया। उसे बछड़ेको कन्धोंपर लिए सिढ़ियां चढ़ने-उतरनेमें पहिले जितना श्रम पड़ता था, उतना ही श्रम उसे समयान्तरमें बैलको कन्धोंपर लिए हुए भी सीढ़ियाँ चढ़ने-

उतरनेमें पड़ता था। इसका कारण क्या? कारण बछड़ेका क्रमिक-वृद्धिके साथ उसकी मांसपेशियाँ सबल होती गईं थीं।

व्यायामसे शरीरकी वृद्धि होती है—मैकलरेनने अपनी विख्यात पुस्तकमें लिखा है—"व्यायामके द्वारा, शरीर-वृद्धिका उदाहरण, कई वर्ष बीते मैंने स्वयं देखा है। एक नव-युवक जो कि ५ फुट २। इञ्चसे अधिक न बढ़ता था, नियमित व्यायामसे धीरे धीरे बढ़ने लगा। जिस समय उसने भारतके लिये प्रस्थान किया, उस समय उसकी लम्बाई ५ फुट ६ इञ्च थी। दूसरा उदाहरण एक स्कूली विद्यार्थी का है। बचपनमें ऊँची जगहसे लुढ़क पड़नेसे उसकी बाढ़ मारी गई थी। नियमित व्यायामसे वह जल्दी बढ़ने लगा और दो, महीने ही में नौ इञ्चसे अधिक बढ़ गया।

(४) सरल-व्यायामसे जितना शरीर बढ़ता है, उतना कठिन व्यायामसे नहीं। सरल व्यायामसे मांसपेशियाँ जल्दी नहीं थकतीं, और इससे एक ही व्यायाम कितने ही बार किया जा सकता है। किन्तु कठिन व्यायाम बहुत देर तक या बहुत बार नहीं किये जा सकते। कठिन व्यायामोंसे मांसपेशियोंको हानि पहुँचनेकी भी आशङ्का रहती है। इसलिये स्वास्थ्य ठीक रखने या सुधारनेके लिए ऐसे ही व्यायाम चुनना चाहिए, जिनसे मांसपेशियोंको एकबारगी कठिन परिश्रम न करना पड़े।

अंग्रेजी-भाषाके प्रसिद्ध-कवि विलियम कलेन ब्रायेण्टकी शारीरिक और मानसिक-शक्ति ८४ वर्षकी अवस्थामें भी निय-

मित व्यायामके कारण आश्चर्यप्रद थी। मिस्टर ब्रायण्टने मिस्टर जोसेफ़० एच० स्पिर्डको एक पत्र लिखा था। वह पत्र मिस्टर ब्रायेण्टकी मृत्युके बाद, विलायती समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित हुआ था। पत्र शिक्षा-प्रद है। इससे यहाँ उसे उद्धृत करनेके लोभको हम नहीं रोक सकते।

"प्रिय महाशय, मैंने आपको अपनी आदतों, विशेषतः भोजन व्यायाम और कामकाजकी आदतोंका विवरण देनेका वचन दिया था। यद्यपि मैं अपनी जीवन-पद्धतिसे लाभ उठाता हूँ, किन्तु मुझे विश्वास नहीं होता कि, उस पद्धतिसे आपको भी किसी तरहका फायदा पहुँच सकेगा। यद्यपि अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ, तथापि मेरी मानसिक या शारीरिक-शक्ति वृद्धोंकी सी नहीं है। मैंने प्रारम्भसे जिस जीवन-पद्धतिका अनुसरण किया है, अब तक उसीका उसी दृढ़ताके साथ अनुसरण कर रहा हूँ, और यह उसीका फल है, ऐसा कहना कदाचित संशयात्मक हो।

"मैं आजकल सवेरे साढ़े पाँच बजे सोकर उठता हूँ। गरमीके मौसिममें, एक या आधा घण्टा इसके पहिले उठता हूँ। इसके अनन्तर शीघ्र ही मैं कई व्यायाम करता हूँ, जो कि छाती फैलानेके लिये अधिकतर निर्दिष्ट हैं। उसी समय शरीरकी मांसपेशियों और गाँठोंसे परिश्रम लेता हूँ। व्यायाम डम्बलके द्वारा करता हूँ। व्यायाममें एक या आधे घण्टेका समय लग जाता है। इसके बाद मैं सिरसे पाँव तक नहाता

हूँ, और आधे घण्टे या इससे कुछ अधिक समय तक कम परिश्रम वाले कार्य करता हूँ। नहानेके बाद यदि सवेरेका भोजन तैयार न मिला तो मैं पढ़ने बैठ जाता हूँ, और जबतक भोजन तैयार नहीं होता तबतक पढ़ता रहता हूँ।

सवेरेका खाना खानेके बाद मैं थोड़ी देरतक पढ़ता हूँ। इसके बाद यदि क़सबेमें रहा तो इवनिंग-पोष्टके दफ्तर तक, जो कि मेरे डेरेसे तीन मील दूर पड़ता है, टहलते हुए जाता हूँ, और तीन घण्टेके बाद फिर टलहता हुआ, चाहे कैसा ही मौसम हो, चाहे सड़कोंकी दशा कैसी ही हो, वापस लौटता हूँ। घरमें मैं पढ़ने लिखनेमें व्यग्र रहता हूँ। पढ़ने लिखनेसे उकताकर वायु-सेवनके लिए अपने खेतमें जाता हूँ, या बागीचेमें जाकर पेड़ोंकी अनसोहती डालियाँ छाँटता हूँ, या अन्य प्रकारके कार्य जो कि वृक्षोंके लिये उपयोगी होते हैं, करता हूँ। इसके बाद फिर पढ़ने लिखनेमें डँट जाता हूँ! सवारीमें चढ़कर जाना मैं अकसर पसन्द नहीं करता। पैदल चलना मुझे बहुत अधिक पसन्द है।"

ये सब बातें जानकर भी, ऐसा कौन मनुष्य होगा जो शरीरको वैसा स्वस्थ, अंगोंको वैसा फुर्तीला मांश-पेशियोंको वैसा पुष्ट, गतिको वैसी सुन्दर और रोबदार, पाचन-शक्तिको वैसी प्रवल और बुद्धिको वैसी प्रखर, जैसी कि नियमित व्यायामके द्वारा सम्भव है, बनानेके लिए चेष्टा न करेगा? और इसके लिए कुछ समय न खर्च करेगा!! यहाँ

यह प्रश्न उठ सकता है कि, साधारण परिश्रमसे क्या वैसा लाभ हो सकता है जैसा कि व्यायामसे होता है? इसका उत्तर यह है कि, पर्याप्त शारीरिक-परिश्रमसे भूख और पाचन-शक्ति बढ़ती और अनेक प्रकारके लाभ पहुँचते हैं सही, किन्तु ऐसे परिश्रम बहुत कम हैं जो कि अधिक या कम रूपमें शरीरके सुडौल-पनको नष्ट नहीं कर देते। यथा गोड़ने नींदने काटने और बोझोंके बाँधने उठाने एवं ढोनेसे कृषकोंके कन्धे गोल हो जाते हैं। चलते फिरते समय उनका शरीर ढीला रहता है। लोहारके दाहिने हाथ और दाहिनी छातीकी मांसपेशियाँ, अधिक परिश्रम करनेके कारण जैसी पुष्ट और बड़ी होती हैं, वैसी बाएँ हाथ और बाईं छातीकी मांशपेशियाँ नहीं होतीं। हाथकी अँगुलियाँ निरन्तर लोहा पकड़े रहनेके कारण टेढ़ी-मेढ़ी और उनकी हड्डियाँ कठोर हो जाती हैं।

दण्ड करना, मुद्गर भाँजना, बैठक मारना, पटा फेंकना, लकड़ी खेलना, मल्लखम्भ करना, जिमनास्टिक करना, आदि मुख्य व्यायाम हैं। तैरना घोड़े पर चढ़ना, गेंद खेलना, टहलना आदि साधारण व्यायाम है। साधारण व्यायामोंमें टहलना बहुत ही सहज औरउपयोगी है। टहलते समय शरीरको सीधा रखने और आगे बढ़नेमें अनेकानेक मांसपेशियोंको मेहनत करनी पड़ती है। इसलिए शरीरको उपर्युक्त परिश्रम देनेके लिये कमसे कम तीन चार मील नित्य टहलना चाहिए।

किस प्रकार टहलना चाहिए—टहलते समय कंधों-

को पीछे और छातीको आगे बढ़ी हुई, और सिरको सीधा रख-कर, शरीरको सीधा रखना चाहिए। इससे पीठके पट्ठे बढ़ते हैं, और शरीर सुन्दर दिखाई देता है। हाथोंको सहज रीतिसे हिलने देना चाहिए। हथेली खुली और पीछेकी ओर रहनी चाहिएँ। क़दम रखते समय पहिले एड़ी और फिर अँगूठा रखना चाहिये। पैर दृढ़ताके साथ रखना चाहिये, शुरू शुरूमें बहुत लम्बे क़दम न फेंकना चाहिए। धीरे धीरे कदमकी लम्बाई और टहलनेकी दूरीबढ़ाकर, एक घण्टेमें तीन या चार मीलका फासला तय करना चाहिए। यदि इससे भी अधिक परिश्रम बढ़ाना है तो हाथ या कन्धों पर भिन्न भिन्न मानवाले बोझ लेकर टहलना उपयोगी है।

दौड़ना, उछलना और कूदना, टहलनेके परिवर्त्तित रूप हैं। इनके द्वारा साधारण रीतिसे टहलनेकी अपेक्षा शरीरको अधिक लाभ पहुँचता है। जिस नवयुवकको अधिक परिश्रम करनेकी आदत नहीं, उसे शुरू शुरूमें बहुत दूर तक दौड़ना उचित नहीं। शुरू शुरूमें धीरे धीरे और थोड़ी दूरतक दौड़ना चाहिए। इससे हृदय और फेफड़ोंमें अधिक कार्य करनेकी ताकत आ जाती है।

घोड़े या साइकल पर चढ़ना—घोड़े और साइ-कल पर सदा सीधे बैठना चाहिए, कमर झुकाकर नहीं। साइ-कल प्रायः कमर झुकाकर बैठनेकी आदत सिखाती है। साइकल पर बैठो तो सीधे बैठो या बैठो ही नहीं। हम आगे कुछ सचित्र उपयोगी व्यायाम देते हैं। आशा है पाठक उनसे लाभ उठायेंगे।

कौनसा व्यायाम कितनी बार करना चाहिए? इसके सम्बन्धमें आकृतियोंके नीचे अङ्क लिख दिये गये हैं। पहला अङ्क यह प्रकट करता है कि, शुरू शुरूमें इतने बार यह व्यायाम करना चाहिए। बीचका अङ्क यह प्रकट प्रकट करता है कि दो तीन हफ्तेके बाद इतनी बार व्यायाम करना चाहिए। और तीसरा अंक यह प्रकट करता है कि १॥ या दो महीनेके बाद इतनी बार यह व्यायाम करना चाहिए। फिर भी हम इस बातपर जोर नहीं देते कि, हमने जिस व्यायामको जितनी बार करनेके लिये लिखा है, वह उतनी ही बार किया जाय। शारीरिक शक्ति और अवस्थाके ख़यालसे व्यायामकी संख्यायें घटाई बढ़ाई जा सकती हैं।

कसरत करते वक्त आमाशय यथासम्भव खाली होना चाहिए। मलाशय और मूत्राशय खाली होने चाहिएँ।

कसरत करते वक्त कड़े कपड़े न पहनना चाहिए, कालर और वेस्ट-कोट खोल डालना चाहिए, केवल एक कुरता पहने रहना चाहिए।

यदि कुछ व्यायाम करनेपर ही हृदय और फेफड़े थक जायँ, तो ज़रा दम लेकर दूसरे व्यायाम करने चाहिएँ। श्वास गहरा खींचना चाहिए, और धीरे धीरे छोड़ना चाहिए। कमरपर हाथ मुलायमतसे रखना चाहिए, और हाथोंको पीछेकी ओर धीरे धीरे ले जाना चाहिए।

प्रत्येक व्यायाममें थकावट मालूम होनी चाहिए और थका-

वटके बाद ज़रा दम लेना चाहिये। यदि मांसपेशियोंमें द
मालूम हो तो व्यायामकी संख्या घटा दो। इससे तुम्हारी मांस
पेशियाँ क्रम क्रमसे स्वस्थ होंगी, और फिर तुम क्रम क्रम
व्यायामकी संख्या पहलेसे दूनी-चौगुनी तक बढ़ा सकोगे।

व्यायाम जहाँतक हो खुले मैदानमें करो। यदि खुले मैदान
न कर सको तो हवादार लम्बे चौड़े कमरेमें करो। कमरेक
खिड़कियाँ खुली रक्खो।

जिनकी मांसपेशियाँ और नाड़ियाँ कमजोर हों, जिनक
बदहज़मीकी कुछ शिकायत रहती हो, या जो बहुत स्थूल हों उन
व्यायाम नं० ८, ९, १२, १३, २०, २२, २३, २७, २८, ३१, ३
३५, ३६, और ३७ उपयोगी हैं।

पाँच या छः वर्षके बच्चोंके शरीरको सुन्दर और सुडौ
बनानेके लिए व्यायाम नं० ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १
१४, १५, १६, १७, १८, २४, २५, २८ (लड़कियोंके लिए नहीं
२९, ३०, ३१ (लड़कियोंके लिए नहीं) ३२, ३३, ३४, और ३
उपयोगी हैं।

जिन स्त्रियोंको मासिक-धर्म ठीक समयपर नहीं होता य
रक्तस्राव बहुत कम होता है, उनके लिए व्यायाम नं, १०, २०
२२, २३, २८, ३२ और ३५ उपयोगी हैं। इन व्यायामोंसे उनको
बहुत कुछ फ़ायदा हो सकता है।

जिनको स्वप्नदोष अधिक होता है, या जिनमें जननेन्द्रिय
सम्बन्धी निर्बलता आदि हो उनके लिए व्यायाम नं० ७, ८, ९,

१२, १३, १४, १५, १६, १६, २२, २३, २६ और ३६ उपयोगी हैं।

निम्नलिखित व्यायामोंसे छातीके समस्त रोग दूर होते हैं छाती फैल जाती है खाँसी और दमाका रोग अच्छा हो जाता है, स्वरेन्द्रियोंकी शक्ति बढ़ती है। तोतलानेवालों, व्याख्याताओं, उपदेशकों, गायकों, नाटक-पात्रों, अध्यापकों आदिके लिए ये, व्यायाम बहुत उपयोगी है—

व्यायाम नं० ३, ४, ५, ६, , ८, १२, १३, १४ और २५

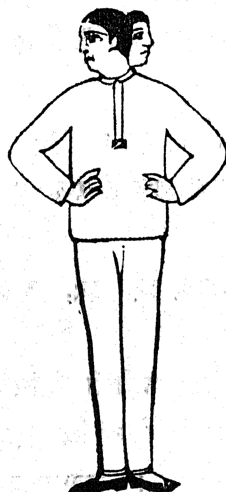
निम्नलिखित व्यायामोंसे हृदयमें और मस्तिष्कमें एकत्र हुआ रक्त प्रवाहित हो जाता है।

व्यायाम नं० १७, १८, १६, २६, ३०, ३१, ३२, ३३ ३५ और ३६

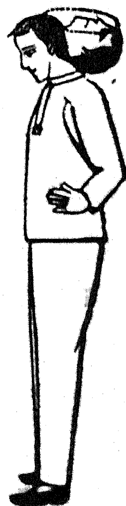
यहाँ हम कुछ चित्र देकर अब व्यायाम करनेकी विधियाँ बतायेंगे। और भी कई प्रकारके व्यायाम हैं, जिन्हें चित्र द्वारा पाठकोंके सम्मुख रखना कष्ट-साध्य बात है। अतएव यहाँ हम थोड़ेसे ही चित्र देते हैं। यदि इनको ही नित्य नियम-पूर्वक किया जावेगा तो बहुत कुछ लाभ होगा।

व्यायाम करते समय शरीर बिलकुल सीधा रखना चाहिये। प्रत्येक व्यायाम कुछ देरतक, और धीरे धीरे करना चाहिये। श्वासोच्छ्वासकी क्रिया नासिकासे ही करनी चाहिये। मुख सूख जानेपर, छाती और बगलमें पसीना झलक आनेपर, व्यायाम बन्द कर देना चाहिये। बिना इन बातोंको ध्यानमें रखे व्यायामसे जितना चाहिये उतना लाभ नहीं होगा।

चित्र नं० १

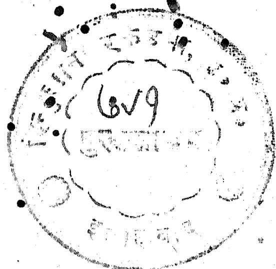


चित्र नं० २

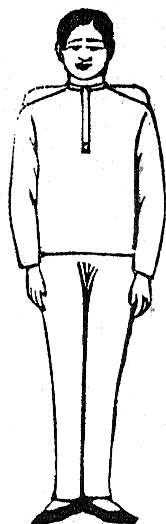


(व्यायाम नं० १) ५, १०
१५ बार
सिरको दाहिने बायें
घुमाओ ।

(व्यायाम नं० २) ५, १०,
१५ बार
सिरको पीछेकी ओर
घुमाओ ।

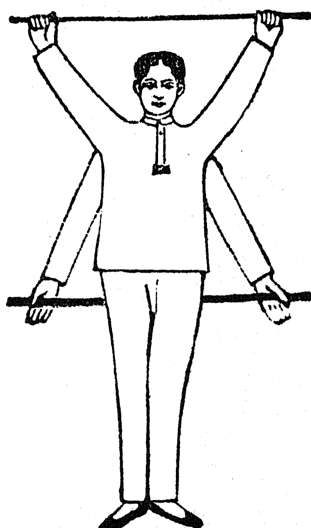


चित्र नं० ३



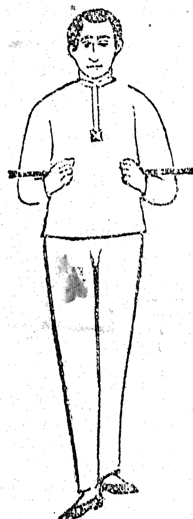
(व्यायाम नं० ३) १४,
२५, ४० बार
दोनों कंधोंको ऊपर उठाओ।
गहरी साँस लो, और
धीरे २ छोड़ो।

चित्र नं० ४



(व्यायाम नं० ४) ६,
१०, २० बार
छड़ी हाथमें लो। उसे ऊपर
उठाओ। फिर गोलाकार
बनाते हुए नीचे लाओ।
हाथकी कुहनियाँ
कड़ी रक्खो।

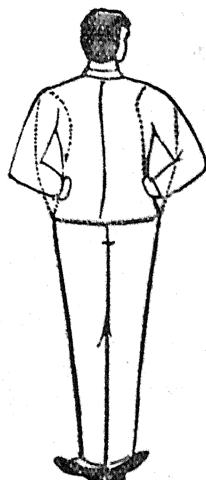
चित्र नं० ५



(व्यायाम नं० ५) ३, ५, १० बार

हाथमें छड़ी लो। दोनों कुहनियोंके बीच उसे मजबूतीसे दबालो। मुट्ठियाँ खूब दृढ़तासे बाँध लो। कंधे झुके हों। इस प्रकार थोड़ा टहलो।

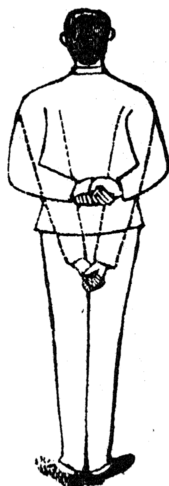
चित्र नं० ६



(व्यायाम नं० ६) ३, ५, १० बार

हाथोंको कमर पर रक्खो। और जहाँतक सम्भव हो कुहनियोंको पीछेकी ओर एक दूसरेसे मिलानेकी चेष्टा करो।

चित्र नं० ७



चित्र नं० ८



(व्यायाम नं० ७)

३, ५, १० बार

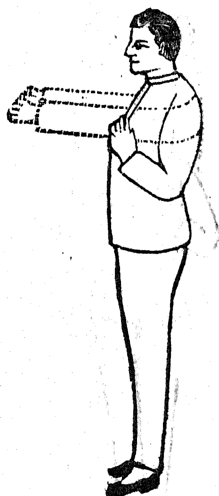
पीछेकी ओर एक हाथसे दूसरे हाथको दृढ़तासे पकड़ो, और दृढ़तासे दोनों हाथोंको बाँधे हुए नीचेकी ओर ले जाओ।

(व्यायाम नं० ८)

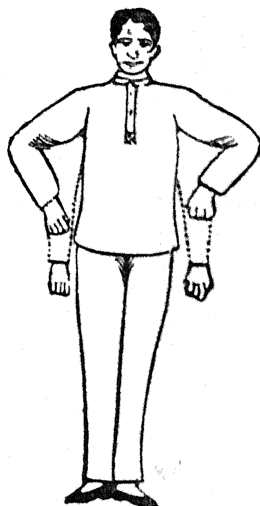
३, ५, १० बार

मुट्ठीको दृढ़तासे बाँधे हुए हाथोंको ऊपर ले जाओ, और फिर छातीके पास ले आओ।

चित्र नं० ९



चित्र नं० १०



(व्यायाम नं० ९)

५, १०, २० बार ।

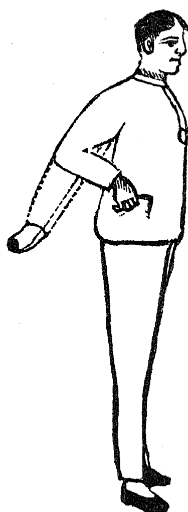
दृढ़तासे मुट्ठी बाँधे हुए हाथोंको आगे बढ़ाओ ।

(व्यायाम नं० १०)

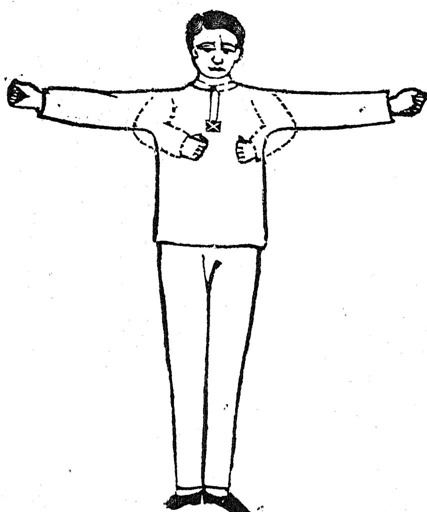
५, १०, २० बार

मुट्ठीको दृढ़तासे बाँधे हुए हाथको वैसा उठाओ, जैसा चित्रसे प्रकट होता है ।

चित्र नं० ११



चित्र नं० १२



(व्यायाम नं० ११)

३, ५, १० बार।

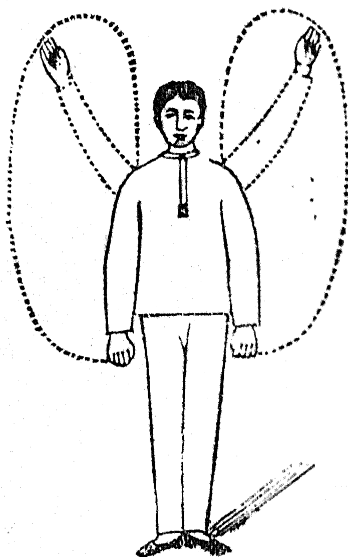
मुट्ठी दृढ़तासे बाँधे हुए, हाथों को पीछेकी ओर ले जाओ।

(व्यायाम नं० १२)

५, १०, २० बार।

हाथोंको दृढ़तासे मुट्ठी बाँधे कन्धेके बराबर फैलाओ।

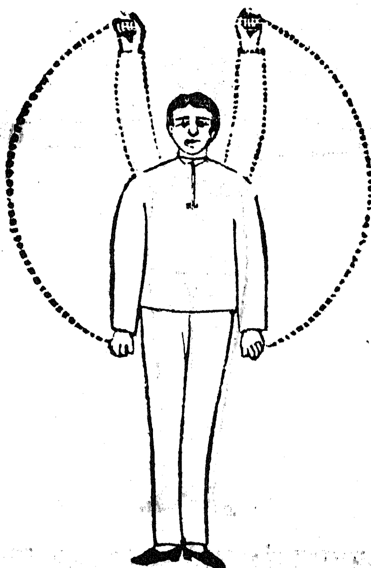
चित्र नं० १३।



(व्यायाम नं० १३) ५, १० १५ बार।

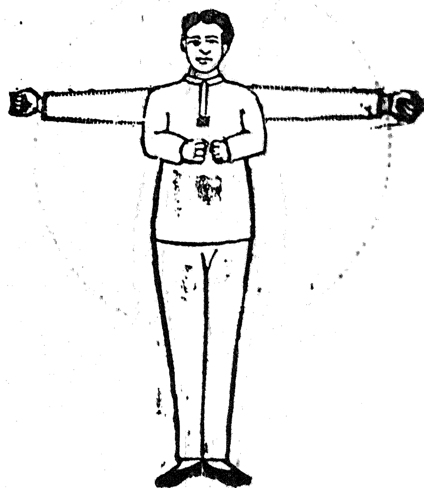
मुट्ठी खोलकर हाथोंको ऊपरसे नीचे ले जाओ। इस बार तीन चार बार करने पर जब थक जाओ तो, ज़रा दम लेकर फिर शुरू करो। किन्तु हाथ सिरके पास न जाने चाहियें।

चित्र नं० १४।



(व्यायाम नं० १४) ५, १०, १२ बार।
दृढ़तासे मुट्ठी बाँधे हुए हाथोंको नीचेसे ऊपर
गोलाकार, दोनों बगलोंसे ले जाइये,
और फिर नीचे लाइये।

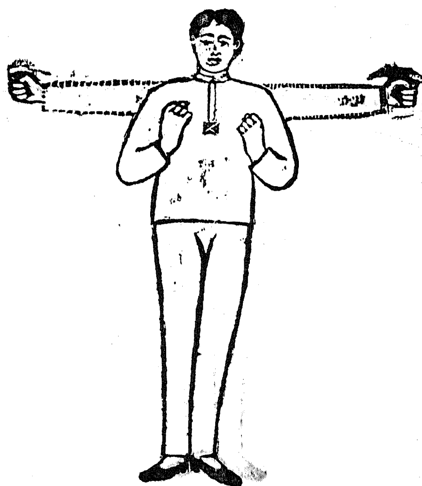
चित्र नं० १५।



(व्यायाम नं० १५) ५, १०, १५ बार।

दृढ़तासे मुट्ठी बाँधे हुए और दोनों हाथोंको आगे रखकर कन्धोंके बराबर ले जाओ। मुट्ठियाँ छातीके पास न हों।

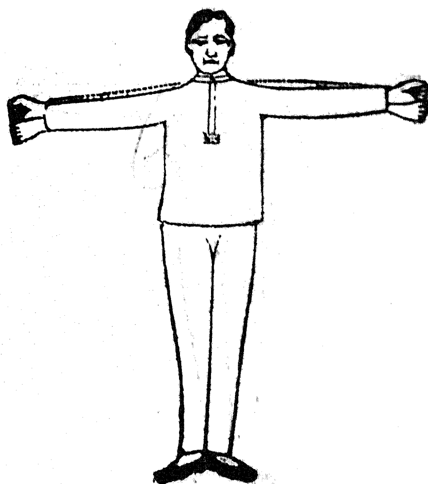
चित्र नं० १६।



(व्यायाम नं० १६) ५, १० १५ बार।

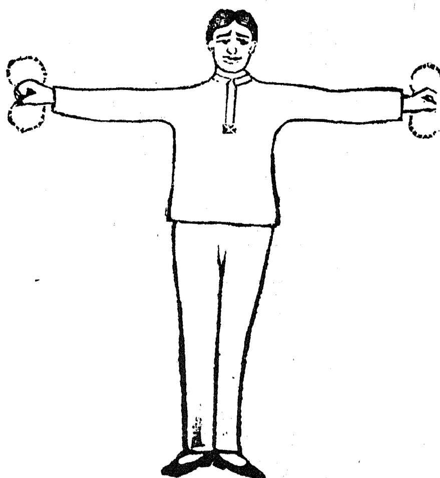
चित्र नं० १४ के ही समान यह भी व्यायाम है। केवल इसमें अन्तर इतना ही होना चाहिये कि, हाथ एक एक कर पारी पारीसे कन्धेके बराबर फैलें।

चित्र नं० १७।



(व्यायाम नं० १७) ५, १०, २० बार।
दृढ़तासे मुट्ठी बाँधे हुए हाथोंको ऊपर नीचे लुढ़काओ, जैसे किसीमें सूराख़ कर रहे हो।

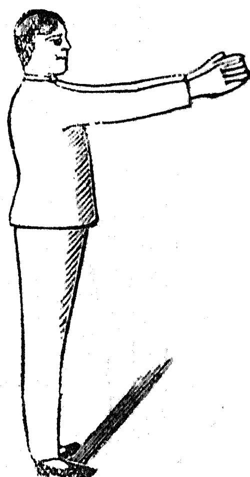
चित्र नं० १८।



(व्यायाम नं० १८) ५, १०, २० बार।

हाथोंको फैलाओ और दृढ़तासे मुट्ठी बाँधो; अनन्तर मुट्ठियोंको इस प्रकार घुमाओ, गोया अँ-गरेजीका (8) आठ अंक बना रहे हो।

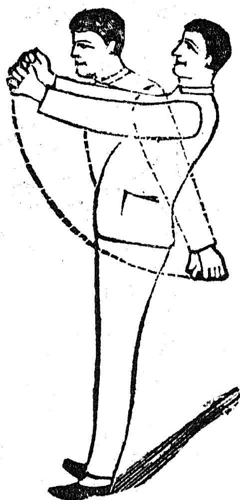
चित्र नं० १६।



(व्यायाम नं० १६) २०, ३०, ५० बार।

दोनों हथेलियोंको एक दूसरेसे खूब रगड़ो। इस व्यायामसे हाथ जल्द गरम हो जाता है। हाथोंमें रक्ताभिरसरणकी क्रिया बढ़ जाती है। छाती और सिरमें रक्त दौड़ने लगता है।

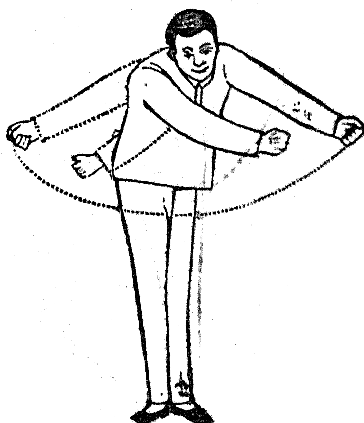
चित्र नं० २० ।



(व्यायाम नं० २०) १० ३० ५० बार ।

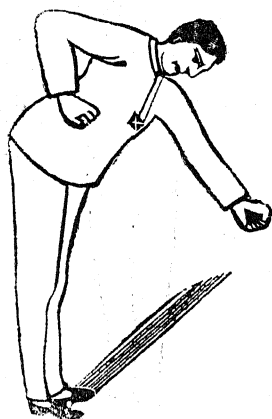
खूब दृढ़तासे मुट्ठी बाँधे हुए, हाथोंको कंधोंके सामने लाओ, अनन्तर हाथोंको धीरे धीरे नीचे उतारो, और पीछेकी ओर जहाँ तक जा सकें ले जाओ ।

चित्र नं० २१।



(व्यायाम नं० २१) १५, ३०, ५० बार।
दोनों हाथोंको, मुट्ठियाँ बाँधे हुए, दाहिने बायें
दोनों बगलोंकी ओर ले जाओ।

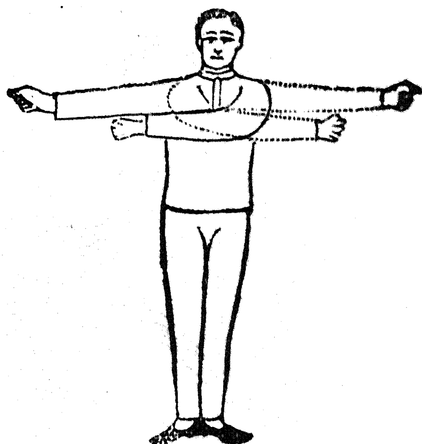
चित्र नं० २२।



(व्यायाम नं० २२) ५, १०, १५ बार।

सीधे खड़े हो कर आगेकी तरफ जरा झुको। दोनों पावों को कड़ा रक्खो। अनन्तर दोनों हाथोंको फैलाओ। एक हाथ पीछे ऊपरकी ओर, दूसरा आगे नीचे-की ओर। पिछले हाथको फिर नीचे लाओ, और अगले हाथको ऊपर ले जाओ, और इसी प्रकार व्यायाम करो।

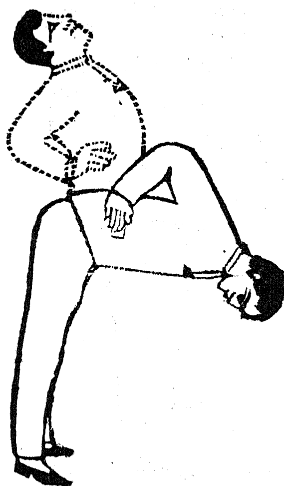
चित्र नं० २३।



(व्यायाम नं० २३) ५, १०, १५ बार।

सीधे खड़े हो। दोनों हाथोंकी मुट्ठियाँ दृढ़तासे बाँध लो, और एक साथ ही दोनों हाथोंको दाहिनी बाईं ओर बाँध लो।

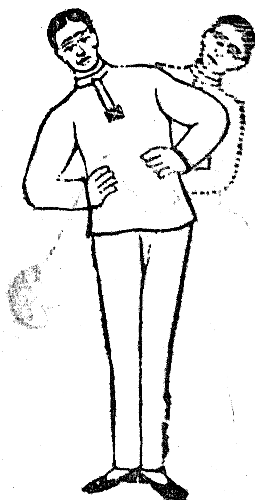
चित्र नं० २४।



(व्यायाम नं० २४) ५, १०, १५ बार।

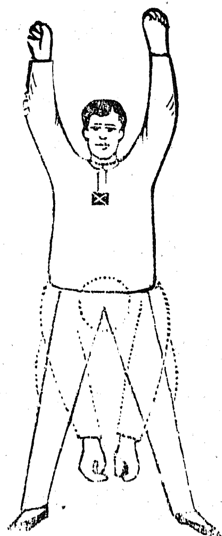
सीधे खड़े होकर, पावोंके पुट्ठोंको कड़े रख कर, शरीरको आगे और पीछे झुकाओ।

चित्र नं० २५।



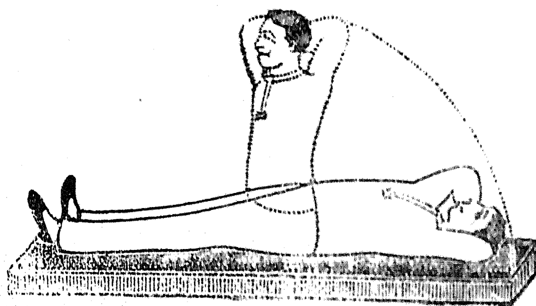
(व्यायाम नं० २५) १०, १५, २० बार।
शरीरको दोनों बगलोंकी ओर झुकाओ।
पावोंके पुट्ठे कड़े रक्खो।

चित्र नं० २६ ।



(व्यायाम नं० २६) ५, १०, १५ बार ।
ज़रा पाँव फैला कर सीधे खड़े हो । पावोंके पुट्ठे कड़े रक्खो । हाथोंको ऊपर उठाओ । हाथों-की मुट्ठियाँ दृढ़तासे बँधी हों । अन-न्तर दोनों हाथोंको एक साथ धीरे २ नीचे जहाँतक ले जा सको ले जाओ ।

चित्र नं० २७।



(व्यायाम नं० २७) ३, ५, १० बार।
सीधे लेट जाओ। दोनों हाथोंको गरदनके नीचे रक्खो, और एक हाथसे दूसरे हाथको खूब मज़बूतीसे पकड़ लो। अनन्तर उठो। उठते वक्त कमर न झुके।

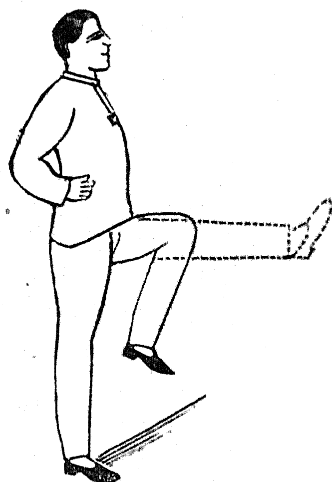
चित्र नं० २८।



(व्यायाम नं० २८) ३, ५, १० बार।

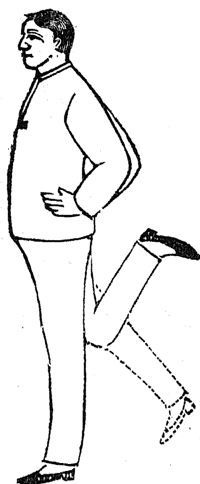
प्रत्येक पाँवसे सीधे खड़े हो। अनन्तर एक पाँवका घुटना ऊपर उठाओ, और उसे छाती तक ले जानेकी कोशिश करो। दूसरे पाँवके सहारे खड़े रहो। दूसरे पाँवसे भी ऐसा ही करो।

चित्र नं० २६।



(व्यायाम नं० २६) ३, ५, १० बार।
प्रत्येक पाँवसे। पहले एक पाँवको आगे ऊपरकी ओर फैलाओ, और फिर सिकोड़ो। इसी तरह दूसरे पाँवसे भी करो।

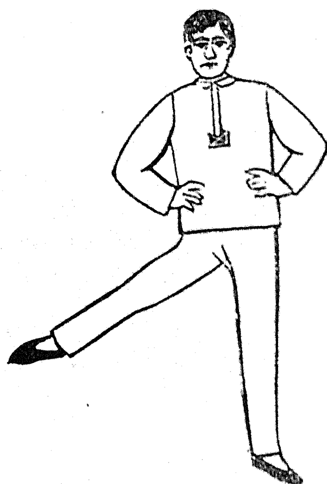
चित्र नं० ३०



(व्यायाम नं० ३०) ५, १० बार।

प्रत्येक पाँवसे। एक पाँवको पीछेकी ओर फैलाओ और घुटनेके बल सिकोड़ो। इसी तरह दूसरे पाँवसे भी करो।

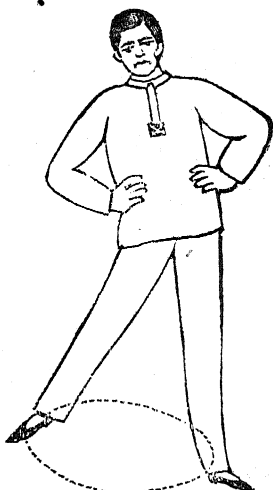
चित्र नं० ३१



(व्यायाम नं० ३१) ३, ५, १० बार ।

प्रत्येक पाँवसे । दाहिने पाँवको दाहिनी ओर, जहाँ तक ऊपर फैल सके फैलाओ, और इसी तरह दूसरे पाँवको बाँई ओर फैलाओ ।

चित्र नं० ३२

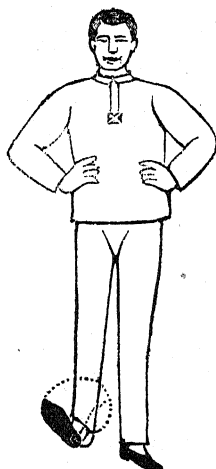


(व्यायाम नं० ३२)

३, ५, १० बार ।

प्रत्येक पाँवसे । दाहिने पाँवको दाहिनी ओर फैलाओ, और उसे वृत्ताकार घुमाओ। इसी तरह बायें पाँवको बाईं ओर फैलाकर वृत्ताकार घुमाओ।

चित्र नं० ३३

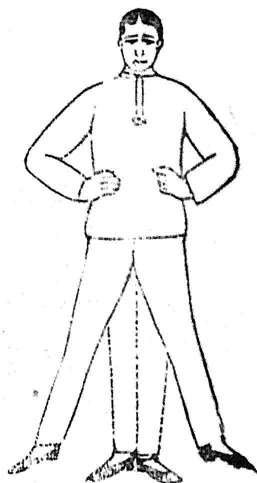


(व्यायाम नं० ३३)

१०, १५, २० बार ।

प्रत्येक पाँवसे । प्रत्येक पाँव-को जरा ऊपर उठाकर दाहिने बायें गोला-कार घुमाओ ।

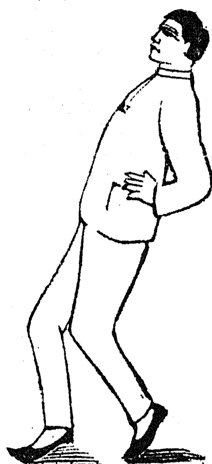
चित्र नं० ३४।



(व्यायाम नं० ३४) ३, ५, बार।

दोनों पाँवोंको फैलाकर सीधे खड़े हो। ऐडी जमीन से उठी हो। अनन्तर दोनों पाँवोंको एकबारगी जरा उछल कर पास लाओ। पाँवके घुटने उछलते वक्त नहीं सिकुड़ने चाहिये।

चित्र नं० ३५

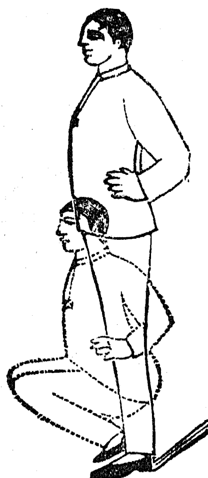


(व्यायाम नं० ३५)

५०, १००, २०० बार।

एक पाँवको ज़रा ऊपर उठाकर, एक पाँवसे एक ही जगह पर धीरे २ कूदो, एडी जमीन पर न लगे। इसी प्रकार दूसरे पाँवसे भी कूदो।

चित्र नं० ३६

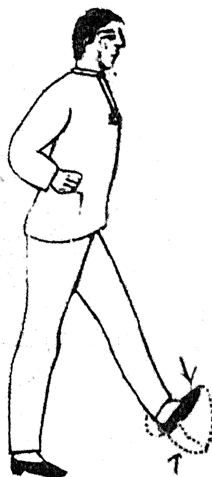


(व्यायाम नं० ३६)

१०, १५, २० बार

दोनों पाँवोंकी एडियोंको पास रक्खो, और घुटने ढीले कर बैठो, किंतु कमर न झुके।

चित्र नं० ३७।



(व्यायाम नं० ३७) १०, १५ ३० बार।
प्रत्येक पाँवसे। एक टाँगको ज़रा आगे उठा कर पाँवको ऊपर और नीचे झुकाओ।

(३) विश्राम ।

जब हम शारीरिक या मानसिक परिश्रमोंमें लगातार कुछ समय तक जुटे रहते हैं, तो हमें थकावट मालूम होती है। यह थकावट शरीरको विश्राम देनेकी सूचना है। जैसे हमें भूख लगती है, प्यास लगती है, वैसे ही हमारे शरीरको विश्रामकी भी इच्छा होती है। शारीरिक या मानसिक श्रम लगातार करते रहने पर, थकजाना स्वाभाविक बात है। मनुष्यको, थक जाने पर कामसे हाथ खींच लेना चाहिये, या काम बदल देना चाहिये। कामका बदल देना भी एक प्रकारका विश्राम है। इसलिए एक प्रकारके कामसे थक जानेपर, दूसरे प्रकारका कार्य करना चाहिये। यथा जब खड़े खड़े पाँव दर्द करने लगें, तो बैठ जाना चाहिये। बैठे बैठे जब तबीयत ऊब उठे, तो टहलना या अन्य प्रकारके शारीरिक-परिश्रम करना चाहिये। एक ही कमरेमें लगातार मानसिक-परिश्रम करते रहनेके बाद, दूसरे कमरेमें चले जानेसे, भी कुछ श्रान्ति दूर हो जाती है। क्योंकि भिन्न-वायु हमारे शरीरके भीतर फुफ्फुसों द्वारा पहुँचकर, हमारे रक्त को शुद्ध करती है। इससे भी अच्छा खुली हवामें व्यायाम करना है। इसलिये, मानसिक-परिश्रम करनेके बाद खुली हवामें शारीरिक-परिश्रम करके मनको विश्राम दो। मैदानमें दो तीन मील तक टहल आओ, दौड़ो-कूदो या गेंदके खेलका आनन्द उठाओ।

कालेज, स्कूल, कचहरी और अनेक कारखानोंमें मानसिक

या शारीरोक-श्रम करने वालोंको, बार-त्योहारोंकी छुट्टियोंके अलावा, सप्ताहमें एक दिनकी छुट्टी दी जाती है। किन्तु पोष्ट, रेल, ट्राम आदि कुछ ऐसे भी विभाग हैं, जिनमें छुट्टियां नहीं मिलतीं। ख़ानगी कारखानोंमें काम करने वालोंसे प्रायः बहुत अधिक काम लिया जाता है, और उनको त्यौहारोंमें भी छुट्टी मिलना मुश्किल होता है। मनुष्यका शरीर प्राकृतिक रीतिसे, विश्राम चाहता है। उसे विश्राम न देना उसपर अत्याचार करना है। निर्बलता या रोग शारीरिक अत्याचारके ही परिणाम हैं। अत्यधिक परिश्रम और अविश्रामके कारण मनुष्य, समयान्तरमें बिलकुल बेकाम हो जाता है। उसकी जीवन-अवधि भी क्षीण हो जाती है।

पुतली-घरोंमें और अन्य अनेक कारखानोंमें, नित्य प्रायः दस घण्टे काम लिया जाता है। दोपहरके वक्त केवल एक घण्टेका अवकाश, रोटी खानेके लिये मिलता है। एक ही प्रकारका काम नित्य दस घण्टे करनेसे, स्वास्थ्यका बिगड़ जाना अवश्यम्भावी बात है। शरीरसे एक ही प्रकारका काम दस घण्टे लेना उसपर जब्र करना है। दस घण्टेका समय अधिक है। कारखानोंमें काम करनेवालोंका समय, आठ घण्टेसे अधिक न होना चाहिये।

पुतली-घर आदिमें काम करने वालोंको, शहरकी घनी बस्तीमें रहना अच्छा नहीं होता। शहरोंकी आबहवा दूषित रहती है। श्रम-जीवियोंको कारखानोंके कमरोंके भीतर दिन

भर जीतोड़ परिश्रम करना पड़ता है, जिससे उनका शरीर और मन दोनों थक जाते हैं। काम करनेके बाद, उनका शरीर शुद्ध ताज़ी हवा चाहता है। शुद्ध-वायु शहरोंमें कहाँ नसीब होती है! इसलिये कारखानोंमें काम करनेवाले श्रम-जीवियोंका निवासस्थान शहरोंसे अलग, मैदानमें या गाँवके निकट होना चाहिये। उनके रहनेके घर ऐसे होने चाहियें, जिनमें काफ़ी बड़ी बड़ी खिड़कियाँ हों। जिससे कमरोंके भीतर स्वच्छन्दता-पूर्वक वायु आ जासके। श्रम-जीवियोंका इस प्रकारका निवासस्थानका प्रबन्ध, कारखानोंके मालिकोंकी ओरसे होना चाहिये। क्योंकि श्रम-जीवियोंके लिये स्वतः इस प्रकारका प्रबन्ध करना बहुत कठिन और दुःसाध्य होता है।

मानसिक या शारीरिक-परिश्रम करने वालोंको सप्ताहमें, एक दिन अवश्य ही कामसे विश्राम लेना चाहिये। प्रत्येक कारखाना, सप्ताहमें एक दिन बन्द होना चाहिये। इस सम्बन्धमें डाक्टर फरे (Dr.–Ferre) ने एक बार पार्लामेण्टमें भाषण देते वक्त कहा था—"मैं विश्रामके लिये रविवारका दिन आवश्यक समझता हूँ। क्योंकि विश्रामसे शारीरिक शक्तिको क्षति-पूर्त्ति होती है। यदि शरीरकी शक्ति एक बार नष्ट हो जाती है, तो फिर कोई दवा-दारू शक्ति नहीं ला सकी। यह सच है कि, रातके विश्रामसे शक्तिकी कुछ क्षति-पूर्त्ति हो जाती है, किन्तु वह यथेष्ट नहीं होती।"

मनुष्यके शरीरकी रचना ही ऐसी है कि, उसे हर सातवें

दिन, एक दिन समग्र शारीरिक और मानसिक-कार्योंसे हाथ खींचकर विश्राम करना चाहिये।

सोनेसे, शरीरको विशेष विश्राम प्राप्त होता है। दिन भरके शारीरिक और मानसिक परिश्रमोंसे जो थकावट आती है, वह सोनेसे बहुत कुछ दूर हो जाती है। सोना मनुष्यके लिये ही क्या? पशु-पक्षियोंके लिये भी परम आवश्यक है। सोये बिना दीमाग़में गर्मी चढ़ जाती है, और तबीयत ठिकाने नहीं रहती। किन्तु नित्य बहुत अधिक सोना या बहुत कम सोना ठीक नहीं है। बहुत अधिक सोनेसे, शरीर सुस्त हो जाता है। बहुत कम सोनेसे शरीरका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। सोने और जागनेके समय शरीरकी श्वास-क्रियामें अन्तर रहता है। दिनके समय, रातकी अपेक्षा कम ओषजन श्वास द्वारा हमारे शरीरके भीतर पहुँचता है। रातके समय दिनकी अपेक्षा कम कार्बोनिक-एसिड श्वासके द्वारा बाहर निकलता है। प्रोफेसर बोईट और वानपेटेनकापरके अनुसन्धानोंने यह सिद्ध किया है—भोजन कार्य-सम्पादन, एवं शारीरिक परिश्रम करनेसे कारबोनिक-एसिड दिनमें ओषजनके, जो कि शरीरके भीतर पहुँचता है, मानसे अधिक बाहर निकलता है। रातमें कारबोनिक-एसिड उतना शरीरसे बाहर नहीं निकलता जितना, ओषजन शरीरके भीतर पहुँचता है। जो ओषजन रातके समय शरीरमें जमा होता है, वह दूसरे दिन कारबोनिक-एसिड बनानेमें काम देता है।

दिनमें भी विश्राम करनेसे, रातकासा ही परिणाम परीक्षाओंसे सिद्ध हुआ है। इन बातोंसे रातमें ही सोनेकी आवश्यकता सिद्ध नहीं होती, वरन् दिनमें भी विश्राम करनेकी आवश्यकता सिद्ध होती है।

नींद क्या है? इस विषयमें वैज्ञानिक अबतक कुछ निश्चय नहीं कर सके हैं। तथापि यह सच है कि, दिन भर शारीरिक काम करनेसे शरीरके अवयव थक जाते हैं। कारण उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है, मांसतन्तु और सेल टूट फूट जाते हैं। सोनेसे थकावट चली जाती है। कारण, मांस-तन्तु और सेल भोजन द्वारा पोषण पाकर फिर ज्यों के त्यों हो जाते हैं; और अवयवोंको काम करनेकी शक्ति प्राप्त होती है। सोनेके समय, शरीरके समग्र अवयव थोड़ा बहुत विश्राम करते हैं। हृदय और फुफ्फुस यद्यपि काम करते हैं, परन्तु सुस्तीसे। हृदय जागृतावस्थामें ७० बार, किन्तु सुप्तावस्थामें ६० बारही धड़कता है। पचन क्रिया भी धीरे २ होती है।

योग-शास्त्र कहता है:—

"अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा।"

अर्थात्—इन्द्रियादि के द्वारा किसी बातका ज्ञान न होना ही, निद्रा है।

सोना शरीरके लिये बहुत स्वाभाविक है। मनुष्यको स्वभावतः नींद आती है। सोना ईश्वरीय देन है। शरीरको थकावट मालूम होती है, अङ्ग भारी हो जाते हैं, काम करनेमें जी नहीं

लगता, आँखें ढलमलाती हैं, पलकें बन्द होतीं और खुलती हैं, सिर आगे पीछे झुकता है, श्वास प्रश्वासकी गति सुस्त और हल्की हो जाती है, नाड़ीकी गति घट जाती है। (एक मिनटमें दस बार) उष्णताकी उत्पत्ति कम हो जाती है, सारांशमें, शरीरके समग्र अवयवोंकी क्रिया ढीली सी हो जाती है। उस समय हम स्वभावतः सो जाते हैं। हमें सोना ही चाहिये। प्रकृतिके नियमोंका उल्लङ्घन करना, जिनसे हमारा शरीर सम्बद्ध है, श्रेयस्कर नहीं।

रातमें सोनेके सम्बन्धमें हम यहाँ कुछ आवश्यक नियम लिखते हैं—

(१) नियत समय पर सोना चाहिये। प्राप्तवयस्कोंको रातमें १०—११ बजेके भीतर सो जाना चाहिए। आधी रातके दो घंटे पहिले सोना, आधीरातके बाद या दिनमें आठ घंटे सोनेकी अपेक्षा शरीरमें अधिक शक्ति, और नव-जीवनका सञ्चार करता है।

(२) खाना खानेके बाद ही न सो जाना चाहिये। खाना खानेके दो तीन घण्टे बाद सोना चाहिये। सोनेके कुछ पहिले चाय, काफी, या शराब आदि उत्तेजक पदार्थ न पीना चाहिये। एक ग्लास शुद्ध शीतल जल पीनेसे ही नींद आ जाती है।

(३) बाएँ करवट न सोना चाहिये। बाईं ओर हृदय होता है। बाईं करवट लेनेसे हृदयके मामूली काममें बाधा पड़ती है, और आमाशय तथा अन्य पचनेन्द्रियों पर यकृतका दबाव पड़ता

है। तकिये पर सिर रखकर, और पाँव फैलाकर चित सोना अधिक अच्छा है। इससे शरीरमें रक्तका संचालन और श्वास-प्रश्वास-क्रियामें बाधा नहीं पड़ती।

(४) सिरका तकिया बहुत ऊँचा न होना चाहिये। क्योंकि बहुत ऊँचा तकिया होनेसे, रक्तके संचालनमें बाधा पहुँचती है।

(५) सोते वक्त दीवारके पास सिर न होना चाहिये। दीवारके पास पाँव होना चाहिये। सिर खिड़कीके पास होना चाहिये।

(६) नींद लानेके लिये, बिस्तरे पर लेट कर न पढ़ना चाहिये। लेटकर पढ़नेसे आँखोंको हानि पहुँचती है, और दीमाग़में पुस्तकका विषय रह जानेसे स्वप्न होते हैं। सोनेके कुछ पहिले क्रोध, भय, या विशेष आनन्दके भाव भी मनमें न होने चाहियें।

(७) कमरेके भीतर न बहुत गर्मी ही होनी चाहिये, और न बहुत अधिक ठण्ड ही।

(८) कमरेके भीतर, शुद्ध वायुके पहुँचने, और भीतरकी दूषित वायुको बाहर निकलनेके लिए खिड़कियाँ होनी ही चाहियें। सोनेके कमरेकी खिड़कियाँ यथासाध्य दिन रात खुली रहनी चाहियें। मनुष्यको आठों पहर शुद्ध वायुमें साँस लेना चाहिये, यही प्रकृतिकी आज्ञा है।

(९) सोनेके लिए मकानका वही कमरा नियत करना

चाहिए, जो विस्तारमें बड़ा हो और जिसमें अधिक खिड़कियाँ हों। सोनेके कमरेमें बिस्तरे, और चारपाईके अलावा और कोई सामान न रहना चाहिये।

(१०) कमरेका फर्श, नित्य शामको साफ़ कर लेना चाहिये।

(११) बिस्तरा, नित्य धूपमें सुखा लेना चाहिये।

(१२) स्वस्थ-मनुष्यको बहुत अधिक न सोना चाहिये। बहुत अधिक सोना स्वास्थ्यके लिये हितकारी नहीं है। बच्चे और बीमार कुछ अधिक देर सो सकते हैं। स्वस्थ-मनुष्यको कमसे कम छः घण्टे, और अधिकसे अधिक आठ घण्टे सोना चाहिये।

(१३) प्रातः काल उठ बैठना, स्वास्थ्यके लिये बहुत अच्छा है। इसलिये प्रातः कालमें नींद खुलते ही बिस्तरा छोड़ दो।

प्रातः काल उठनेका नियम कर लेनेसे, प्रातः काल उठनेकी आदत पड़ जाती है, और इसमें कोई तकलीफ़ नहीं मालूम होती।

फ्रेंकलिनका यह कथन याद रखने योग्य है—

Early to bed and early to rise.
Makes a man healthy wealthy and wise.

अष्टांग-हृदयमें लिखा है:—

'ब्राह्मे मुहूर्त्तेवुध्येत स्वस्थोरक्षार्थ मायुषः'

अर्थात्—स्वस्थ मनुष्यको अपने जीवनकी रक्षाके लिये, चार

घड़ीके तड़के उठना चाहिये। महात्मा तुलसीदास लिखते हैं—

"उठे लषन निशि विगत सुनि, अरुणशिखा धुनि कान।
गुरु ते पहिले जगतपति, जागे राम सुजान॥"

इस दोहेसे सिद्ध होता है कि, नर-पुंगव राम लक्ष्मण मुर्ग़े-की आवाज़ सुनकर बिस्तरा छोड़ देते थे। नीतिकार चाणक्य लिखते हैं:—

"कुचैलिनं दन्तमलोपधारिणं
बह्वाशिनं निष्ठुर भाषिणंच
सूर्योदयेचस्ममितेशयानं
विमुञ्चति श्रीर्यदिचक्रपाणिः।"

अर्थात्—जो मैले कपड़े पहिनता है, जो दाँतोंको साफ़ नहीं करता, जो बहुत खाता है, जो कड़ी बातें बोलता है, और जो सूर्योदय या सूर्यास्त के समय सोता है, चाहे वह चक्रधारी बिष्णु ही क्यों न हो, लक्ष्मी उसे छोड़ देती है।

(१४) प्रातः काल नींद खुल जानेपर, फिर न सोना चाहिये। क्योंकि स्वप्न प्रायः प्रातः-काल ही में होते हैं। स्वप्न होनेके और भी कारण हैं। बहुत अधिक खाकर, या छाती पर हाथ रखकर सोनेसे भी स्वप्न होते हैं।

(१५) शारीरिक परिश्रम करनेवालोंकी अपेक्षा, मानसिक परिश्रम करनेवालोंको सोनेकी अधिक जरूरत होती है। उनकी नींदमें किसी प्रकारका विघ्न न होना चाहिये।

(१६) छोटे बच्चोंको उनकी इच्छानुसार सोने देना चाहिये। जबतक वे स्कूल नहीं भेजे जाते, तबतक वे इच्छानुसार ही सोते हैं। पर स्कूल जाते ही परिवर्त्तन होता है। उनके सोनेका समय घट जाता है। दस—बारह वर्षकी अवस्थाके बालकको दस ग्यारह घण्टे अवश्य ही सोना चाहिये। किन्तु स्कूलोंका काम और कामकी चिन्ता, उन्हें इतनी देरतक सोने नहीं देती। वे मुश्किलसे ७ या ८ घण्टे सोने पाते हैं, जो उनके शरीरके लिये पर्याप्त नहीं। उनके मस्तिष्कको काफ़ी विश्राम नहीं मिलता, और अवयव अपना काम अच्छी तरह नहीं करते। दस ग्यारह वर्षके बालकोंको १०-११ घण्टे नित्य ही सोना चाहिये। माता पिता या शिक्षकको, उनकी शिक्षाकी अपेक्षा स्वास्थ्यका अधिक ख्याल रखना चाहिये।

(१७) कच्चे और खासकर गीले फर्शपर बिस्तरा बिछाकर सोना ठीक नहीं। इससे सिरमें दर्द होता, तथा अन्य रोग हो जाते हैं। साँप बिच्छू आदिके काटनेका भी डर रहता है।

(१८) सोते समय चेहरा खुला रहना चाहिये, जिससे साँस लेनेमें कठिनता न हो। सिर ढक कर सोना, बहुत हानिकारक है।

(१९) जिस कमरेमें सील हो, अथवा सूर्यका प्रकाश न पहुँचता हो, उसमें सोना स्वास्थ्यके लिये हितकर नहीं। ऐसे कमरोंमें सोनेसे शरीरकी गरमी कम पड़ जाती है, और कीटाणुयुक्त वायु साँस लेनेको मिलता है।

(२०) रातमें जब ओस गिरता हो, तब खुले मैदानमें न सोना चाहिये। इससे हाथ पैर टूटते हैं, और कभी कभी ज्वर भी आ जाता है।

दूसरा अध्याय.

व्यक्तिगत स्वस्थ्य-रक्षा।

शारीरिक स्वच्छता।



किसी अंग्रेज विद्वानका कथन है कि ईश्वरत्वके बाद सफ़ाईका ही दरजा है। असलमें, सफ़ाईमें अनुपम गुण हैं। शारीरिक स्वच्छता, स्वास्थ्य का एक प्रधान कारण है।

मनुष्यके शरीरके भीतर नित्य जहरीला मद पैदा होता है। वह अनेक रूपोंमें शरीरके बाहर निकलता है। मुँह, आँख, नाक, त्वचा, और मल मूत्रके मार्ग उसके निकलनेके रास्ते हैं।

इसलिये प्यारे पाठक, नित्य सवेरे उठते ही तुम्हें शारीरिक स्वच्छतामें प्रवृत होनाचाहिए। बिस्तरे से उठते ही मल-मूत्रका त्याग करना चाहिए। मल मूत्रका रोकना शरीरको हानि पहुँ-

चाता है। यदि खुलकर दस्त न आते हों, तो कभी कभी रेंडीका तेल पी लेना चाहिए। स्वास्थ्यके लिए आँतों का साफ़ रहना बहुत आवश्यक है। परन्तु मनुष्यके अनेक बुरे अभ्यासोंके कारण, आँते प्रायः साफ़ नहीं रहतीं। शरीर पर इसका बुरा परिणाम होता है। आँतें साफ रखनेके लिए, एनीमा नामका एक यन्त्र ईज़ाद किया गया है, जिसका दाम आठ दस रुपयेके लगभग है। इस यन्त्रकी सहायतासे आँतोंको साफ़ रखना चाहिये। आँतें साफ रहना तन्दुरुस्तीकी कुँजी है। अनन्तर हाथ पाँव धोकर, मुँह और आँखें साफ़ पानीसे धोना चाहिये। नाककी सफ़ाई करनी भी आवश्यक है। नाकमें एक लसीली चीज़ पैदा होती है। वह सोते समय सूखकर पपड़ी हो जाती है। इसके अलावा मट्टीके तेलका काला धुआँ भी प्रायः नाकके भीतर जम जाता है। इसके बाद दाँतों और जीभको मंजन या दतौनसे खूब साफ़ करना चाहिये। हम सवेरे उठते ही मुँहका स्वाद बिगड़ासा देखते हैं। स्वादका बिगड़ना मुँहका मैलापन प्रकट करता है। भोजन-पदार्थोंके रेशे या अंश दाँतोंके बीचमें फँस जाते हैं, और सड़ते हैं। यदि ये सड़े अंश अलग नहीं किये जाते, और दाँत साफ़ नहीं रक्खे जाते तो, वे भोजनको दूषित कर स्वास्थ्यको हानि पहुँचा सकते हैं।

दाँतों और जीभका मैल साफ़ करनेके लिये हिन्दुस्थानमें दतौन करनेकी बहुत पुरानी चाल है। यह चाल बहुत उपयोगी है। जीभ और दाँतोंको साफ़ रखनेके लिए दतौनका

नित्य व्यवहार करना चाहिये। दतौन करनेसे मुँहकी बदबू दूर हो जाती है, दाँत साफ़ और उज्वल हो जाते हैं। दतौन किन वृक्षोंकी अच्छी होती है, इसके सम्बन्धमें महर्षि सुश्रुतका मत सुनियेः—

निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा।
मधूको मधुरे श्रेष्ठ करञ्ज कटुके तथा॥

अर्थात्—कड़वे पेड़ोंमें नीमकी दतौन, कसैले पेड़ोंमें खैर की दतौन, मीठे दरख्तोंमें महुएकी दतौन, और चरपरे वृक्षोंमें करञ्जकी दतौन श्रेष्ठ होती है।

इसके अनन्तर स्नान करना चाहिये। हिन्दुओंमें नित्य स्नान करनेकी पुरानी प्रथा अब तब प्रचलित है। यह प्रथा स्वास्थ्यकी दृष्टिसे बहुत अच्छी है। मनुष्यके शरीरकी त्वचा, छोटे छोटे छिद्रोंसे चलनी बनी है। उन छिद्रोंसे नित्य एक सेरके लगभग मल-रूपमें पसीना निकलता है। पसीना सूख जानेपर त्वचापर मैल जम जाता है, और त्वचाके बारीक छिद्रोंको बन्द करता है। इससे त्वचाके श्वास-प्रश्वासके काममें, जिसे वह अपने बारीक छिद्रोंके द्वारा करता है, बाधा पड़ती है। यदि यह मैल नित्य साफ़ नहीं किया जाता, तो त्वचा पर पतली तह सी जम जाती है। इसके अतिरिक्त धूल आदिके कणोंका भी त्वचासे सम्पर्क होता है। इससे त्वचा पर मल और अधिक बढ़ जाता है। कभी कभी कीटाणु त्वचाके मैल पर पहुँच जाते हैं, और दाद खुजली आदि

महान् कष्ट-दायक रोग पैदा कर देते हैं। इसलिये त्वचाको नित्य साफ़ करना चाहिये। यही स्नानकी पुरानी प्रथाका मुख्य उद्देश है। चिड़ियोंकी तरह नहानेसे इस उद्देशकी सिद्धि नहीं होती।

चरकका कथन है:—

पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेद मलापहम्।
शरीर बल संधानं स्नान मोजस्करं परम्॥

अर्थात्—स्नान करनेसे, शरीर पवित्र हो जाता है, वीर्य तथा आयुकी वृद्धि होती है, थकावट पसीना और मैलका नाश होता है, तथा बल और तेज प्राप्त होता है। वास्तवमें स्नान वही है, जिसमें त्वचाका मल दूर हो जाय। शरीर बलवान और तेजस्वी बने। महर्षि सुश्रुत लिखते हैं:—

निद्रादाहश्रमहरं स्वेद कण्डूतृषापहम्।
हृद्यं मलहरं श्रेष्ठं सर्वेन्द्रिय विशोधनम्॥
तन्द्रा पापोपशमनं तुष्टि पुंसत्व वर्द्धनम्।
रक्तप्रसारनं चापि स्नानमग्नेश्चदीपनम्॥

"स्नान करना निद्रा, दाह, थकावट, पसीना, खुजली, और प्यासको नष्ट करता है। हृदयके लिये हितकारी है। स्नान करनेसे शरीर शुद्ध होता है। सब इन्द्रियाँ शुद्ध होती हैं, तन्द्रा और पापका नाश होता है, चित्त प्रसन्न होता है, पुरुषार्थ बढ़ता है, रक्त साफ़ होता है और अग्नि दीप्त होती है।"

हमारे शास्त्रकारोंने, स्नानको शारीरिक पवित्रताका मुख्य साधन माना है। बिना स्नान किये पूजा-पाठ होम, जप आदि कोई भी कार्य नहीं किया जा सकता।

स्नानके लिये सबसे अच्छा समय प्रातःकाल है। "प्रातस्नानं प्रशंसन्ति दृष्टादृष्ट करं हितम्" प्रातःकालका स्नान प्रत्यक्ष और परोक्षमें फल देनेवाला है।

हाथके सहारे स्नान करना, बहुत साधारण और उपयोगी रीति है। इसके लिये अधिक जलकी भी जरूरत नहीं होती, तीन चार लोटे पानी काफ़ी होता है। स्नानके समय साबुनका उपयोग करना बहुत अच्छा है। साबुनसे मैल शीघ्र दूर होता है। इसलिये समग्र शरीरमें साबुन लगाना चाहिये। साबुन लगाकर अंगोंको रगड़ना चाहिये, और पानीसे धोना चाहिये। शरीरपर साबुन लगा कर, उसे कपड़ेसे रगड़कर पोंछना अधिक अच्छा है। इससे शरीरका सब मैल दूर हो जाता है। शरीरका मैल साफ़ करनेके बाद, साफ़ पानीसे समग्र शरीरको फिर अच्छी तरहसे धो लेना चाहिये। यही स्नान है।

साबुनके साथ गरम पानीका प्रयोग करना अधिक अच्छा है। इससे मैल बहुत जल्द छूट जाता है। गरम पानी और साबुनसे मैल साफ़ करनेके बाद, ठंडे पानीसे शरीरको धोना लाभ दायक है।

तेल लगाकर स्नान करनेसे, त्वचामें गरमी जल्द पहुँचती है, परन्तु बिना साबुन लगाये मैल साफ़ नहीं होता, जो स्नान-

का मुख्य उद्देश्य है।

भारतके अनेक भागोंमें, तेल लगा कर स्नान करनेकी भी प्रथा है। तेल लगाकर स्नान करनेसे, सरदी कम मालूम होती है। देहमें तेल खूब मल मलकर लगाना या मलवाना चाहिए, जिससे वह शरीरमें अच्छी तरह सोख जाय। तिल या नारियलका तेल लगाना अच्छा है। यद्यपि तेल पसीनेके चिकने अंशके अभावकी पूर्त्ति करता है, तथापि निश्चित रूपसे यह नहीं कहा जा सकता कि, उससे त्वचाकी किसी प्रकारकी क्रिया-वृद्धिमें सहायता पहुँचती है। हालके अनुसन्धानोंसे यह सिद्ध हुआ है कि, तेल या अन्य चिकने द्रवोंकी मालिशसे त्वचामें गर्मी जल्द पहुँचती है। इसलिये मेरी रायमें, नहानेके बाद तेलकी मालिश करनी चाहिये।

ठण्डे पानीसे नहाना, गरम पानीके नहानेकी अपेक्षा अधिक हितकारी होता है। अनेक लोगोंका यह ख्याल है कि, ठण्डे पानीसे नहानेसे सर्दी हो जाती है। परन्तु प्रसिद्ध डाक्टर निकल्सका कहना है कि, वे प्रातःकाल ही समुद्रके जलमें जब पानीकी सतहपर दो अंगुल बर्फ जमी रहती थी तब भी स्नान करते थे, परन्तु उनको इससे कुछ हानि नहीं हुई। आयुर्वेद गरम पानीसे ही स्नान करना श्रेष्ठ बताता है। मेरी रायसे सदा ठण्डे पानीसे स्नान करना चाहिये। शीत-स्नान प्राकृतिक उत्तेजक है, एवं मन और शरीर दोनोंको प्रसन्न करनेवाला है। यदि स्नान के पीछे मुख लाल हो जाय, शरीरमें गर्मी मालूम हो, तो सम-

ऋना चाहिए कि स्नान अच्छा हुआ। प्राकृतिक स्नान शरीरको बड़ा सुखद होता है। यदि ठण्डे पानीमें सर्दी बहुत मालूम हो, तो गरम पानीसे त्वचाको साफ़ करके, ठण्डे पानीसे फिर त्वचाको धो लेनी चाहिये। किन्तु यदि शरीर कमज़ोर हो, ठण्ड या सुस्ती मालूम होती हो, तो कुनकुने पानीसे स्नान करना चाहिये। पानी न बहुत गरम होना चाहिये, और न बहुत ठंडा।

बीमारोंके लिये भी स्नान बहुत आवश्यक है। जैसा हम आगे लिख आये हैं। स्नानसे मतलब त्वचाकी सफ़ाईसे है। बीमारोंको अपने अंगोंको पारी पारीसे, जलसे साफ़ करना चाहिए। यथा, एक हाथको साफ़ कर उसपरके जलको कपड़ेसे अच्छी तरह पोंछ लेना चाहिये। अनन्तर दूसरा हाथ धोना चाहिए। इसी प्रकार पारी पारीसे सब अंगोंको साफ़ करना चाहिए।

स्नानके लिए कुएँके जलकी अपेक्षा, नदी या तालाबका जल अधिक अच्छा होता है। किन्तु वर्षा ऋतुमें जब, नदी या तालाबका पानी मैला रहता है, कभी स्नान न करना चाहिए।

जिन लोगोंको खुले मैदानमें स्नान करनेसे ठण्ड लगनेका भय हो, उनको घरके भीतर स्नान-घरमें स्नान करना चाहिए। स्नान-घरमें स्नान करनेसे ठण्ड कम मालूम होती है; क्योंकि त्वचासे वायुका तेज धक्का नहीं लगता। दूसरे एक और भी

हित है ; मनुष्यके शरीरमें कुछ गुह्य-अंग भी हैं, जो खुले मैदानमें साफ़ नहीं किये जा सकते।

स्नान करनेमें १५ मिनटसे अधिक समय न लगाना चाहिए। स्नान करनेके बाद, शरीरको साफ़ सूखे अँगोछेसे अच्छी तरह पोंछना चाहिए। शरीर पोंछनेके लिये, दो साफ-सूखे अँगोछे रखना अधिक अच्छा है। एक अँगोछेसे त्वचापरका पानी अच्छी तरहसे पोंछ लेना चाहिये। दूसरे अँगोछेसे त्वचाको इतना रगड़ना चाहिए, जिससे त्वचा लाल हो जाय। इससे रक्तका प्रवाह उत्तेजित हो उठता है। ठण्डे पानीसे नहानेके बाद, व्यायाम करना भी लाभप्रद होता है। इससे भी रक्तका प्रवाह उत्तेजित होता है। खानेके बाद दो या तीन घंटेके भीतर स्नान नहीं करना चाहिए। स्नान करते समय पहिले सिरको भिगोना चाहिए, और बालोंको साफ़ करना चाहिए। इसके बाद चेहरेको फिर गरदन, छाती, कंधों, हाथों आदिको क्रमशः साफ़ करना चाहिए।

नेत्र-रक्षा—ज्ञानेन्द्रियोंमेंसे नेत्र मुख्य हैं। नेत्रोंके बिना मनुष्य-जीवन, दुःखदायी और भार-रूप हो जाता है। इसलिये उनकी रक्षा करना मनुष्यका प्रथम कर्तव्य है। नेत्रोंकी रक्षाके लिये, निम्न-लिखित नियमोंका पालन करना आवश्यक है।

१—धुँधले प्रकाशमें, जब आँखें अच्छी तरहसे काम न देती हों, भूल कर भी न पढ़ो-लिखो। यदि ऐसा करोगे तो आँखोंके बहुत निकट क़ागज़ रखना होगा, जिससे कुछ दिनोंमें, दूरकी

वस्तुएँ बिना चश्मेकी मदद्से न देख सकोगे।

२—बहुत तेज़ रोशनीमें भी पढ़ने-लिखनेसे आँखोंको हानि पहुँचती है। इससे तेज रोशनीमें मत पढ़ा-लिखा करो। सूर्य-की ओर मत ताका करो।

३—क़सीदेके बहुत बारीक कामोंको, देरतक न किया करो।

४-नेत्रोंके आगे बत्ती रखकर, पढ़ना-लिखना या अन्य कार्य करना हानिकारक होता है। प्रकाश पीछेकी ओरसे या बगलसे सामने आना चाहिये।

५—दौड़ती हुई गाड़ी, मोटर, ट्राम, या रेलमें पढ़ना लिखना आँखोंको हानि पहुँचाता है।

६—बहुतसे लोगोंकी, बिस्तर पर लेटकर पढ़नेकी आद्त होती है, यह आद्त आँखोंके लिए हानिकारक है।

७—तेज धूपमें आँखोंपर आसमानी रङ्गका, या काले रङ्गका चश्मा लगानेसे आँखोकी रक्षा होती है।

कानोंकी रक्षा—कानोंकी रचना आँखोंकी रचनासे भी पेचीदा है। कानोंका कण्ठसे गहरा सबन्ध है। इसीसे प्रायः यह देखा जाता है कि, जुकामके साथ ही कर्ण-रोग भी हो जाता है। इसलिये कर्ण-रोगकी चिकित्सामें, कण्ठपर भी ध्यान देना आवश्यक होता है। खौलते हुए जलको किसी बर्तनमें बन्द करके पतली नली-द्वारा उसकी भाप कण्ठमें लेनेसे कर्ण-रोगमें आराम मिलता है।

कानोंसे भी एक प्रकारका मैल निकलता है। यह मैल आप ही आप सूखकर निकल जाता है। सलाई या लकड़ी आदिसे कानोंका मैल निकालना अच्छा नहीं। इससे पतली झिल्लीमें धक्का पहुँचता है, और मैल अधिक बनने लगता है। इसके सिवाय कानोंमें लकड़ी, सलाई, आदि डालनेसे कभी कभी चोट भी पहुँच जाती है।

कानोंके भीतर ठण्डा पानी पहुँचकर हानि पहुँचाता है। इसलिये नदी या तालाबमें डुबकी लगाते समय, कानोंको रुईके फ़ाहोंसे बन्द कर लेना चाहिए।

कानोंके पास किसीको चिल्लाने न दो। इससे बहरापन हो जाता है।

बालकोंका कान उमेठना, या कानपर चपत लगाना ठीक नहीं। इससे कानोंको हानि पहुँच जानेकी सम्भावना रहती है।

दन्त-रक्षा—दाँत केवल मुखकी ही रक्षा नहीं करते बल्कि स्वास्थ्य-रक्षाके लिए भी अच्छे दाँत परमावश्यक हैं। यदि आरंभसे ही अर्थात् शैशवावस्थासे ही दूधके दाँतोंकी रक्षा की जाती है, तो स्थायी दाँत भी अच्छे और सुन्दर निकलते हैं। खाद्य-पदार्थोंको काट पीसकर, पचनेन्द्रियोंमें उनको पचने योग्य बनाना दाँतोंका काम है। खराब दाँत अपना यह कार्य अच्छी तरहसे नहीं कर सकते, जिससे भोजन पक्काशयमें सुचारु-रूपसे नहीं पचता। दाँतोंसे भोजनके काटने पीसनेका कम काम लेनेसे

अर्थात् लसीले, गूदेदार भोजनसे या शराब, चाय, काफी आदिसे, पेट भर लेनेसे दाँत प्रायः खराब हो जाते हैं। बहुत ठण्डा खाना भी दाँतोंको हानि पहुँचाता है। मिठाइयाँ भी दाँतोंको हानि पहुँचाती हैं, और उनको खराब कर देती हैं। बीड़ी, सिगरेट पीने और तम्बाकू-पान खानेसे दाँत खराब हो जाते हैं, और उन पर मैलकी पीले रङ्गकी, हानिकारक पपड़ी जम जाती है। मांस अधिक खानेसे भी, दाँत खराब हो जाते हैं। खराब दाँतोंसे मुँह और गलेके, अनेक रोग पैदा होते हैं।

दाँतोंको अच्छी दशामें रखनेके लिए, सफ़ाईकी बड़ी आवश्यकता होती है। इसलिए दँतौन नित्य करना चाहिए और दाँतोको मञ्जनसे चिकना बनाते रहना चाहिए। इसके अतिरिक्त नित्य कुछ कड़े पदार्थ खाने चाहिएँ, जिससे दाँतोंको परिश्रम करना पड़े।

केश-रक्षा—प्रत्येक देशमें केश शरीरकी सौन्दर्य-वृद्धिके साधन माने जाते हैं। यदि बाल सौन्दर्यके साधन न समझे जाते, तो हम लोगोंको तरह तरहके फेशनके बाल रखे और बालोंका सँवार-शृंगार करते न देखते। केशोंका केवल खोपड़ीसे ही नहीं बल्कि समग्र शरीरके स्वास्थ्यसे सम्बन्ध है।

अत्यन्त मानसिक-कार्योंसे, जागरण करनेसे अनुपयुक्त भोजन करने, तथा शुद्ध-वायु और सूर्यके प्रकाशसे वंचित रहनेसे, बालों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। आजकल अनेक लोगोंके बाल थोड़ी उम्रमें ही झड़ जाते हैं। बीमार होने पर भी

किसी किसी के बाल झड़ जाते हैं। खोपड़ीकी त्वचा एवम् बालोंकी जड़ोंके रक्त द्वारा, आवश्यक पोषण प्राप्त न होना इसका कारण होता है। यह देखा जाता है कि, जिस व्यक्ति के बाल बीमारीके कारण झड़ जाते हैं, उसके आरोग्य-लाभ करने पर बालोंकी जड़ें फिर जीवित हो जाती हैं, और नये बाल निकलने लगते हैं। ऐसा क्यों होता है? कारण खोपड़ीकी त्वचाको, रक्तसे पोषण मिलने लगता है। इस-लिए जिस व्यक्तिके बाल अनायासही झड़ते हों, उसे सबसे पहले अपने स्वास्थ्यको ठीक करना चाहिए। उसे रक्तको शुद्ध और पोषक बनानेके लिए, खुले वायुमें शारीरिक परि-श्रम या व्यायाम करना चाहिए, और समय पर स्वास्थ्य-कारी भोजन करना चाहिए। उसे मिठाइयों और मांस मसाले आदिसे परहेज़ करना उचित है।

सिरके बालोंको कटा कर छोटे करा लेना भी आवश्यक होता है। ऐसा करनेसे बालोंकी जड़ों पर कम भार पड़ता है, और सफ़ाई भी हो सकती है।

हल्के गरम पानी, और मुलायम साबुनसे सप्ताहमें दो बार खोपड़ीकी त्वचाको साफ़ करो। फिर ठंडे पानी से सिरको खँघालो। इसके बाद खोपड़ीकी त्वचाको अँगुलियोंसे यहाँ तक रगड़ो कि, बाल सूख जावें और त्वचा लाल और चम-कीली हो जाय। यदि बाल खुश्क रहते हों तो, इस समय थोड़ा सा मीठा तेल या वेसलिन लगा लिया करो। इसी

प्रकार नित्य सवेरे और शाम अँगुलियोंको ठंडे पानीमें डुबाकर त्वचाको रगड़ा करो। ऐसा करनेसे खोपड़ीकी त्वचा में रक्तकी अच्छी गति होने लगेगी, और त्वचाको पर्याप्त पोषण प्राप्त होगा।

बालोंकी रक्षाके लिए सफ़ाई बहुत आवश्यक है। सिरको साबुनसे घोनेसे मैल दूर हो जाता है।

नख—मैले नाखून मैलेपन और असभ्यताके परिचायक ही नहीं होते, बल्कि वे हानिकारक भी होते हैं। नाखूनोंके तले जो मैल जम जाता है, उसमें कितने ही प्रकारके रोगोंके कीटाणु अपना अड्डा जमाते हैं। ऐसे नाखूनोंसे छूतके भयानक रोग फैल जाते हैं। इसलिए नाखूनोंको खूब साफ़ रखो। प्रति सप्ताहमें दो बार, उनके बढ़े हुए अंशको कटा दिया करो।



तीसरा अध्याय.

वायु ।



वायु जिसमें हम साँस लेते हैं 'जीवनकी साँस है ।' जीवन और स्वास्थ्यसे श्वासोच्छ्वासका घनिष्ट-सम्बन्ध है । इसलिए उनके गुणोंकी जानकारी प्रत्येक व्यक्तिके लिए आवश्यक और प्रयोजनीय है ।

पृथ्वीके प्रत्येक कोनेमें, हमें हवा चारों ओर से घेरे रहती है । जन्मसे मरण पर्यन्त, हम हवामें साँस लेते हैं । हम हवाके बिना जी नहीं सकते—हम प्रति दिन दो तीन बार भोजन करते और कई बार पानी पीते हैं, परन्तु हम प्रति मिटनमें १५ से २० बार तक हवा साँस लेते हैं; अर्थात् प्रति घंटेकी औसत १२०० बार पड़ती है । आरोग्य और रुग्णावस्थामें, हमारे शरीर को साफ़ और अच्छी हवाकी जरूरत होती है । डाक्टर हटेनर, आदि उपवास करने वाले सज्जनोंका कथन है कि, मनुष्य बिना अन्न के कई सप्ताह तक जी सकता है, यदि कुछ दिन तक जल न पीवे तो वह नहीं मरता । परन्तु यदि उसे कुछ मिनट तक हवा न मिले तो, वह अवश्य ही मर जायगा ।

हम लोग हवाके समुद्रमें मछलीकी तरह रहते हैं । वास्तव

में मनुष्य हवाका प्राणी है। मुख, नाक और त्वचाका ऊपरी भाग हमारे शरीरके वाह्य-अंग हैं, जिनमेंसे होकर हवा शरीरमें प्रवेश करती है, और शरीरसे बाहर निकलती है। फेफड़े श्वास-क्रिया करने वाले भीतरी-यन्त्र हैं। श्वास द्वारा जो हवा शरीरमें प्रवेश करती है, उसकी ही सहायतासे फेफड़े शरीरके भीतर रक्त-शोधनका काम करते हैं। इस-लिए वायु, जिसमें हम साँस लेते हैं, जितना ही अधिक शुद्ध और निर्दोष होता है, उतना ही अधिक सुचारुतासे रक्तका संशोधन होता है, और रक्तमें प्रविष्ट हुए ज़हरीले अंश बाहर निकाल दिये जाते हैं।

वायु-मंडलमें प्रधान गैसें दो हैं। ओषजन और नत्रजन। ये दोनों गैसें पृथक् पृथक् रहने पर घातक हैं। किन्तु उनका संमिश्रण जो वायुमें पाया जाता है, प्राण-पोषक है। वायुमें अर्जन, ओजोन, एमोनिया, कार्बन, अम्लगैस माफ़ धूल आदिका अंश भी पाया जाता है। साधारण वायुके सौ भागोंमें ओष-जनका २०·८१ भाग, नत्रजनका ७९·१५ भाग और कार्बन अम्लगैसका ४ भाग पाया जाता है।

ओषजन—वायुका मुख्य-मौलिक ओषजन ही हमारे जीवनका आधार है। वह श्वास-द्वारा फेफड़ोंमें पहुँचता है, और वहाँसे रक्तके द्वारा शरीरके समग्र मांसतन्तुओं और सेलों में जा पहुँचता है। आगका जलना तथा अन्य रासायनिक क्रियायें भी ओषजन पर निर्भर हैं।

वायुमें ओषजनका मान घटता बढ़ता रहता है। शहरोंके वायुमें ओषजनका मान कम रहता है। जिस वायुमें ओषजनका मान ११-१२ प्रति सैकड़ा ही होता है, वह शरीरके लिये बहुत हानिकारक होता है। जिस वायुमें ओषजनका मान कमसे कम ७·२ होता है, उसे साँस लेकर मनुष्य जी नहीं सकता।

वायुमें ओषजनका जैसा मान रहता है, वैसा ही हमारे शरीरमें कार्यकारिणी-शक्तिका संचार होता है। वायुमें ओषजनका जो मान रहता है; उसमें अनेक कारणोंसे अन्तर पड़ जाता है। उनमेंसे कुछ कारणोंका हम यहाँपर वर्णन करेंगेः—

जिस समय वायुमें गरमी पहुँचती है, उस समय वह हल्का होकर फैल जाता और ऊपर उठता है। सरदीके कारण भारी हो जाता और नीचे उतरता है। वायुमें जितनी अधिक गरमी पहुँचती है, उतनी ही अधिक उसके पटल (Volume) में आक्सिजनका मान कम हो जाता है। सरदी पहुँचनेसे वायुके पटलमें ओषजनका मान अधिक हो जाता है। यही कारण है, कि ग्रीष्मऋतुकी अपेक्षा शिशिर-ऋतुमें, चूल्हेमें आग अधिक तेजीसे जलती है। यही कारण है कि, प्रातःकालमें ओस गिरते समय, थोड़ी दूर भी टहल आनेसे इन्द्रियोंमें चेतनता आ जाती है, और खासी भूख मालूम होती है।

कम ऊँची और अत्यन्त ऊँची जगहमें, वायुके भार और ओषजनके मान में अन्तर रहता है। पहाड़की चोटीपर घाटीकी अपेक्षा वायु बहुत हल्की होती है। क्योंकि वहाँ वायु-

मण्डलका दबाव कम रहता है। वहाँ वायुमें ओषजनका मान भी बहुत कम रहता है। वायुके भारका अन्तर भार-मापक यन्त्र (Barametere) से मालूम होता है। जब वायु-मापक-यन्त्रका पारा ऊपर चढ़ जाता है, तब वायुका भार अधिक माना जाता है। जिस समय पारा नीचे उतरता है, उस समय वायुमें हल्कापन सिद्ध होता है। और उसमें ओषजनका मान बहुत कम रहता है। इससे यह विदित होता है कि, वायु-मापक-यन्त्रका पारा जितना ही अधिक नीचे उतरेगा, उतनी ही साँस लेनेमें कठिनता पड़ेगी, क्योंकि वायुमें ओष-जनका मान उतना ही अधिक घट जायगा।

उच्च-भूमिकी वायुमें ओषजनका मान अधिक रहता है। ऐसी जगहमें रहनेसे शरीरको प्राणपोषक-वायु अधिक प्राप्त होता है। जिन लोगोंके फुफ्फुसोंकी कार्यकारिणी शक्ति मन्द पड़ जाती है, उनके लिये ऐसी जगहमें कुछ दिनोंतक रहना बहुत उपयोगी है। ऐसी जगहमें रहनेसे फेफड़ोंकी कार्यका-रिणी-शक्ति बढ़ जाती है।

नत्रजन—साधारण वायुमें नत्रजनका अंश ७९.१५ पाया जाता है। नत्रजनका शरीरपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। निरा ओषजन शरीरके लिये तीव्र होता है, इसलिये प्रकृतिने आक्सजनके साथ नाइट्रोजनका संयोग कर दिया है, जिससे आक्सजनकी शक्ति क्षीण हो जाती है, और यह कामके लिये परमोपयोगी हो जाती है।

अर्गन—अर्गनका आविष्कार अभी हालमें ही, सन् १८९४ में, हुआ है। वायुमें ०·७५ से १ सैकड़ा तक उसका मान पाया जाता है। जहाँतक मालूम है, शरीरपर अर्गनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

ओजोन—ओजोन समुद्र और जङ्गलोंके पास हवामें पाया जाता है। बड़े बड़े क़स्बों और नगरोंके वायुमें, प्रायः उसका अभाव होता है। साधारण वायुमें इसका बहुत ही न्यून अंश पाया जाता है। ओजोन शरीरके लिये उपयोगी नहीं। उससे शरीरको हानि पहुँचती है।

एमोनिया—एमोनिया प्राणिवर्गोंके सड़नेसे पैदा होता है। एमोनियाका कुछ न कुछ अंश वायुमें पाया ही जाता है। लीद, गोबरके ढेरोंसे एमोनिया बहुत अधिक पैदा होता है। वायुमें एमोनियाका अधिक अंश होना शरीरके लिये हितकर नहीं। एमोनियासे बचनेके लिए, घर और घरके आस पासकी सफ़ाईपर ध्यान रखना चाहिए। मकान या मकानके आसपास कोई चीज़ ऐसी न फेंकी जानी चाहिए, जो सड़ सकती हो और न लीद गोबरके ढेर लगने देना चाहिये।

साधारणतः अमोनिया-युत हवा बड़े बड़े नगरोंके मैले कुचैले रास्तोंमें, देहातमें खादके ढेरके पास होती है। खेतीके कामोंमें गोबर बहुमूल्य है, और यही कारण है कि किसान उसे अपने घरों केपास ही रखते हैं। किसान उसके कुटुम्बी और उसके पशु आदि जिस कुएका पानी पीते हैं, उसीके पास खादका ढेर पड़ा

होता है। परन्तु उससे उसे कुछ तकलीफ़ नहीं होती। उसे यह बात स्वप्नमें भी मालूम नहीं होती कि, इससे कितना नुक़सान होता है। अब भी दुर्भाग्य-वश यह बात बहुत ही कम लोग जानते हैं कि, इन खादोंसे शरीरको कितनी अधिक हानि होती है। किसान भाइयो, गोबर आदि सड़नेवाले पदार्थों को घरसे दूर रखो और तन्दुरुस्त बनो।

कार्बन अम्ल-गैस—पदार्थोंके जलनेसे कार्बन गैसकी उत्पत्ति होती है। अत्यन्त स्वच्छ वायुके २५०० भागोंमें भी एक भाग इस गैसका पाया जाता है। साधारण वायुमें कारबन-अम्ल-गैसका मान बहुत ही कम पाया जाता है। गावोंकी अपेक्षा शहरोंके वायुमें कार्बन अम्ल-गैसका अंश अधिक पाया जाता है। कारण, शहरोंमें कल कारखानोंके कारण, कार्बन अम्ल-गैस बहुत अधिक बनता है। वायुमें कार्बन अम्ल-गैसकी अधिकता शरीर-के लिये घातक है। वायुमें कार्बन अम्ल-गैसका अँश जितना ही न्यून हो शरीरके लिए उतना ही अच्छा। हमारे शरीरमें रासाय-निक क्रियाके होते रहनेसे, कार्बन अम्ल-गैस बनती और प्रश्वाससे द्वारा निकलती रहती है। मनुष्य जितना ही अधिक शुद्ध-वायु साँस लेता है, उतना ही अधिक कार्बन अम्ल-गैस शरीरसे निकल जाता है, जो प्राकृतिक नियमोंके अनुसार निकलना ही चाहिए। अशुद्ध-वायु साँस लेनेसे शरीरसे कार्बन अम्ल-गैसका अंश उतना नहीं निकलता, बल्कि बढ़ता जाता है। वायुमें कार्बन अम्लगैसका बहुत अधिक अंश बढ़ जानेपर, अर्थात् वायुमें कार्बन अम्ल-गैसका

अंश ३० सैकड़ा हो जानेपर मनुष्य बेहोश हो जाता है। वायुमें कार्बन अम्ल-गैसका अंश इससे भी अधिक बढ़ जानेपर मनुष्य मर जाता है।

धूल—धूल कुछ दशाओंमें स्वास्थ्यके लिए हानिकारक होती है। वायुमें धूलका अंश अवश्य ही मिला रहता है। धूल वायुका एक मुख्य यौगिक है। धूल, वायुमें मिले जलीय-अंशको बादल कोहरा आदिमें परिवर्त्तित कर तापक्रमको ठीक रखता है। एस्टकिनका कथन है—"यदि वायुमें धूलका अंश न हो, तो घासकी प्रत्येक पत्ती और वृक्षकी प्रत्येक शाखासे, नम-हवाका स्पर्श होते ही जल टपकने लगे, हमारे कपड़े गीले हो जायँ, और उनसे पानी ही पानी टपकने लगे। छतरियाँ बेकाम हो जायँ, इतना ही नहीं है, बल्कि हमारे मकानके भीतरी हिस्से गीले हो जायँ, कमरेकी दीवारें और वस्तुएँ गीली हो जायँ।" धूलके बिना वृष्टि नहीं हो सकती, बादल नहीं बन सकते, कुहरा नहीं पड़ सकता। क्योंकि भाफ धूलके कणोंपर ही घनी-भूत हो बादलमें परिणति प्राप्त करती है, या कुहराका रूप धारण करती है।

धूल दो प्रकारकी पाई जाती है। एक ऐन्द्रियिक (Organic) और दूसरी निरैन्द्रियिक (Inorganic) ऐन्द्रियिक-धूल वायु-मण्डलके निम्न भागमें, और निरैन्द्रियिक धूल सर्वत्र पाई जाती है।

आँधीसे मिट्टीके टुकड़े, बहुत बारीक टूटकर धूलका रूप

धारण करते हैं। कार्बन और धूँएसे भी कुछ धूल बनती है। समुद्रके फेनसे बने नमकके कुछ बारीक टुकड़े हवामें जा पहुँ-चते हैं, और धूलका परिमाण बढ़ाते हैं। ज्वाला-मुखियोंके द्वारा बहुत सी धूल हवामें मिला करती है। यह सब निरै-न्द्रियिक धूल है।

प्राणिवर्गों और पौधोंके सूखे बारीक, अंश जो हवामें जा मिलते हैं, वही ऐन्द्रियिक धूल है। यथा, बीज, प्राणियोंके शरीरके बारीक खण्ड; वृक्ष, या पौधोंकी डाल, पत्तियोंके बारीक सूखे टुकड़े, कीटाणु, बालके टुकड़े, पशुके टुकड़े, रुईके टुकड़े इत्यादि। नगरोंमें गाड़ियों, मोटरों आदिके निरन्तर दौड़ते रहनेसे, धूल बहुत अधिक बनती और उड़ती रहती है। धूलमें यदि रोगो-त्पादक कीटाणु नहीं होते, तो शरीरको उससे कोई विशेष हानि नहीं पहुँचती। किन्तु धूल अनेक संक्रामक-रोगोंका कारण बनती है। निरैन्द्रियिक धूल, ऐन्द्रियिक-धूलकी अपेक्षा अधिक हानिकारक होती है। घरके भीतरकी धूल बाहरकी धूलसे अधिक हानि पहुँचाती है। सड़कोंकी धूल सबसे अधिक हानिकारक होती है। सड़ककी धूलमें कोयलेके टुकड़े, मिट्टीके टुकड़े, घरके कूड़ा करकटका अंश, पशुओंका मल-मूत्र, थूक आदि पाया जाता है। इससे सड़कोंकी धूल अनेक संक्रामक रोगोंके फैलानेका कारण बनती है।

कीटाणु—वायुमें धूलके द्वारा कीटाणु भी पहुँच जाते हैं। कितने ही कीटाणु धूलके कणोंसे ही चिपके रहते हैं।

वायुमें सवत्र कीटाणु नहीं पाए जाते। जहाँ बस्ती नहीं होती, वहाँ कीटाणु नहीं होते। नीचेकी हवामें ऊपरकी हवाकी अपेक्षा अधिक कीटाणु पाए जाते हैं।

कीटाणुओंकी वृद्धि, वायुमें नहीं होती। कितने ही कीटाणु धूपके कारण मर जाते हैं। वायुमें अधिकतर हानि-कारक कीटाणु नहीं पाये जाते। वायुमें मिट्टीके कीटाणु अधिकतर मिले होते हैं। तथापि कुछ भयानक कीटाणु भी, शहरोंके वायुमें पाये जाते हैं, जिनकी उत्पत्ति प्राणिज-पदार्थोंसे होती है।

शहरोंकी अपेक्षा, मैदानोंकी वायुमें कम कीटाणु पाये जाते हैं। ऊँचे पहाड़ों, रेगिस्तानों और समुद्र परके वायुमें कीटाणुओंकी संख्या बहुत ही कम होती है। बाहरकी वायुमें उतने कीटाणु नहीं होते, जितने घरके भीतरके वायुमें। शान्त-वायुमें उतने कीटाणु नहीं होते, जितने आँधी में।

ऐसे कमरोंके वायुमें, जिनमें शुद्ध ताजी हवा बहुत कम पहुँचती है, और जो प्रायः साफ़ नहीं किए जाते, कीटाणुकी संख्या बहुत ही अधिक होती है। और जब ऐसे कमरोंमें बहुतसे मनुष्य रहते या आते जाते हैं, तो कीटाणुकी संख्या अपार हो जाती है। नम-हवाकी अपेक्षा खुश्क-हवामें अधिक कीटाणु पाये जाते हैं। वर्षाके बादकी अपेक्षा पहलेके वायुमें अधिक कीटाणु पाये जाते हैं।

मिक्वेलने अनेक स्थानके वायुकी जाँच की है। पेरिसके वायुमें प्रत्येक घनफुटमें उनको १५० कीटाणु मिले, किन्तु

वर्षाके बाद छः ही मिले। पानथियनकी चोटी पर १॥ पाए गये। सड़कोंकी वायुमें प्रति घनफुटमें १२ के लगभग कीटाणु पाये गये; रासायनिक प्रयोग-शालाकी एक ग्राम धूलमें ७५००० और घरकी एक ग्राम-धूलमें २१००००० कीटाणु पाये गए।

व्हिपिलको ने अपने प्रयोगमें सड़ककी सतहके वायुमें, प्रति घन फुटमें १३३० कीटाणु पाये गये, और जानहैनका की इमारतके दसवें मंज़िलके वायुमें ३३० कीटाणु पाये।

पहिले यह ख़याल किया जाता था कि, वायु अनेक संक्रामक रोगोंको फैलाता है, पर यह खयाल क्रमशः उठता जा रहा है। चेचक और (Measles) केवल इन दो संक्रामक रोगोंके फैलानेका कारण वायु होता है। ख़याल किया जाता है कि, ये दो रोग श्वाससे निकले हुए वायुके कारण फैलते हैं, परन्तु इसका भी कोई प्रमाण नहीं।

क्षयी, डिपथीरिया, स्कारलेट—फीवर, आदि रोगोंके फैलानेका कारण वायु नहीं, रोगीका थूक या नाकका पानी होता है। थूक या नाकके पानीका संयोग हवाके साथ होता है। संयोग होनेपर उसके कीटाणु वायुमें मिल जाते हैं। वायुमें मिलकर पासके मनुष्योंके शरीरमें श्वास द्वारा प्रविष्ट होकर, रोगका बीजारोपण करते हैं।

गरम या नम हवा—साधारणतः यह कहा जा सकता है कि, नमहवा शिथिलता और निर्बलता लाती है, किन्तु खुश्कहवा पौष्टिक और उत्तेजक है। इसी प्रकार

शीतल-वायु पौष्टिक है, और उष्ण-वायु शिथिलता पैदा करता है। शरीरमें भोजनकी रासायनिक रूपान्तर-क्रिया उष्ण-वायुमें शिथिल और शीतल-वायुमें तीव्र हो जाती है।

शुद्ध वायु—शुद्ध-वायु जीवनके लिये अत्यावश्यक है। स्वस्थ-वायु कैसे प्राप्त हो सकता है; इस विषयका ज्ञान प्रत्येक मनुष्यको होना चाहिए।

अब यह क्रमशः प्रमाणित होता जा रहा है, और लोगोंका विश्वास भी जमता जा रहा है कि, दूषित-हवाके भयंकर परिणामोंका कारण कार्बन अम्लगैसकी वृद्धि या ओषजनकी न्यूनता नहीं है, साँसमेंसे छोड़ी हुई हवा भी नहीं है। प्राकृतिक परिवर्त्तन होना ही वायुके बिगड़नेका कारण होता है। तापक्रम या खुश्की बढ़ जाने, और घरके भीतर वायुमें गति न होनेसे ही वायु बिगड़ जाता है।

वायुकी गति—वायुका जोरोंसे बहते रहना उसकी शुद्धताका प्रधान साधन है। इससे ताज़ी हवा साँस लेनेको मिलती, और दूषित हवा बह जाती है। इससे शरीरका तापक्रम भी ठीक रहता है। शान्त-वायु दूषित रहती है, और दूषित वायु साँस द्वारा शरीरके भीतर पहुँचकर हानि पहुँचाती है। पहाड़ों और समुद्रके आस पास, हवा जोरसे चलती रहती है। और इसलिये ऐसी जगहोंमें रहना स्वास्थ्य प्रद होता है।

जब वायु बहता रहता है, तब सरदीकी अपेक्षा गरमी अधिक बरदास्त की जा सकती है। क्योंकि उस समय भाफ

निकलती रहती है, किन्तु जब हवा स्थिर रहती है तब गरमीकी अपेक्षा ठण्डी अधिक बरदाश्त की जा सकती है।

दूषित-वायु बाहर निकलने तथा शुद्धवायु भीतर पहुँचने के लिये, घरमें खिड़कियाँ होनी चाहियें। घर बनवाते समय इस बातका पूरा ध्यान रखना चाहिये। जिस घरमें खिड़कियाँ नहीं, वह घर नहीं, मौतका पिंजरा है। प्रत्येक कमरेमें कमसे कम दो खिड़कियाँ होनी चाहिएँ। जिससे एकसे दूषित-वायु बाहर निकल सके, और दूसरीसे शुद्ध-वायु भीतर पहुँच सके। बैठकों, पठनागारों, दफतरों और विश्राम-गृहोंमें मनुष्यको प्रायः कितने ही घंटे बिताने पड़ते हैं। इन स्थानोंमें शुद्ध-वायुके प्रवेशके लिये काफी रास्ते होने चाहिएँ। दूषित-वायु साँस लेनेसे मानसिक-शक्ति क्षीण हो जाती, शरीर सुस्त हो जाता है, कार्य करनेको जी नहीं चाहता, और अच्छी खुर्राटेकी नींद नहीं आती। शुद्ध वायु न तो दिखाई देता है, और न उसमें किसी तरहकी गन्ध ही होती है। घरमें शुद्ध वायुके प्रवेशके लिए जहाँ-तक हो सके, खिड़कियाँ खुली रखनी चाहियें। रहनेके कमरोंकी हवाके सम्बन्धमें प्रोफेसर रेके लिखते हैं :—

"कितने ही लोगोंका ख़याल है, कि सवेरे एकाध घंटेके लिये खिड़कियाँ खुली रखनेसे, कमरेमें काफी हवाका प्रवेश हो जाता है। परन्तु यह एक गिलास भर ख़राब पानीमें, उसे अच्छा बनानेके लिये, एक चम्मच भर साफ़ जल डालनेके समान है। पानी दिखाई देता है, इससे हम उसके भले बुरेकी बात जान

लेते हैं। परन्तु हवा अदृश्य है, और युवकों और बच्चोंकी घ्राणेन्द्रियाँ, अच्छी या बुरी हवाकी पहिचान करनेकी आदी नहीं बनाई गई हैं। यही कारण है कि, लोग ख़राब हवाकी पहिचान नहीं कर सकते। इससे वे उसकी कुछ भी परवाह नहीं करते। आरोग्य और बल तथा उत्तम पाचन-शक्ति चाहने वाले मनुष्य को, अपने घरमें ताज़ी और शुद्ध-हवा आने देना चाहिए। ताज़ी हवा साँस लेनेके लिए; खुली हवामें, खासकर जंगलमें जाना चाहिए। अपने सोने या बैठने के कमरेमें हवाको प्रवेश करनेकी ऐसी व्यवस्था कर देना चाहिए, ताकि बाहरसे लौट आने पर दूषित हवा साँसमें न लेनी पड़े।"

पाठको, मैं आशा करता हूँ, कि तुम एक आरोग्य-शास्त्र-वेत्ता और प्रसिद्ध प्रोफेसरकी उक्त बातोंको पढ़कर, भविष्यत्में अपने कमरोंमें हवाका अधिक स्वतंत्रतासे संचार होने दोगे। थोड़े समयके लिए एक खिड़की या दरवाजा खोल देना ही काफी नहीं है। कमरेके प्रत्येक भागकी दोनों खिड़कियाँ खोल देना चाहिए। यदि कमरेमें एक ही खिड़की हो, तो उसके सामनेका दरवाजा भी खोल देना चाहिए।

नगरोंके अच्छे हिस्सोंमें, अब लोग खिड़कियाँ खुली रखनेके फायदोंको जानने लगे हैं। परन्तु अब तक ग़रीब और देहाती लोग इन बातोंसे बिलकुल अनभिज्ञ हैं। मैंने अपने प्रवासोंमें देखा है कि, देहातियोंके घरोंमें खिड़कियाँ बहुत ही कम रखी जाती हैं। यदि वे अपना अधिकांश समय खुली हवामें न

बितावें, तो वे कदापि ज्यादा समय तक जिन्दे न रह सकें।

प्रकृतिने मनुष्यको हवाका प्राणी बनाया है, न कि घरमें रहने वाला प्राणी। मनुष्यको चाहिए कि, अपना मकान रातको सोनेके लिए या प्रचंड और तूफानी मौसमसे रक्षा पानेके लिए काममें लावे। निदाघ, वसंत और शरत्कालमें मौसिम चाहे कैसा ही क्यों न हो, हमें तमाम दिन खुली हवामें रहना चाहिए। अधिकांश मनुष्योंको दूकानों, कारखानों आदि में अपने उदर-पोषणार्थ अधिक परिश्रम करना पड़ता है, जिससे उन्हें ताज़ी हवामें रहनेका आवकाश नहीं मिलता। अतः इन अधिकांश मनुष्योंके रहने और श्रम करनेके लिए, आरोग्य-शास्त्रके अनुसार दूकानें, पुतलीघर, कारखाने और मकान बनवाये जाने चाहिएँ।

हमारे स्वास्थ्यके लिए हमारे घर सूखे होने चाहिएँ। और इसलिए घर ऊँची जगहमें कँकड़ीली और ठोस जमीन पर बनवाने चाहियें। ज़मीनकी और फ़र्शके नीचे, सीमेंटके दो तह बीचमें हवाके लिए जगह रख कर दिला देनी चाहिए। यदि घर गीले होंगे, तो उनमेंकी हवामें भी नमी रहेगी जो कि भाँति भाँतिके रोग उत्पन्न करती है। त्वचाकी भाफको कम करके गीली हवा शरीरकी रूपान्तर-क्रियाको रोकती है, जिससे रक्तकी न्यूनता अशक्तता आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। यदि घर गीला और ठण्डा हुआ तो फ़िर रोगोंका पूछना ही क्या ?

अतः लोगोंको चाहिये कि, ऐसे घरोंमें न रहें। उत्तर मुखवाले घर असकर गीले नहीं तो ठण्डे अवश्य होते हैं।

घरोंमें प्रकाश भी अवश्य खूब होना चाहिये। अतः घर भाड़ेसे लेते समय इस बातका खूब ख़याल रखो कि, उसमें काफी प्रकाश और धूप आनेका मार्ग हो, सील न हो। जिस घरमें सूर्यका प्रकाश नहीं पहुँचता, वहीं वैद्यराज पधारते हैं। जिन कमरोंमें धूप न आती हो, उनके दरवाजे खिड़कियाँ खोल दो, ताकि गरम हवा उसमें प्रवेश कर सके।

घर लम्बा चौड़ा होना चाहिए। छोटे घरोंको साफ़ और व्यवस्थित रखना बहुत मुश्किल है, और छोटे कमरे शीघ्र ही खराब हवासे भर जाते हैं। सोने और काम करनेके लिए सब से बड़े कमरे पसंद किये जाने चाहिएँ, क्योंकि उनमें ज्यादा वक्त तक रहना पड़ता है। छोटे कमरोंकी हवा जिन्हें बहुतसे आदमी पसंद करते हैं, उसी तरह खराब हो जाती है जिस तरह गोबरके ढेरके पास वाले कमरेकी। इन कमरोंमें रहने वाले लोग बीमारीसे कभी नहीं बच सकते।

बंद कमरोंमें कचरा भी एक शत्रु है, जिसका सामना करना पड़ता है। कमरेके फर्शको, बुहारने और धोने तथा कुर्सी आदिको पोंछनेसे ही कचरा बाहर नहीं निकल जाता, बल्कि दीवारोंको भी साफ़ करना चाहिए।

ग़रीब लोग अक्सर वर्षा-ऋतुमें, रहनेके कमरेमें ही कपड़े सुखाते हैं। ग़रीबीके कारण उन्हें ऐसा करना पड़ता है।

परन्तु यदि गृह-स्वामी पान-तंबाकू आदिमें, और गृह-स्वामिनी नए वस्त्र और सुन्दरता बढ़ानेके साज सामान खरीदनेमें कम खर्च करें, तो वे एक वर्षमें कुछ रक़म बचा सकते हैं। इस रक़मसे वे एक अच्छा घर किराएसे ले सकते हैं, जिससे उन्हें वर्षाऋतुमें सोने और रहनेके कमरेमें कपड़े न सुखाना पड़े। निरोगी घरोंमें रहना उतना ही आवश्यक है, जितना कि आरोग्य-प्रद भोजन करना। परन्तु लोग अपना द्रव्य डाक्टरों और वैद्योंको देनेमें, पान तंबाकू या शराब और फालतू कपड़े खरीदनेमें, खर्च करना ज्यादा पसन्द करते हैं।

मनुष्यको, अपनी ग़रीबीके लिये कभी लज्जित न होना चाहिये। क्योंकि यह शर्म निरर्थक है। बहुतसे लोग कीमती पोशाक पहन कर साथियोंको अपना बड़प्पन दिखाते हैं। इस तरह अपनी दशा छुपानेका यत्न करनेसे लाभ ही क्या? जब कि, मकानके प्रत्येक कोनोंमें दरिद्रता स्पष्टतया दृग्गोचर होती है।

आरोग्यताका संतोषसे बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है। आडंबर, निरर्थक व्ययसे कुछ भी लाभ नहीं होता। रिकामका कहना है "कि वह मनुष्य जिसे अपने सुन्दर कपड़ोंका अभिमान है, यह दिखाता है कि उसे स्वतः की अपेक्षा कपड़ोंका ज्यादा गर्व है। अपने आपको वह बहुत तुच्छ समझता है।" मनुष्यको इस बातका गर्व होना चाहिये कि, उसका घर हवादार स्वास्थ्य-वर्द्धक और विस्तीर्ण है, और उसने अच्छे घरका भाड़ा

सुकामेके लिये, सुन्दर कपड़े आदि निरर्थक वस्तुओंका ख़रीदना छोड़ दिया है।

कल्पना करो कि, तुम प्रतिमास दो तीन रुपये शराब, तंबाकू, पान आदिमें खर्च करते हो—यह रक़म एक वर्षमें करीब २५-३० रुपये तक पहुँच जायगी। इसे बचाओ। इससे शायद तुम अधिक विस्तीर्ण, प्रकाश-युक्त और हवादार घर भाड़ेसे ले सकते हो। जिसमें तुम्हारा कुटुम्ब आनन्दसे रह सकता है।

क्या ऊँच, क्या नीच, सबको आरोग्य-नाशक और अप्राकृतिक शौकको तिलाँजलि देना चाहिये। ऐसा करनेसे प्राकृतिक और आरोग्य-पूर्ण जिन्दगी बितानेके लिये आवश्यक शक्ति, समय और द्रव्यकी बचत हो जाती है। हर एक आदमीको अपनी शक्ति भर अस्वभाविक स्थितिको, जो आजकल चारों ओर फैल रही है, हटानेके लिये यत्न करना चाहिये। शहरोंमें मज़दूरोंके मकानोंको भी सुधारनेकी व्यवस्था की जानी चाहिये।

लकड़ीके बने हुए सामानको बाहर और भीतरसे वारनिश कर लेना चाहिये, ताकि खुरखुरी लकड़ी नज़र न आवे। प्रोफेसर जागर साहबके मतानुसार खुरखुरी लकड़ी मौसमके बदलने पर दुर्गन्ध और नमीको ज्यादा सोखती है, और दुर्गन्ध मारने लगती है। पुस्तकें और काग़ज़ जो कि बनस्पतिसे बनते हैं बदबू सोख कर रख छोड़ते हैं, और फिर बदबू मारने लगते हैं। अतः उन्हें अलमारियोंमें रखना बहुत ही अच्छा है।

बड़े बड़े शहरोंमें कल-कारखानोंके चलने और, अन्य अनेक कारणोंसे हवा ख़राब हो जाती है, जिससे तन्दुरुस्तीको बड़ा धक्का पहुँचता है। शहरोंमें ज्यादा रुपये खर्च करने पर भी, अच्छी हवा और प्रकाश नहीं मिल सकता। देहातमें ताज़ी हवा बहुत अच्छी तरह मिल सकती है। इसलिये ग्राम्य-जीवन स्वास्थ्य-वर्द्धक और दीर्घायुका देनेवाला होता है।

चौथा अध्याय.

प्रकाश।



र्य, प्रकाशका सबसे बड़ा गोला है। सूर्यका सारे संसारको प्रकाश प्राप्त होता है। यदि सूर्यका प्रकाश न होता, तो कोई प्राणी जीवित न रहता, न पौधे ऊग सकते, और न वर्षा ही होती। वसन्त ऋतुमें तुम प्रायः सभी वृक्षोंको फूले-फले और नये पल्लवोंसे विभूषित देखते हो। उस समय उनकी शोभा कैसी मनोहारिणी होती है, किन्तु खेद है इस ऋतुमें भी वह पौधा जिसे प्रकाश प्राप्त नहीं होता, अच्छी खाद और पानी पाने पर भी नहीं बढ़ता, विकसित नहीं होता; उलटा मुरझाता जाता है। पेड़के नीचेकी खेतीकी भी यही दशा होती है।

प्रकाशके सहारे ही हम हाथ-पाँव आदि अपने अंगोंका उपयोग कर सकते हैं। प्रकाशमें ही हमारी आँखें काम देती हैं, और हम इधर उधरकी चीजें देखते हैं। यदि प्रकाश न हो, तो हम पाँवपर पाँव रक्खे बैठे ही रह जायँ। यदि उठकर कहीं जानेकी कोशिश भी करें, तो अन्य पदार्थोंसे टकराकर अङ्ग भङ्ग हो जायँ।

सूर्यसे पृथिवीको उष्णता भी प्राप्त होती है। यदि पृथिवी-पर सूर्यका प्रकाश पड़ना बन्द हो जाय, तो पृथिवीकी सब उष्णता चली जाय, और सब प्राणी तथा पौधे नष्ट हो जायँ। जिस तरह हम हवाके बिना नहीं जी सकते, उसी तरह हम सूर्य-प्रकाशके बिना भी नहीं जी सकते। सूर्य, प्राणियों और वनस्पति-वर्गको बल प्रदान करता है।

जिस दिन आकाश मेघाछन्न होता है, उस दिन प्रकृति उदास सी दिखाई देती है। किन्तु घन-पलटके दूर होते ही, और पृथिवीपर सूर्यका प्रकाश पड़ते ही चारों ओर शोभा और प्रस-न्नता नज़र आती है। मनुष्यकी शारीरिक और मानसिक दशा सर्वव्यापी सूर्यपर ही निर्भर रहती है। प्रकाश, ताजी शुद्ध-हवा, शुद्ध पानी, उपयुक्त भोजन, योग्य व्यायाम और विश्रामके साथ मिलकर अच्छा गुण दिखाता है।

वायु-स्नान और प्रकाश-स्नानके आविष्कारक प्रसिद्ध प्राकृ-तिक-चिकित्सक रिक्लीका कथन है—"प्राकृतिक चिकित्साके लिए पानी अच्छा है, वायु उससे भी अच्छा है, और प्रकाश सब

से श्रेष्ठ है।" आपका यह भी कथन है कि "जल-चिकित्साकी अधिकता रोकनी चाहिये। मनुष्य जलचर नहीं है, बल्कि हवा और प्रकाशमें रहनेवाला प्राणी है। ये ही दो बीमारोंको आराम करने, और मनुष्यकी रक्षा और बाढ़के मुख्य साधन हैं।"

पाठको! शायद अब आप समझ गये होंगे कि सूर्य, जो पृथिवीको उष्णता प्रदान करता है, हमारी देहपर जिसका लाभ-दायक प्रभाव पड़ता है, मनुष्यको नीरोग बनानेकी शक्ति भी रखता है। ज़रा उन ग़रीब नगरवासियोंकी भी दशा देखो जो नगरोंके तंग, घृणा पैदा करनेवाले, टेढ़े-मेढ़े, गन्दे या गीले रास्तोंके किनारे बने हुए, टूटे-फूटे, सीलदार मकानों, कारखानों या दूकानोंमें रहते या काम करते हैं, जिनकी हवा हानिकारक गैसों और भाफसे पूर्ण रहती है। ऐसे स्थानोंमें रहने या काम करनेवाले मनुष्योंके स्वास्थ्यपर दृष्टि डालिये। आप देखेंगे कि, उनका चेहरा पीला और निस्तेज है; आँखोंके नीचे गड्ढे पड़ गये हैं, होंठ लटक आये हैं, पाँव पतले और अशक्त हो गये हैं। इत्यादि। शुद्ध-वायु और सूर्यके प्रकाशका अभाव ही इस दशाका मुख्य कारण है। ऐसे मकानोंको मकान नहीं, मौतके पींजरे कहने चाहिये।

किसी ऊँचे पर्वत या स्थानपर खड़े होकर क्या तुमने उस नगरको देखा है, जिसमें कारखानोंका बाहुल्य है, और जो धुआँके बादलोंसे निष्प्रभ दिखाई देता है? क्या तुमने कभी ग़रीब कारीगरोंके किरायेके मकानोंको देखा है; वहाँ चिन्ता और

दुःख, ईंटोंकी दीवारोंकी आड़में छुपे रहते हैं? यदि देखा है, तो यह अवश्य जानते होगे कि, धनवानोंकी अपेक्षा परिश्रमी और ग़रीब लोगोंमें रोगोंकी प्रबलता क्यों है? धनवान् लोग सूखे हवादार और ऊँचे स्थानोंपर मकान बनवा सकते हैं, किन्तु ग़रीब लोग न तो ऐसी जगहोंमें अपनी परिस्थितिके कारण मकान ही बनवा सकते हैं, और न ऐसी जगहोंपर बने हुए मकानोंको किरायेपर ही ले सकते हैं। अधिकाँश गरीब श्रमजीवी शुद्ध-वायु और सूर्यके प्रकाशसे वंचित रहते हैं। जीवनके लिए उपयुक्त भोजनकी जैसी जरूरत है, वैसे ही शुद्ध-वायु और प्रकाशकी भी जरूरत है। दोनों वक्त भोजन करने, और गन्दे सीलदार मकानमें रहनेकी अपेक्षा दिनमें एक बार भोजन करना, और ऐसे मकानमें रहना, जिसमें सूर्यका प्रकाश पहुँचता हो, और शुद्ध ताजी हवा साँस लेनेको मिलती हो, स्वास्थ्यके लिये उत्तम है। किरायेकी कमीके ख़यालसे गन्दे सीलदार मकानोंमें रह कर, अपनी और बाल बच्चोंकी हत्या नहीं करनी चाहिये।

नगरोंमें तुमको ऐसे भी आलीशान मकान मिलेंगे, जिनमें सूर्यका प्रकाश मुश्किलसे पहुँचता है। ऐसे घरोंमें रहने वाले मनुष्य, मुख्यतः पर्दा-नशीन औरतें, सदा दुबली-पतली, पीली और रोगिणी देखी जाती हैं।

घरमें सीलसे अनेक प्रकारके रोग पैदा होते हैं। जिन घरोंमें सूर्यका प्रकाश पड़ता है, उन घरोंमें सील नहीं रहता। सूर्यके प्रकाशसे विविध प्रकारके रोगोंके छोटे छोटे, और काली

आँखोंसे न दिखाई देने वाले कीटाणु मर जाते हैं।

यदि अभाग्य-वश सीलादार मकानमें रहना ही पड़े, तो विश्रामके कुछ घंटे और रातका थोड़ासा समय ऐसे आरोग्य-प्रद स्थानमें बिताना चाहिए, जहाँ सूर्यका प्रकाश पड़ता हो, और शुद्ध-वायु साँस लेनेको मिलती हो।

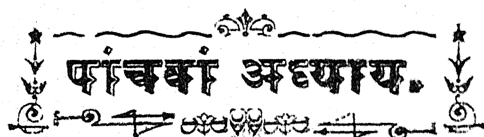
बड़े बड़े नगरोंमें रहने वाले अधिकांश मनुष्य रोगी देखे जाते हैं। किन्तु क्या खुले वायुमें परिश्रम करने वाले अधि-कांश किसान, सिपाही और शिकारी भी रोगी दिखाई देते हैं? नहीं, नहीं दिखाई देते। फिर पाठक, यदि तुम और तुम्हारे कुटुम्बी शुद्ध-वायु और सूर्यके प्रकाशके अभावके कारण रोगी हों तो तुम्हें जंगलमें या खुली हवामें जाकर रहना चाहिए। नगरों को छोड़ कर, प्रकृतिके सुन्दर मैदानों और हरे-भरे उपवनोंमें रहो। सूर्यके प्रकाश में रहनेसे तुम नीरोग और बलवान हो जाओगे। तुम्हारे रक्त-कण अधिक लाल हो जायंगे, और तुम्हारे शरीरको स्वस्थ बना देंगे। बिना प्रकाशके उत्तम रक्त नहीं बनता और रक्तके बिना प्राण नहीं रहता।

सूर्यके प्रकाशसे साँप, बिच्छू आदि विषधर प्राणी भी भाग जाते हैं। सूर्यका प्रकाश स्वास्थ्यके लिए परम हित-कर है, किन्तु बहुत कड़ी धूप नहीं। कड़ी-धूप में घूमने-फिरने या परिश्रम करनेसे सिरमें दर्द पैदा हो जाता है।

सूर्यका प्रकाश प्राकृतिक है। चन्द्रमासे जो शीतल-प्रकाश संसारको प्राप्त होता है, वह उसका नहीं। वास्तवमें चन्द्रमा

को सूर्यसे ही प्रकाश प्राप्त होता है। दीपक, लेम्प, गैस, आदि प्रकाश कृत्रिम हैं। कृत्रिम-प्रकाशसे शरीरको कोई लाभ नहीं पहुँचता, बल्कि प्रायः हानि पहुँचती है। केवल सूर्यका प्रकाश ही हमारे स्वास्थ्यके लिए परम हितकर है।

आज कल कितने ही नगर रातमें बिजलीके प्रकाशसे जगमगा उठते हैं। दीपक, लेम्प, गैस आदिके प्रकाशसे बिजलीका प्रकाश अच्छा होता है। बिजलीके प्रकाशसे धुआँ नहीं पैदा होता, इससे स्वास्थ्यको हानि नहीं पहुँचती।



पांचवां अध्याय.

जल।

'पानीयं प्राणिनां प्राण विश्वमेवहितन्मयम्।'

मदनपाल-निघण्टु



जीवन *जीवन है। संसारके सभी जीवधारियों को जीवन धारण करनेके लिए जलकी जरूरत होती है। जलके बिना वृक्ष पैदा नहीं हो सकते पैदा हुए वृक्ष सूख जाते हैं। मनुष्य भी जलके बिना जीवित नहीं रह सकता।

---

*जलका नाम ही जीवन है

शरीरको पानी की आवश्यकता—हम आगे लिख आये हैं कि, हमारे शरीरमें जलका ही भाग अधिक है। शरीर में रासायनिक क्रियाओंके द्वारा अन्य पदार्थ बनते हैं, परन्तु पानी नहीं बनता, बल्कि उसका व्यय होता रहता है। हमारे शरीरसे नित्य २८ फीसदी जल त्वचाके द्वारा, २० फी सदी फुफ्फुसोंके द्वारा, ५० फीसदी वृक्कोंके द्वारा और दो फी सदी मल आदिके द्वारा निकलता है। इसलिए शरीरस्थ जलकी क्षति-पूर्त्ति करनी पड़ती है। हमको इस क्षति-पूर्त्ति के कारण ही प्यास लगती है, और तब हम पानी पीकर क्षति-पूर्त्ति करते हैं।

जल शुद्धताका एक मुख्य साधन है। जलके द्वारा हम शरीरको बाहर भीतर साफ़ कर सकते हैं। हम जो पानी पीते हैं, वह शरीरके भीतरी अवयवोंको शुद्ध करता है। भोजन पचाने, और शरीरको काम करनेकी शक्ति देनेके लिए शरीरके भीतर निरन्तर रासायनिक-क्रियायें होती रहती हैं। इन रासायनिक क्रियाओंसे शरीरके भीतर मल बनता है, प्राकृतिक रीतिसे शरीरके अंगोंसे मल अलग होना ही चाहिए। शरीरके अंगोंसे मलको अलग करना पानीका ही काम है। जल, रक्तमें मिलकर समग्र अवयवों में पहुँचता, और उनको पोषण पहुँचाता तथा उनसे मल ग्रहण कर उन अंगोंमें पहुँचा देता है, जो मल निकालनेका काम करते हैं। मल निकालने वाले अंग त्वचा, वृक्क, फुफ्फुस और गुदा है। हम जो पानी पीते हैं, वह शरीरकी शुद्धता के अतिरिक्त अन्य अनेक कार्य भी करती है। वह शरीरके रासा-

यनिक संगठनमें प्रविष्ट होता है। शरीरके पाचक-रसोंमें उसका विशेष अंश रहता है, जिससे वे रस पचन-क्रियाको सम्यक्-रूपसे पूर्ण करते हैं। पानी, श्लैष्मिक-कला आदिको भी नम रखता है, और घर्षणको रोकता है। पानी रक्त और लिम्फमें मिल कर, उनको तरल बनता है। सारांशमें, जलके बिना रक्त, बालों जैसी बारीक नसोंमें दौड़ नहीं सकता, मल शरीरसे पृथक नहीं किया जा सकता, और पचन-क्रिया नहीं हो सकती।

साधारणतः पानीकी गणना भोजनमें नहीं की जा सकती, क्योंकि वह प्रायः शरीरमें शक्ति नहीं पैदा कर सकता, मांस-तन्तुओंको नहीं बना सकता, और न उनकी क्षति-पूर्त्ति ही कर सकता है। तथापि जल एक दृष्टिसे भोजन है। क्योंकि समग्र खाद्य-पदार्थोंमें उसका अंश अवश्य पाया जाता है।

जैसे वायुमण्डलकी हवा ओषजन और नत्रजनका रासा-यनिक मिश्रण है, उसी तरह पानी भी ओषजन और उद्जन (हाइड्रोजन) का रासायनिक मिश्रण है। जलमें ओषजनका एक भाग रहता है, और उद्जनके दो।

स्वच्छ जल—स्वच्छ जलमें कोई रंग या गन्ध नहीं होती। वह स्फटिक सा निर्मल होता है। बोतलमें भरकर पानी की परीक्षाकी जा सकती है। यदि दो एक दिनमें ही बोतलके पानीमें दुर्गन्ध पैदा हो जाय या तलमें तलछट जमा हुआ दीख पड़े, तो यह समझना चाहिए कि पानी स्वच्छ नहीं।

हलका या भारी जल—जल दो प्रकारका होता है,

हल्का और भारी। जिस जलमें खनिज-पदार्थ बहुत अधिक मिले होते हैं, वह भारी कहा जाता है, और जिस जलमें खनिज पदार्थोंकी बहुत न्यूनता पाई जाती है, वह हलका कहा जाता है। भारी जल, साबुन मिलानेसे फट सा जाता है। भारी जल, पीनेके योग्य नहीं होता। क्योंकि उसके पीनेसे शरीर में मल और बढ़ जाता है, तथा त्वचा के अनेक प्रकारके रोग पैदा होते हैं। भारी जल पीनेसे त्वचा सूखी भी रहती है।

पानी प्राप्त होनेका प्राकृतिक साधन—पानी प्राप्त होनेका प्राकृतिक साधन वर्षा है। सालमें ४ महीने प्रायः वर्षा हुआ करती है। इन्हीं चार महीनोंकी वर्षाका जल हमें १२ महीने काम देता है। वर्षा क्या है? महासागरोंसे पानी भाप बनकर ऊपर उड़ता है। अनन्तर वही जलके रूपमें जमीन पर गिरता है। यही वर्षा है।

वर्षाकाजल—वर्षाका जल सबसे शुद्ध होता है। क्योंकि वह भाप बनकर अपना पूर्व-रूप ग्रहण करता है। तरल पदार्थोंकी शुद्धताका श्रेष्ठ साधन यही क्रिया है। यद्यपि वर्षाके जलमें वायुके संसर्गसे, धूल और कीटाणु मिल जाते हैं, तथापि उनसे शरीरको कोई विशेष हानि नहीं पहुँचती। भूतलके जलकी अपेक्षा वर्षाका जल पीनेके लिये अधिक अच्छा होता है। ऊँचे पात्रोंमें साफ़ जगह पर वर्षाका जल एकत्र करना चाहिये, किन्तु पहला पानी फेंक देना चाहिये, क्योंकि उसमें धूल आदि मिली रहती है। अंग्रेजी कहावत भी है कि—

"First rain is poison." वर्षाका पानी हल्का होता है, इसलिये थोड़े साबुनसे ही वर्षाके पानीमें कपड़े साफ़ हो जाते हैं।

नदियोंका जल—नदियोंका जल अशुद्ध रहता है, विशेषतया बरसातमें। बरसातमें ऐन्द्रियिक और निरैन्द्रियिक पदार्थ बहकर नदियोंमें आते हैं। और उनके जलको मैला और दूषित कर देते हैं। अन्य मौसमोंमें भी प्रायः नदियोंका पानी शुद्ध नहीं रहता। मनुष्य और पशु उसे अशुद्ध करते रहते हैं।

जिस जगहसे नदी निकलती है, उस जगहका पानी प्रायः शुद्ध होता है। नदियाँ अधिकतर पहाड़ोंसे ही निकलती हैं। पहाड़ोंका पानी शुद्ध और मीठा होता है। नदियाँ जैसे जैसे आगे बहती जाती हैं, वैसे वैसे उनका पानी अशुद्ध होता जाता है। नगरोंके निकट बहनेवाली नदियोंका पानी अधिकतर अशुद्ध होता है। किन्तु यदि नदियोंका पानी दूषित ही होता जाय, उसका संशोधन न हो, तो या तो प्राणियोंको पीनेके लिये पानी मिलना दुर्लभ हो जाय, या विश्वमें भयङ्कर संहार-लीला होने लगे। वास्तवमें नदियोंका जल शुद्ध भी होता रहता है। सिवार, सूर्यकी किरणें और मछलियाँ नदियोंका जल शुद्ध करनेके प्रधान साधन हैं। नदियोंके जलका बहाव शुद्धताका साधन है।

तालाबों का जल—भारतमें तालाब खुदवानेकी बहुत पुरानी प्रथा है। तालाबोंके पानीको, मनुष्य और पशु निरन्तर

दूषित करते रहते हैं। इसलिए वह पीनेके योग्य नहीं होता।

हमारे देशमें बहुत सी ऐसी देहाती बस्तियाँ हैं, जहाँके लोग तालाब या पोखरोंका ही जल पीते है। यह अक्सर देखा जाता है, कि देहातोंमें जिस पोखरे या तालाबका जल लोग पीते हैं, उसीमें अनेक लोग आबदस्त लेते हैं, दतौन कुल्ला करते हैं, नहाते-धोते हैं, कपड़े साफ़ करते हैं, और पशुओंको पानी पिलाते और नहलाते हैं। पशुवर्ग उसीमें मल मूत्र त्यागते हैं। इससे तालाब या पोखरेका पानी मैला ही नहीं, बल्कि हानिकर भी हो जाता है, जिससे तरह तरहके रोग सताते हैं। जिस तालाब या पोखरेका पानी, पीनेके काममें लाया जाता हो, उसकी स्वच्छताकी रक्षा गाँव वालोंको सर्वथा करनी चाहिये। उसमें किसीको भी आबदस्त लेने, दतौन कुल्ला करने, नहाने-धोने, कपड़े और बर्तन साफ़ करने तथा पशुओंको पानी पिलाने और नहलाने न देना चाहिये। यदि कोई कहना न माने, या किसी तरहकी दस्तन्दाजी करे, तो सब गाँव वालोंको मिलकर उसके प्रतीकारका यत्न करना चाहिये।

लोगोंको बस्तीसे और जलाशयसे लोटेमें पानी लेकर दूर टट्टी फिरना चाहिये, और दतौन कुल्ला, स्नान आदि कार्य घरमें ही करना चाहिए।

कुओंका जल—जिन कुओंका जल खर्च होता रहता है, और झरनोंसे नया जल पहुँचता रहता है, उन कुओंका जल अधिक दूषित नहीं होता। जिन कुओंका जल खर्च नहीं

होता, उनका जल अवश्य दूषित होता है। उथले कुओंका जल, गहरे कुओंके जलकी अपेक्षा अधिक दूषित होता है। कच्चे कुओं का पानी बहुत दूषित होता है। बरसातमें आस-पासका मैला घुलकर पानीके साथ जमीनमें बहकर, कच्चे कुओंमें पहुँचता है। अतएव कुओंको ईंट पत्थरसे अवश्य ही चुनवा देना चाहिये। और उनके चारों ओर, चार फीट ऊँचा गोल चबूतरा बँधवा देना चाहिये।

बहुतसे लोग शीतलताके ख़यालसे कुओंके पास पेड़ लगाते हैं। किन्तु ऐसा करना स्वास्थ्यके लिये लाभप्रद नहीं है। कारण, वृक्षकी पत्तियाँ कुओंमें गिरकर सड़ती हैं, और जलको दूषित करती हैं।

कुएसे पानी मिट्टीके पात्रोंसे नहीं, धातुके मँजे धुले पात्रोंसे ही खींचना चाहिये। प्रत्येक कुएमें एक डोल और रस्सा सर्व-साधारणकी ओरसे रक्खा रहना चाहिये। उसी रस्से और डोलसे सब लोगोंको पानी खींचना चाहिये। अपना अपना रस्सा और बर्तन कुएमें छोड़नेसे, जलके दूषित होनेकी सम्भावना रहती है। कुएमें नल लगवा देनेसे, और उसीके द्वारा जल लेनेसे, जलके दूषित होनेकी सम्भावना प्रायः नहीं रहती। सालमें प्रत्येक कुएकी सफ़ाई कराना परमावश्यक होता है।

जलको साफ़ और शुद्ध करना—जलमें हैज़ा, टाइफाइड, अतिसार आदि संक्रामक रोगोंके कीटाणु बहुत आसानीसे पहुँच सकते हैं। इसलिए जलको सदा शुद्ध करके

पीना बहुत अच्छा और स्वास्थ्य-रक्षक होता है। उबालना जलको शुद्ध करनेकी सबसे अच्छी रीति है। इससे कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

जल, ओषधियोंसे भी शुद्ध किया जाता है। जल शुद्ध करनेके लिए क्लोरोजिन एक अच्छी दवा है। एक घड़ा जलमें दो-एक बूँद क्लोरोजिन छोड़ देनेसे कोई आध घन्टेके अन्दर जल शुद्ध हो जाता है, और स्वाद नहीं बिगड़ता। "परमेगनेट-आफ-पोटास" भी जल शुद्ध करनेकी अच्छी और सस्ती दवा है। इस दवाका उतना अंश जलमें छोड़ना चाहिये, जिससे जल हल्के गुलाबी रङ्गका हो जाय। यह दवा कोई आठ घन्टेमें जलको शुद्ध करती है। अर्थात् कीटाणुओंको नष्ट करती है।

छाननेसे जल पूर्णतया यद्यपि शुद्ध नहीं होता, तथापि साफ़ हो जाता है। बहुतसे लोग साफ़ करनेके लिये कोयले और बालूसे छाननेका काम निकालते हैं। इसकी क्रिया इस प्रकार है। चार घड़े एक दूसरेके ऊपर रक्खे जाते हैं। ऊपरवाले तीन घड़ोंमें छेद कर दिया जाता है। ऊपरके घड़ेमें पानी भरा जाता है। उसके नीचेके घड़ेमें लकड़ीका कोयला रहता है। कोयले-वाले घड़ेके नीचेके घड़ेमें बालू रहती है। इन तीन घड़ोंमेंसे जल बूँद-बूँद चूकर नीचेके घड़ेमें इकट्ठा होता है, और वह पीनेके काममें लाया जाता है। एक घड़ेमें ही बालू और कोयला भर देनेसे तीन घड़ोंसे भी छाननेका काम निकल सकता है। किन्तु कमसे कम एक सप्ताहमें घड़ोंका कोयला या बालू धूपमें सुखा

लेना या बदल देना चाहिए। नहीं तो उनमें प्रकाश न पड़नेके कारण, रोगोंके कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। वे पेटमें पहुँच कर, कितने ही प्रकारके रोग पैदा करते हैं। इसके सम्बन्धकी एक बात और भी याद रखनी चाहिये, वह यह है कि, बालू सूखी और साफ़ जगहसे लानी चाहिए।

ताजा जल—स्वच्छ और ताज़े पानीमें बासी पानीकी अपेक्षा प्राणशक्ति विशेष परिमाणमें रहती है। अतः यथासंभव स्वच्छ और ताज़ा पानी पीना चाहिए।

पिछली रातमें, एक गिलास जल पी लेना बड़ा लाभप्रद होता है। इससे शरीरका मल, मल-मूत्र-द्वारा बाहर निकल जाता है। प्रातःकाल उठते ही एक गिलास जल फिर पीना चाहिए। ऐसा करनेसे पेट धुल जाता है, और पचन-क्रियामें सहायता पहुँचती है। भोजनके पूर्व थोड़ा जल पीना भी लाभ-प्रद होता है। किन्तु भोजन करते समय, अधिक जल न पीना चाहिए। इससे पाचक-रस पतले हो जाते हैं, और भोजन अच्छी तरह नहीं पचता।

जल सदा प्यासके अनुसार पीओ। एक बारमें अधिक जल पी जाना हानिप्रद होता है। इससे प्यास भी शान्त नहीं होती। थोड़ा थोड़ा जल समय समयपर पीनेसे, प्यास भी शान्त होती है; और शरीरको भी लाभ पहुँचता है।

बहुत अधिक शारीरिक परिश्रम या व्यायाम करनेके अथवा श्रान्तिके बाद, तुरन्त ही जल न पीना चाहिए। आध घण्टे तक

प्यासको रोकना चाहिये। इससे पहले पीनेसे तबीअत बिगड़ जानेकी सम्भावना रहती है।



(१) भोजन।

हमें क्या खाना चाहिए ?

यच्छक्यं ग्रसितुं शस्यं ग्रस्तं परिणामेच्चयत् ।
हितश्च परिणामैयत् तदाद्यं भूतिमिच्छता ॥

पञ्चतन्त्र।



स पदार्थसे हमें, और हमारे शरीरके भीतरी अवयवोंको काम करनेकी शक्ति, एवं हमारे शरीर और उसके अवयवोंको पोषण, वृद्धि-विकाश एवं नवजीवन प्राप्त होता है, वह भोजन है। स्वास्थ्यका अच्छा या बुरा होना भी भोजनपर निर्भर रहता है। मन और प्रकृतिपर भी भोजनका असर पड़ता है। लिखा है—"यदृशं भक्ष्यते अन्नं बुद्धि-र्भवति तादृशं।" अर्थात् हम जैसा भोजन करते हैं, वैसी ही बुद्धि भी हो जाती है। अङ्ग-रेजीमें एक कहावत है:—

"As a man eateth so is he."

अर्थात्—मनुष्य जिस प्रकारका भोजन करता है, वैसा ही वह हो जाता है। शाकाहार जैसे सात्विक भोजनसे मन सतोगुणी रहता है। मांस, मदिरा जैसे तामसी भोजनसे मन तमोगुणी और दुर्गुणी बन जाता है।

शरीरके भीतर निरन्तर रासायनिक-क्रियायें होती रहती हैं। कार्य करते समय हमें शक्तिकी ज़रूरत होती है। मनुष्यके शरीरमें अरबों सेलें हैं। हमें कार्य करनेकी शक्ति देनेके साधन सेल ही हैं। जब हम किसी काममें जुट जाते हैं, तब शरीरके भीतर सेलें भी हमें शक्ति देनेके लिये, काम करने लगती हैं। उस समय उनके प्रोटोप्लाजममें बड़ी विचित्र रासायिनिक-क्रियायें होती हैं। इन क्रियाओंसे ही हमें कार्य करनेकी शक्ति प्राप्त होती है। लगातार कार्य करते रहनेसे, शक्तिका ह्रास भी होता है। कारण, कार्य करते रहनेसे सेलें टूटती-फूटती रहती हैं। यदि सेलोंके टूटे-फूटे भाग, फ़िर ज्योंके त्यों न हो जावें, उनको वे पदार्थ प्राप्त न हों जो शक्ति पैदा करनेके काममें व्यय होते हैं, तो हमें कार्य करनेकी शक्ति मिलना तो दूर रहा, हमारे शरीरका सभी काम मूहूर्त्त-मात्रमें बन्द हो जाय। परन्तु ऐसा नहीं होता। शक्तिका क्षय क्रमशः होते रहनेपर हमें भूख लगती है, और हम भोजन करते हैं। भोजन शरीरके भीतर जाकर पचता है। पचनेके बाद जो पदार्थ बनते हैं उनमेंसे जिसकी जरूरत शरीरको होती है, वे शरीरमें रह जाते हैं, जिनकी जरूरत नहीं होती,

या जो नहीं पचते, या पचने-योग्य-नहीं होते, वे मल-रूपमें शरीरसे बाहर हो जाते हैं। शरीरके भीतर भोजन पर रासायनिक क्रियायें होनेके बाद जो पदार्थ बनते हैं, और उनमेंसे जिनकी ज़रूरत शरीरको होती है, वे रक्तमें जा मिलते हैं। इसे लिम्फ कहते हैं। सेल इसी लिम्फसे पोषक और शक्ति-उत्पादक-पदार्थ ग्रहण करते रहते हैं, और इससे शरीरको कार्य करनेकी नवीन-शक्ति प्राप्त होती है।

सारांशमें, भोजनसे हमारे शरीरको, भीतरी और बाहरी कार्य करनेकी शक्ति प्राप्त होती है। क्षय हुई शक्तिकी पूर्त्ति होती है, टूटे-फूटे सेल और मांस तक ज्यों के त्यों हो जाते हैं।

भोजन शरीरकी क्षय हुई शक्तिकी पूर्त्ति ही नहीं करता, बल्कि वह शरीरकी वृद्धि भी करता है। छोटे छोटे बच्चे क्रम-क्रम से बढ़कर मनुष्य बन जाते हैं। बच्चोंको भोजनसे ही वृद्धि प्राप्त होती है। भोजन यद्यपि प्राप्तवयस्कोंके शरीरकी वृद्धि नहीं कर सकता, तथापि वह उनके शरीरमें मांस और बलकी वृद्धि करता है। भोजनके दो कार्य हैं—शरीरको पोषण देना और बल-वृद्धि करना। इसलिये खाद्य-पदार्थोंको हम दो हिस्सोंमें बाँट सकते हैं—

१ मांस-वर्द्धक। २ ओजवर्द्धक।

इन्हीं दो कामोंके लिये हम भोजन करते हैं—(१) शरीरको पुष्ट करने, और मांस-तन्तुओंको, जो कार्य करनेसे टूटते-फूटते हैं, फिरसे ज्यों का त्यों बनानेके लिए। (२) शक्ति देनेके

लिए, जो गरमी और कामके रूपमें रूपान्तरित होती है। शरीरको भोजन श्वास द्वारा शरीरके भीतर प्रविष्ठ हुए वायुके ओषजन अंशसे, जिसके संयोगसे ओषजनीकरण नामकी रासायनिक क्रिया होती है, शक्ति प्राप्त होती है। खाद्य-पदार्थोंको रासायनिक दृष्टिसे हम पाँच भागोंमें बाँट सकते हैं—प्रोटिन, कर्बोज (Carbohydrates) वसा (Fat) लवण और जल।

प्रोटीन, कर्बोज और वसाकी गणना सजीव या जान्तुव-पदार्थोंमें, और लवण तथा जलकी गणना खनिज या निर्जीव पदार्थोंमें की जाती है।

सजीव पदार्थ दो प्रकारके होते हैं—नत्रजनीय और अनत्रजनीय। इन दोनोंमें कर्बन अवश्य रहता है।

१ नत्रजनीय पदार्थोंमें नत्रजन, जैसे कई प्रकारकी प्रोटीनें, पाया जाता है।

२ अनत्रजनीय, इनमें नत्रजन नहीं पाया जाता। जैसे चर्बी, शक्कर आदि।

प्रोटीन, लवण और जल, मांस-वर्द्धक होते हैं। प्रोटीन, चर्बी, और कर्बोज शरीरमें शक्ति और गरमी पैदा करते हैं।

हम ऊपर लिख आये हैं कि, खाद्य-पदार्थोंमें पाँच चीजें पाई जाती हैं—प्रोटीन, कर्बोज, वसा, लवण और जल। हमारा शरीर भी इन्हीं पाँच पदार्थों—प्रोटीन, कर्बोज, वसा, लवण और जलसे—बना है। यही कारण है कि, शरीरके भीतर रासायनिक क्रियाओंसे जो शक्ति क्षय होती है। वह भोजनसे

पूरी हो जाती है। शरीरमें कोई ऐसा सेल नहीं, जिसमें प्रोटीन न हो। बहुत सी ऐसी सेलें हैं, जिनमें वसाका बाहुल्य रहता है। प्रत्येक सेलके प्रोटो-प्लाजममें किसी न किसी प्रकारका लवण अवश्य रहता है। उसमें कर्बोज श्रेणीके पदार्थ भी मौजूद होते हैं। जल तो प्रत्येक सेलका आवश्यक अवयव है। शरीरमें ऐसा कोई भी सेल और तन्तु नहीं, जिसमें जलका कुछ अंश न हो। रक्तका अधिक भाग जलका ही होता है। वास्तवमें हमारे शरीरमें जलका ही भाग अधिक है। शरीरके भारके १०० भागोंमें ६४ भाग जलका है।

इसीलिये भोजनसे शरीरकी सेलें बनतीं, और बढ़ती हैं। उन्हें वे पदार्थ प्राप्त होते हैं, जो शक्ति पैदा करनेके काममें व्यय होते हैं। सेलोंके बढ़ने और उनकी संख्या अधिक होनेसे, शरीरका वृद्धि-विकाश होता है।

प्रोटीन—प्रोटीन-एक प्रकारका रासायनिक सम्मिश्रण है। इसमें कर्बन, उद्‌जन, ओषजन, गन्धक, नत्रजन वा स्फुरके मौलिक पाये जाते हैं। ओषजनका अंश अधिक रहता है। शरीरके प्रत्येक सेलमें प्रेटीन पाया जाता है। शरीरमें प्रोटीन और श्वास द्वारा शरीरके भीतर पहुँचे हुए ओषजनका संयोग होनेसे, ओषजनीकरण नामकी रासायनिक क्रिया होती है। जिससे प्रोटीनसे यूरिया, यूरिक अम्ल जल आदि पदार्थ बन जाते हैं, और गरमीके रूपमें शक्ति भो पैदा होती है। भोजनके पदार्थ मांस, अण्डेकी सफ़ेदी, दूध दही, आटा आदिमें प्रोटीनका अंश अधिक पाया जाता है। मांसपेशियों और शरीरके अन्य यन्त्रोंकी क्षय-पूर्त्ति और पुष्टि-

साधन करना प्रोटीनका मुख्य कार्य है। प्रोटीन सेलोंकी क्षय-पूर्त्ति करता है। सेल प्रोटोप्लाजम् नामके एक प्रकारके नाइट्रोजन-प्रधान पदार्थ द्वारा गठित होते हैं। प्रोटीन और लवण प्रोटो-प्लाजम्का पुनर्गठन कर देते है।

वसा—वसामें कर्बन, उद्जन और ओषजन पाया जाता है। वसाका ओषजनीकरण होनेपर, कर्बनद्विओषित-गैस और जल बनता है, और गरमीके रूपमें शक्ति भी मिलती है। शरीरके प्रत्येक सेलमें वसाका कुछ अंश रहता है। कुछ ऐसी भी सेलें हैं, जो वसासे पूर्ण रहती हैं। घी, मक्खन, दूध, तेल, आदि खाद्य-पदार्थोंमें वसाका अधिक-अंश रहता है।

कर्बोज—कर्बन, उद्जन और ओषजन ही कर्बोजके भी मौलिक होते हैं। कर्बोजके ओषजनीकरणसे कर्बनद्विओषित-गैस और जल बनता है। उष्णताके रूपमें शक्ति भी पैदा होती है, परन्तु इससे वैसी उष्णता नहीं पैदा होती जैसी वसा से।

कर्बोज कई प्रकारके होते हैं, जैसे शकर, श्वेतसार, ग्लाइ-कोजन (शर्कराजनक) और सेल्यूलोज (शाकों आदिके रेशे) प्राणियोंके शरीरमें शकर और ग्लाइकोजन ही पाया जाता है, श्वेतसार और सेल्यूलोज नहीं।

श्वेतसार और सेल्यूलोज बनस्पतियोंमें पाये जाते हैं। चावल और गेहूँके आटेमें श्वेतसारका अंश अधिक पाया जाता है। गेहूँके आटेमें सेल्यूलोजका भी अंश होता है।

लवण—शरीरमें कई प्रकारके लवण पाये जाते हैं। प्रत्येक मांस-तन्तुमें, प्रत्येक सेलके प्रोटोप्लाजममें, और शरीरके रसमें किसी न किसी प्रकार, प्रत्येक लवण अवश्य रहता है। हड्डियोंमें खनिज पदार्थोंका अंश अधिक पाया जाता है। हमारे

खाद्य पदार्थमेंसे प्रत्येकमें लवण कुछ न कुछ अंश अवश्य रहता है।

जल—जलके मौलिक दो हैं—ओषजन और उद्जन (Hydrogen) जलका भाग है। हमारे शरीरमें सबसे अधिक भाग जलका ही है, जैसा हम पीछे लिख आये हैं। शाक, फल, दूध आदि हमारे खाद्य-पदार्थोंमें भी जलका भाग अधिक पाया जाता है।

शरीरको प्रोटीनकी बहुत अधिक आवश्यकता होती है, विशेषतः शरीरके वृद्धि-विकाशकी अवस्था तक। प्रोटीनसे भी मांस और सेलें बनते हैं। इसलिये हमारे खाद्य-पदार्थ ऐसे होने चाहिएँ, जिनमें प्रोटीन अधिक हो। मानसिक परिश्रम करने वालोंको ख़ासकर ऐसे ही पदार्थ खाने चाहिये। वसा और कर्बोजसे शक्ति प्राप्त होती है। इसलिये भोजनमें इनका भी आवश्यक अंश होना चाहिये। भोजनमें लवणका भी काफी अंश होना चाहिए। क्योंकि हड्डियोंकी मज़बूती लवण पर ही निर्भर होती है। जल तो शरीरका आवश्यक अङ्ग ही है। जलके बिना शरीरका भीतरी मल साफ़ नहीं होता, शरीरमें रक्त नहीं दौड़ सकता। शरीरके भीतरका पानी मूत्र, पसीना आदि अनेक रूपोंमें बाहर निकलता है, और इसलिये शरीरको नवीन जलकी आवश्यकता होती है।

खाद्य-पदार्थको हम साधारणतः ३ भागोंमें बाँट सकते हैं। (१) वनस्पति खाद्य-पदार्थ, जैसे अनाज, फल, मेवे, दूध, आदि, (२) प्राणिज खाद्य-पदार्थ जैसे मांस (मांस, अण्डा, आदि) (३) मसाला (जैसे; राई, मिर्च, लौंग, धनिया आदि)। किस खाद्यमें किस पदार्थका कितना उपादान रहता है। वह यहाँ हम लिखते हैं।

नाम	प्रोटीन	वसा	कर्बोज	खनिज पदार्थ	जल	सेल्यूलोज
अन्नवर्गः—						
कोदों	७.०	२.१	७७.२	१.३	११.७	१.३
साँवा (छिलकेसहित)	८.४	३.०	७२.५	१.६	१२.०	२.२
बाजरा	१०.४	३.३	७.१५	२.०	११.३	२.०
मक्का	६.५	३.६	७०.७	१.७	१२.५	२.०
चावल	७.३	.६	७८.३	.६	१२.८	.४
जुवार	६.३	२.०	७२.३	१.७	१२.५	२.२
गेहूँ का आटा	११.४७	२.४	७०.६०	३.१३	११.८३	
मैदा	११.०	२.०	७१.२	.८	१५.५	२.६
जौ	११.५	१.३	७०.०	२.१	१२.५	
गेहूँकाआटा छनाहुआ	१०.७	१.१	७१.४	०.५		
दालः—						
चना	२१.७	४.२	५६.०	२.६	११.५	१.०
मटर	२८.२	१.५	५५.०	२.५	११.८	१.०
मसूर	२५.१	१.३	५८.४	२.२	११.८	१.२
मूँग (हरी)	२२.२	२.७	५४.१	४.४	१०.८	५.८
,, (पीली)	२३.८	२.०	५४.८	३.८	११.४	४.२
अरहर	२२.३	२.१	६०.६	३.०	१०.५	१.२
उड़द	२२.३३	१.६५	५५.२२			

नाम	प्रोटीन	वसा	कर्बोज	खनिज पदार्थ	जल
दूध:—					
गायका दूध	३·५	४·०	३·५	·७५	८७·८५
भैंसका दूध	६·११	७·४५	४·१७	·८७	८१·४०
बकरीका दूध	४·३	४·७८	४·४६	·७५	८५·७१
दही	४·११	३·५१	२·८	·६२	८७·८४
माखन	२४·०६	२·५		१·१	
पनीर	२१·०	२८·५		४·५	३६·०
माठा	२·१	२३·७	२·८	१·८	६६·०
सागवर्ग:—					
बन्दगोभी	१·५६	१·११	४·९	·४२	९२·०
फूलगोभी	२·२	०·४	५·७	०·८	९०·७
कद्दू	·५५	२·९९	२·५	·४५	९५·८८
बैंगन	·८९	२·३६	·९	·२६	९३·९८
प्याज	१·५१	·३४	५·३३		८८·९०
गाजर	·८७	२·७	१६·८	·१७	८८·१२
टमाटो	·८०	३·०४	१·२८	·६८	९४·७३
घुइयाँ	२·२९	·५४	११·८	१·१६	८०·६०
आलू	२·०	·१६	२१·०	१·०	७४·०
कटहलके बीज	१३·१४	३१·२०	१·९८	२·२७	४६·४६
हरीमटर	६·३५		२·०	·७	९२·०
शलजम	१·२	०·२	८·२	१·०	८९·४
मूली	१·३	०·७	१४·५	१·०	८२·५
केला	१·३	०·६	२३·०	०·८	७५·३

औसत वजनका स्वस्थ-मनुष्य, जो साधारण शारीरिक परिश्रम करता है, नित्य १६–२० ग्राम (माशा) नत्रजन और लगभग ३०० ग्राम कार्बन नित्य शरीरसे मल मूत्र, प्रश्वास, पसीना आदिके द्वारा निकालता है। इस कमीकी पूर्त्ति, खाद्य पदार्थोंके निम्न-लिखित अवयवोंसे की जा सकती है।

प्रोटीन	१२५	ग्राम
कर्बोज	५००	„
वसा	५०	„

नत्रजन और कर्बनके हिसाबसे, इस संख्याको हम इस प्रकार लिख सकते हैं:—

				नत्रजन	कर्बन
१२५	ग्राम	प्रोटीन	=	२० ग्राम	६२ ग्राम
५००	„	कर्बोज	=		२०० „
५०	„	वसा	=		३८ „
				२० ग्राम	३०० ग्राम

मानसिक-परिश्रम करनेवालोंके भोजनमें कर्बोजकी मात्रा इससे कम (४०० ग्रामके लगभग) और वसाकी मात्रा १०० ग्रामके लगभग और प्रोटीनकी मात्रा १०० ग्रामके लगभग काफ़ी है। काँगड़ीके गुरुकुल विश्वविद्यालयके १८ से २५ वर्षकी आयुके विद्यार्थियोंको भोजन इस प्रकार दिया जाता है।

भोजन २४ घण्टेमें

आटा	७ छटाँक		मूल अवयव
चावल	२ „	प्रोटीन	१०५ माशे
दाल	२ „	वसा	६६ „
घी	१ „	कर्बोज	५१४ „
दूध	१२ „		

शकर १ छटाँक
शाक

मनुष्यके लिये वानस्पतिक-भोजन सबसे अधिक पौष्टिक है। अनाजके छोटे छोटे वृक्षोंकी डाल-पत्तियोंमें वे गुण हैं, जो कितने ही प्रकारके पशुओंके वृद्धि-विकाश, पोषण तथा परिश्रमके कठिन कार्य करनेकी शक्ति देनेके लिये आवश्यक होते हैं। जिनकी पत्तियोंमें ऐसे गुण निहित हैं, उनके फलोंमें कैसे अच्छे गुण होंगे, यह सहज अनुमेय है। वानस्पतिक-आहारसे मनुष्य विशेष शक्तिशाली तथा परिश्रम-शील बनता है, काम करनेमें विशेष थकावट नहीं मालूम होती, और रूपये-पैसेकी बचत भी होती है। अपने जीवनमें मनुष्य जितना धन मांसाहार, शराब, तमाखू, चाय, काफ़ी आदिमें व्यर्थ उड़ा देता है, उतने धनसे वह नहीं मालूम क्या क्या कर सकता है। मनुष्यकी शारीरिक, मानसिक और नैतिक-शक्तियोंके विकाशका प्राकृतिक-मूल शाकाहार ही है। यही सदाचारका मूलाधार है।

फल—फल चाहे कच्चे हों या भुने हुए, पौष्टिक और स्वादिष्ट होते है। फलोंमें विशेषतया शकर डेक्सटरिन और कुछ अल्ब्यूमिनेड होते हैं। बालक एवं नवयुवक फल खानेके विशेष प्रेमी होते हैं। उनको फल अवश्य खिलाना चाहिये। फल खानेसे रक्तके गुण बढ़ जाते हैं। मांस या शराब खाने-पीनेवाले और और रोटी तथा फल खानेवाले व्यक्तियोंके रक्तमें अन्तर होता है। शराब या माँस पीने-खानेवालेका रक्त पतला होता है। फल खानेसे रक्त उत्तम और शुद्ध रहता है, क्योंकि वह पचन-क्रियामें सहायता पहुँचाता है। इससे वद्ध-कोष्ठता भी दूर होती है, तथा गुर्दे और मूत्रेन्द्रियोंके काम बढ़ जाते हैं। तथा छाती

और मेढ़ूमें दर्द होनेपर अंगूर खानेसे बहुत फ़ायदा होता है। पेटकी पीड़ा, पचनेन्द्रियोंके सूज जानेपर (Inflamation) वात-गठिया, और यकृत् तथा मूत्राशय (Blader) की दुःस्थितिमें भी फल खानेसे लाभ पहुँचता है। फल पर्याप्त पानी और ऐसिड युक्त होनेके कारण, हरारत-भरी तबीयतको भी तरोताज़ा करते हैं। जिस किसी व्यक्तिको बद्ध-कोष्ठता, मन्दाग्नि या अजीर्णकी शिकायत हो उसे प्रत्येक भोजन-के समय सेव, नारङ्गी, अञ्जीर आड़ू आदि फल खाने चाहियें। तरबूज, नारङ्गी, नीबू, अंगूर आदि फल खानेसे प्यास भी बुझती है। शरीरमें फलोंकी परिपाक क्रिया, उनकी पक्वता और ताजेपन-पर निर्भर होती है। अंगूर, नारङ्गी, पकाये गये सेव, अञ्जीर और आड़ू जल्द पचते हैं। तरबूज, नाशपाती, रास्पबेरी, आदि कुछ देरसे पचते हैं। सूखे फल अधिक पुष्टि-कारक होते हैं, किन्तु सुपच कम होते हैं। फल सदा पानीसे अच्छी तरह धोकर खाना चाहिये।

केले यहाँ हरे और पके दोनों दशाओंमें खाये जाते हैं। हरे केलेका साग रुचिकर और स्वादिष्ट होता है। पके केले स्वादिष्ट और पौष्टिक होते हैं।

पके बेल विरेचनका काम देते हैं। पेचिशमें बेलका शरबत या मुरब्बा खिलाना लाभकारी होता है।

आम इस देशके नामवर फल हैं। कच्चे आम खट्टे होते हैं। वे भूनकर या पकाकर ठण्डाईके लिये खाये जाते हैं। पके आम मीठे स्वादिष्ट और पौष्टिक होते हैं। पके आम खानेसे टट्टी साफ़ होती है, अतिसारके रोगीको आम खिलाना वर्ज्य है।

नाम	जल	प्रोटीन	कर्बोज	सेल्यूलोज	खनिज पदार्थ
सेव	८२.५	०.४	१२.५	२.७	१.०
अञ्जीर सूखे	२०.०	५.५	६२.८	७.३	१.२
अंगूर	७९.०	१.०	१५.५	२.५	०.५
नीबू	८९.३	१.०	८.३		
आम कच्चा	.५९	...	३.३८		१.२
आम पक्का	१.२	.७६	१७.५८		
नारङ्गी	८६.९	०.९	८.७	१.५	१.०
जामन	८६.९	.८	११.६		.५
आड़ू	८८.८	०.५	५.८	३.४	०.७
नाशपाती	८३.९	०.४	११.५	३.१	०.१
पीच	८०.०३	.६५	४.४८		.६९
अनन्नाश	८९.३	०.४	९.७		
पिपर	८३.०३	.०६	८.२६		.३१
बेर	७८.४	१.०	१४.८	४.३	१.०
रास्पबेरी	८४.४	१.०	५.२	७.४	१.४
गूजबेरी	८५.७४	.४७	७.०३		.४२
स्ट्राबेरी	३९.१	१.०	६.३	२.२	१.०
मालबेरी	८४.७१	.३६	९.१		.६६
शहतूत	८४.७	०.३	११.४		२.४
अनार	७६.८	१.५	९.७		०.६
खरबूजा (गूदा)	८९.८	०.७	७.६		०.३
तरबूजा („)	९२.९	०.३	६.५		०.२

मेवे—सूखे फल ही मेवे कहे जाते हैं। मेवोंमें प्रोटीन और वसाका अधिक अंश रहता है। और कर्बोजका कम अंश रहता है। मेवे यद्यपि दुष्पच होते है, पर भोजन को स्वादिष्ट बनाते और स्वास्थ्यको भी लाभ पहुँचाते हैं।

फलोंके बाद अनाजका नम्बर है। अनाजोंमें गेहूँ एक बहुत ही अच्छा पौष्टिक अनाज है। गेहूँके आटेकी पकी रोटियाँ बहुत स्वास्थ्य-कर होती हैं। इस देशमें आटेका चोकर अलग कर देनेकी चाल अधिकतासे चल पड़ी है। यह चाल अच्छी ही नहीं, हानिकर भी है। चोकरमें बहुत ही अधिक पौष्टिक-गुण होता है। असलमें गेहूँ बहुत महीन न पिसाना चाहिए और न उससे चोकर ही अलग करना चाहिए। चोकर मिले हुए आटेकी रोटी खानेसे क्लोमरस(Pancreatic Juice) अधिक पैदा होता है, आमाशयकी ग्रन्थियोंको आमाशयिक रस(Gastric Juice) बनानेके लिए उत्तेजना पहुँचती है, और आँतें साफ़ रहती हैं। रोटीके साथ फल खानेसे अधिक लाभ होता है। रोटी खानेसे कोष्ठ-बद्धता प्राकृतिक-रीतिसे बिना किसी दवा-दारूके आराम हो जाती है। रोटी खाते समय, उसे खूब चबाना और उसमें खूब थूक मिलने देना आवश्यक है। काफ़ी थूक मिल जानेसे, रोटीका श्वेतसार शकरमें बदल जाता है। श्वेतसार शकरमें परिवर्त्तित हो जानेसे वह पेटमें जल्दी पचता है। गेहूँमें प्रोटीन और चर्बीका अंश कम होता है। इस कमी को दूर करनेके लिए, रोटी घी या मक्खनसे चुपड़ा कर खाना चाहिए।

चावलमें कार्बोहाइड्रेट अधिक और अल्ब्यूमिनेड कम होता है। इसलिए उसे दाल, तरकारी या दूधके साथ खाना उपयोगी है। नया चावल सुपच नहीं होता। चावल पुराना खाना चाहिए। दाल खूब सिद्ध करके खाना चाहिए। कच्ची दाल दुष्पच होती है। दाल जितनी ही अधिक गले, वह उतनी ही अधिक सुपच होती है। दालका छिलका निकाल कर पकाना चाहिए। क्योंकि छिलके गल नहीं सकते। मांस मछलीकी अपेक्षा दालमें अधिक प्रोटीन होता है। सुसिद्ध दाल पचती भी शीघ्रतासे है। इसलिए मांस-मछलीकी अपेक्षा घी मिलाकर दाल खाना शरीरके लिए अधिक हितकर है। दाल नई होनी चाहिए, पुरानी नहीं। पुरानी दाल अच्छी तरह गलती नहीं, और इसलिए सुपच नहीं होती। भोजनके साथ सागका भी अंश रहना उपयोगी है। सागोंमें खास कर स्टार्च, शकर, डेक्स-टरिन और कुछ अल्ब्यूमिनेड होते हैं। भात, रोटी, आदिके साथ साग खानेसे भोजनमें अच्छा स्वाद आता है। आलूमें श्वेत-सारका अंश विशेष रहता है। आलूको भून या उबाल कर हम फलोंकी तरह नित्य खा सकते हैं।

मसाले—भोजनको स्वादिष्ट बनानेके लिए मसालों-राई, ज़ीरा, काली मिर्च, लालमिर्च, अदरख, सोंठ धनियाँ, दालचीनी मेथी, आदिका उपयोग किया जाता है। मसाले उत्तेजक होते हैं। उनसे शरीरको कोई लाभ नहीं पहुँचता, प्रत्युत हानि पहुँचती है। इसलिए भोजनके पदार्थोंमें, मसालेका उपयोग न

होने देना चाहिए।

शकर—शकर दो प्रकारको होती है। एक प्राकृतिक और दूसरी कृत्रिम फलोंमें जो शकर होती है, वह प्राकृतिक है। ईख चुकन्दर, खजूर आदिसे जो शकर तैयार की जाती है, वह कृत्रिम-शकर है। प्राकृतिक-शकरमें जितना अधिक पौष्टिक गुण हैं उतना कृत्रिममें नहीं। हम शकर बहुत अधिक खाते हैं। क्योंकि रोटी, फल, साग, दूध, आदिमें शकरका कुछ न कुछ अंश अवश्य रहता है। ईख आदि की शकर भोजनको स्वादिष्ट बनानेके काममें आती है, और जल्द पचती है। किन्तु यदि केवल शकर ही मिठाईकी तरह खायी जाय, तो उससे आँतोंको और आमाशयको हानि पहुँचती है। इसीलिए मिठाई कभी कभी और कम खानी चाहिए। बालकोंको, बहुत मिठाई खिलाना बहुत ही हानिकारक है। शकरसे शरीरकी शक्ति और गरमी भी प्राप्त होती है।

शहद—शहद यदि थोड़ा खाया जाय, तो शकरके समान ही लाभकारी है। रोटोमें चुपड़ कर शहद खाना-लाभ-प्रद है। शहद खानेसे रक्तका संशोधन होता है।

दूषित या गुण-हीन खाद्य-पदार्थ—बाजारोंमें कितने ही प्रकारसे खाद्य-पदार्थ गुणहीन या दूषित बनाये जाते हैं। जैसे घी में चर्बी या कोई तेल मिलाना, दूधमें पानी मिलाना या मक्खन भिला कर उसे बेचना। शक्करमें आटा मिला देना।

हलवाइयोंकी दूकानोंमें, मिठाइयों पर मक्खियाँ भिनक भिनक कर उनको दूषित करती रहती हैं, जिससे सर्व-साधारणके स्वास्थ्यमें धक्का पहुँचता है। यहाँ ऐसा कोई कानून नहीं, जो ऐसे कामोंको रोक सके। सर्वसाधारणके स्वास्थ्यकी जिम्मेदारी, नगरके म्यूनिसिपेलिटी-विभाग पर रहती है। परन्तु ऐसे कामोंमें व्याघात पहुँचाने वाले न तो कोई प्रस्ताव ही किये जाते हैं, और न प्रायःकोई और ही उपाय किए जाते हैं। कुछ वर्ष हुए कलकत्ते में हमारे मारवाड़ी भाइयोंने चेष्टा और अन्दोलन करके चर्बी मिला घी बेचनेके काममें वाधा डाली थी। परन्तु खेद है, उनकी चेष्टा और अन्दोलन कलकत्तेसे आगे न बढ़ सका। न तो यहाँ की सरकार ही गुण-हीन या दूषित पदार्थोंकी बिक्री का प्रचार कानून द्वारा रोकनेका प्रबन्ध करती है, और न सर्वसाधारणके मुखिया बननेवाले लोग ही इस सम्बन्धका देशव्यापी-अन्दोलन करनेका प्रयत्न करते हैं। यह कैसे खेदकी बात है !!! यूनाइटेड-स्टेट्स आफ अमेरिकामें भी पहिले ऐसे ही पदार्थ अधिकतासे बिकते थे। सस्ताईके लिहाज़से लोग खरीदते भी अधिक थे। परन्तु सन् १९०६ में "फूड-एण्ड ड्रग-ऐक्ट" नामका कानून वहाँ पास हो जानेसे, बाज़ारोंमें प्रायःइस प्रकारके दूषित या गुण-हीन पदार्थोंका अभाव हो गया है। यदि इसी प्रकारका कानून यहाँ भी पास हो जाय, तो सर्व-साधारणके स्वास्थ्य और सम्पतिका नाश कम हो जाय, जिससे देशका बहुत उपकार हो सकता है।

दूध—शरीरके रुधिर और मांस तन्तुओंमें जो तत्व मिले होते हैं, वे ही दूधमें भी पाये जाते हैं। इसलिये दूध शरीरके स्वास्थ्य और वृद्धि-विकाशके लिए उपयोगी होता है। किन्तु तभी, जब कि वह बिलकुल ताज़ा हो। संयमी व्यक्तियोंके लिये दूध बहुत अच्छा भोजन है। जिन लोगोंको अजीर्णकी शिकायत रहती है, वे लोग भी दूध खा सकते हैं। किन्तु दूध सदा बिलकुल ताज़ा खाना-पीना चाहिए। पकाकर खानेकी चाल बहुत अच्छी नहीं। पकानेसे दूधके कीटाणु मर जाते हैं सही, पर उसका पोषक-तत्व नष्ट हो जाता है। वास्तवमें, दूधसे यथार्थ पोषण,. स्तन द्वारा पीनेसे ही प्राप्त हो सकता है। कारण स्तनोंके दूधकी स्वाभाविक रक्षा होती है। परन्तु गाय-भैंसका दूध मनुष्य उनके स्तनमें मुँह लगाकर नहीं पी सकते। इसलिये दूध दुहे जानेके बाद ही तुरन्त पी जाना चाहिये। दुहनेके बादसे ही दूध बिगड़ने लगता है, कभी कभी तो स्तनमें ही दूधके गुण क्षीण होने लगते हैं। दूधमें कितने ही प्रकारके कीटाणु भी पाये जाते हैं, जो कितने ही मार्गोंसे दूधमें जा मिलते हैं। कुछ तो दूधमें स्वभावतः मिले रहते हैं। दुहते वक्तके बाद भी, हवामें उड़ती हुई धूलके साथ बहुतसे कीटाणुदूधमें जा पहुँचते हैं। मैले हाथ और नाखून भी दूधमें कीटाणुओंके पहुँचनेके साधन होते हैं। गाय-भैंसके मूत्रके छींटे भी दूधमें कीटाणुओंको पहुँचाते हैं। इसलिये गाय-भैंसके मूत्रसे दूधको खूब बचाना चाहिए। दूध-पात्र और गाय-भैंसके स्तनोंमें भी कीटाणु स्थान पा सकते हैं। इनको गरम पानीसे

धो लेना चाहिये। दुहनेवालेको अपने हाथ और नाखून भी गरम पानीसे साफ़ कर लेना चाहिए। परन्तु दुहे हुए दूधमें जितने कीटाणु पाये जाते हैं, उतने स्तनके दूधमें नहीं मिलते। दूधमें कीटाणु-नाशक गुण भी होता है। दूध दुहनेके बाद ८ से १२ घण्टेतक दूधके कीटाणु नष्ट होते रहते हैं, परन्तु सब नष्ट नहीं हो जाते, कुछ बच रहते हैं। इसके बाद बचे हुए कीटाणुओंकी संख्या अत्यन्त शीघ्रतासे और लगातार बढ़ने लगती है। यदि गाय या भैंस रुग्ण होती है, तो रोगके कीटाणु भी दूधमें मिले रहते हैं। इसलिये अन्य खाद्य-पदार्थोंकी अपेक्षा, दूध अनेक बीमारियों और मृत्युका कारण होता है। दूधसे मनुष्यको क्षयी, टाइफाइड-फीवर, स्कारलेट-फीवर डिपथिरिया, आदि भयानक और दुःसाध्य रोग हो जाते हैं। यह तो प्रायः देखा ही जाता है कि, माताको ज्वर आनेपर दूध पीनेवाला बच्चा भी ज्वर-ग्रस्त हो जाता है। माताको जुकाम होनेपर बच्चेको भी जुकाम हो जाता है। परीक्षा करनेपर, ऐस्पिरिन, इओडिन केलोमेल आरसीनियस-ऐसिड, पोटासियम ब्रोमाइड, सेलीसिलिक-ऐसिड, सेलिसिलेट्स, ईथर, पेरीपाईस, ब्रोमाइड्स, आदि ओषधियोंका-जिनकी सूची बहुत बड़ी है, अंश भी माताके दूधमें पाया गया है।

इसलिये दूध सदा ऐसे ही पशुओंका खाना चाहिये, जो पूर्णतया नीरोग हों। जिन्हें कोई औपसर्गिक रोग न हो ; या जिनके स्तनमें किसी प्रकारका रोग न हो। और जो जंगलोंकी तरह

तरहकी विषैली घास-पत्तियाँ न खाती हों।

बहुतदेरतक रख छोड़नेसे, दूधके गुण क्षीण हो जाते हैं। इसलिये मेरी रायमें दूध खाना चाहिये, तो बिलकुल ताज़ा या खाना ही न चाहिये।

बाज़ारोंमें दूध प्रायः मक्खन निकाल कर बेचा जाता है। ऐसा दूध स्वास्थ्यके लिये उपयोगी नहीं होता।

हमारे देशके नगरोंमें, सर्वसाधारणको प्रायः ग्वाले या हलवाइयोंसे दूध प्राप्त होता है। ऐसे भाग्यशालियोंकी संख्या बहुत थोड़ी है, जो अपने घरमें दूधके लिए गाय-भैंस रख सकते हैं। बाजारमें या ग्वालेसे जो दूध हमें प्राप्त होता है, उसकी शुद्धताके सम्बन्धमें हम बिल्कुल अज्ञान होते हैं। हमें यह मालूम नहीं होता कि, जो दूध हम खरीद रहे हैं वह स्वस्थ गाय-भैंसका दूध है या नहीं? दूधमें पानी मिला है या नहीं और मिला है, तो कैसा और कितना पानी मिला है? जिस पशुका दूध है, वह किस जगह चरता है, और कैसी जगहमें रक्खा जाता है? दूध दुहनेवाले ग्वालेके हाथ, गाय-भैंसके स्तन और दूधका पात्र साफ़ थे या नहीं? दूध दुहनेके बाद कितनी देरतक कैसी जगहमें, कैसे बरतनमें खुले बरतनमें, या बन्द बरतनमें रक्खा था? ऐसा दूध खाने-पीने वाले यदि किसी औपसर्गिक–रोगसे आक्रान्त नहीं हैं तो, हमें उनका सौभाग्य कहना चाहिए। ऐसे दूधसे कुँएका ताजा निर्मल जल कहीं अधिक गुणकारी होता है।

विलायतमें हर एक आदमी दूध नहीं बेच सकता और न दूध बेचनेके लिए अपने घरमें गाय भैंस रख सकता है। जो लोग दूधका व्यापार करना चाहते हैं, उनको गाय-भैंसों के रखने, चरने और स्वास्थ्य-रक्षा करने का उचित और सन्तोष-दायक प्रबन्ध करना पड़ता है। इस सम्बन्धमें सरकार उनको मजबूर करती है। सरकारकी ओरसे गाय-भैंसोंके रहनेके स्थानों, चरनेके स्थानों और उनके स्वास्थ्यकी परीक्षा भी की जाती है। यदि किसी गायको क्षय जैसा रोग होता है, तो वह अन्य गायोंसे अलग रखी जाती है, और उसका दूध नहीं बिकने पाता। दूध दुहने वालों तथा दूधके पात्रोंकी सफ़ाई और शुद्धताकी ओर भी यथेष्ट ध्यान दिया जाता है। गायके स्तन दूध दुहनेके पहले गरम पानीसे अच्छी तरह साफ़ कर लिये जाते हैं। जिस पात्रमें दूध दुहा जाता है, उसका मुँह बहुत चौड़ा नहीं होता। दूध दुहे जानेके बाद बड़े बड़े बरतनोंमें रक्खा जाता है, और इंस्पेक्टर बरतनोंके ताला लगा देता है, फिर दूधके वे पात्र बाजारोंमें भेजे जाते हैं। इन पात्रोंकी चाबी दूध बेचने वालोंके पास नहीं होती। दूध के पात्रमें, नीचे एक नल लगा रहता है, उसीसे दूध निकलता है।

इस देशमें भी यदि इसी प्रकारका प्रबन्ध किया जाय, तो दूधसे होनेवाले अनेक रोगोंसे लोग बच सकते हैं दूधके लिये प्रत्येक नगरमें काफ़ी गोशाला खुलनी चाहिएँ। जिनका

मुख्य-उद्देश सर्व-साधारणको शुद्ध दूध देना हो। वर्त्तमान समयमें कुछ नगरोंमें गोशालायें हैं, परन्तु वे ऐसी नहीं हैं जो नगरमें रहनेवाले सर्व-साधारणकी दूध दहीकी आवश्यकता पूरीकर सकें। उनका उद्देश यद्यपि कसाइयोंके हाथोंसे गायोंकी रक्षा करना, और सर्वसाधारणको शुद्ध दूध देना है, परन्तु दूसरे उद्देशको गौणता दी जाती है। गायें हमारे देशके कोई ६५ फी सदी लोगोंकी जीविकाकी साधन मानी जा सकती है। कसाइयोंसे उनकी रक्षा करना श्लाघनीय और देश-हितकर काम है। तथापि गोशालाओंके अधिकारियोंको सर्व-साधारणके स्वास्थ्यकी उपेक्षा भी नहीं करनी चाहिए। गोशालाओंमें ऐसा प्रबन्ध भी होना चाहिए, जिससे सर्वसाधारणको स्वच्छ, कीटाणु-रहित और गुणकारी दूध मिल सके। बीमार गायोंका दूध बेचा न जाये। ऐसा होनेसे वर्त्तमान गोशालाओंका महत्व बढ़ जायगा।

दूधमें जल मिला है या नहीं? इसकी परीक्षाकी जा सकती है। हम यहाँ कुछ परीक्षायें लिखते हैं।

(१) दूधके एक बूँदको नाखूनपर टपकाइये, यदि दूध शुद्ध होगा तो बूँद गोलाकार होगी।

(२) दूधके एक बूँदको पानीमें छोड़िये। दूध पानीसे वजनदार होता है। पानीमें छोड़नेसे दूधका मुख्य अंश पानीकी सतहके नीचे चला जायगा, और पानीका अंश ऊपर पानीमें मिल जायगा!

(३) दूधकी परीक्षाके लिए लेक्टोमीटर नामका एक यन्त्र आविष्कृत हुआ है। इसके द्वारा दूधकी परीक्षा करनेसे मिश्रित-जलका अंश मालूम हो सकता है। इस यन्त्रके द्वारा परीक्षा करनेकी विधि बहुत सरल है, और इसलिये उसके उल्लेखकी यहाँ आवश्यता नहीं।

किन्तु बहुतसे दूध बेचने वालेभी बहुत चतुर होते है। वे दूधमें यथेष्ट पानी मिलाकर ज़रा भी शकर या बताशा मिला देते हैं। इससे इस यन्त्रके द्वारा दूधमें मिश्रित-जलका परिमाण ठीक मालूम नहीं होता।

दूधकी परीक्षा एक और यन्त्रसे भी की जाती है, उसका नाम लेकेट्सकोप या दुग्ध-वीक्षण यन्त्र है। इसके द्वारा यह जाना जा सकता है कि, दूधमें मक्खनका कितना अंश है? मक्खनका अंश जानने पर यह स्थिर किया जा सकता है कि, दूधमें जल मिला है या नहीं, और मिला है तो लगभग कितना? दूधमें जितने सैकड़े पानीका अंश मिला होगा, उतने ही सैकड़े मक्खनका अंश कम हो जायगा। दूधके साथ शकर मिली होनेपर भी इस यन्त्र-द्वारा परीक्षा करनेमें कोई भिन्नता नहीं होती।

अनेक रासायनिक-विधियों द्वारा दूधकी शुद्धता और मिश्रित जलकी जाँचकी जाती है। परन्तु उनके उल्लेखकी आवश्यकता इस पुस्तकमें नहीं।

मक्खन—मक्खन दूधसे निकाला जाता है। विला-

यतकी अपेक्षा इस देशमें मक्खनका व्यवहार बहुत कम है। यहाँ अङ्गरेज और विलायती चाल-ढाल और रहन-सहनका अनुकरण करनेवाले कुछ एतद्देशीय रोटीके, या अन्य खाद्य-पदार्थोंके साथ मक्खन खाते हैं। किन्तु हम मक्खनको स्वास्थ्यके लिये उतना उपयोगी नहीं ख़याल करते, जितना कि, हानिकारक। क्योंकि मक्खनमें दूधके कीटाणु पाये जाते हैं, और उसमें महीनों रह सकते हैं। मक्खनमें भी पानी, दूध और चर्बी मिला दी जाती है।

घी—दहीमें पानी डालकर उसे खूब मथनेसे, नवनीत ऊपर आ जाता है। इसी नवनीतको छाछसे अलग करके, आग पर चढ़ा देनेसे घी तैयार होताहै। हमारे देशमें साधारणतः नवनीतसे ही घी तैयार किया जाता है। मक्खनकी अपेक्षा घी खाना अधिक उपयोगी है। मक्खनको भी अच्छी तरह पका डालनेसे, घी बन जाता है। और कीटाणु भी मर जाते हैं। घी इस देशके निवासियोंका एक मुख्य खाद्य है। हमारे पूजा आन्हिक आदि शुभ-कृत्योंमें भी घी का प्रयोग होता है। परन्तु देशवासियोंके दुर्भाग्यसे शहरोंमें शुद्ध घी मिलना असंभव सा हो गया है। बाजारोंमें जो घी मिलता है, उसमें प्रायः चर्बी, मूँगफलीका तेल, महुएका तेल आदि मिले रहते हैं। ऐसे घीका प्रचार सरकारको सार्वजनिक-स्वास्थ्यकी हित-दृष्टिसे अवश्य रोकना चाहिये। सर्व-साधारणको भी चर्बी या तेल मिश्रित घीका बायकाट करना चाहिये।

तेल—इस देशमें साग तथा अनेक पक्वान्न सरसोंके तेल से तैयार किये जाते हैं। तेल शरीर पर भी लगाया जाता है। अनेक लोगोंके घरोंमें सरसोंके तेलका ही दीपक जलता है। ग़रीब लोग घीकी एवज़में सरसोंके तेलका ही उपयोग करते हैं। परन्तु खेद है, बाज़ारोंमें शुद्ध तेल भी नहीं मिलता है। उसमें रेंडीका तेल आदि मिला दिया जाता है। बाजारोंमें शुद्ध खाद्य-सामग्री न मिलना बड़े खेद्की बात है।

मांस—अब हम मांसका विषय लेते हैं, जो कितने ही लोगोंके ख़यालमें शरीरको बहुत अधिक शक्ति देता, और रक्तको उत्तम बनाता है। प्यारे पाठक, हम तुमको यहाँ यह स्पष्ट रीतिसे समझायेंगे कि, मांस शरीरमें शक्ति लानेका कारण नहीं है।

यद्यपि मांस ठीक जहर नहीं है तथापि उसमें क्रिएटिन (Creatin) क्रिएटिनिन (Creatinin) सारकोलेक्ट्रिक-एसिड और फासफ़ोरिक-एसिड-साल्ट होते हैं, जो गरमी पहुँचाने और उत्तेजित करनेके रूपमें सारे शरीर पर, खास कर वातरज्जुओं पर बुरा प्रभाव डालते हैं। कुछ दिनोंके लिए मांस खाना छोड़ देनेपर, और फिर एक दिन खाने पर साधारण उत्तेजना और नाड़ियोंकी धड़कन मालूम होगी, तथा रातमें बे-खबरीकी नींद आवेगी। जिस रीतिसे मांस तैयार किया जाता है, वह भी स्वास्थ्यके लिये हानिकर है। चटपटे मसाले जो कि, मांसमें पकाते समय छोड़े जाते हैं, आमाशयकी श्लैष्मिक-कला

(Mucous membrane) को जला देते हैं। और नाड़ियोंको उत्तेजित और अत्यन्त उत्तेजित करते हैं। एक प्रसिद्ध चिकित्सकका कथन है—"बदहज़मीकी बीमारी उसी आमाशयके साथ रहती है, जो मांस और मसालोंसे भरा जाता है।" मांस खानेसे बीड़ी सिगरेट पीनेकी इच्छा भी उदय होती है।

मांस और शराब खाने पीनेके बाद जो, उत्तेजना मालूम होती है, उसे लोग भूलसे शक्तिका चिन्ह समझते हैं। किन्तु उत्तेजक पदार्थोंका उत्तेजन देनेका काम जब ठण्डा पड़ जाता है, तब वही पुरानी कमज़ोरी फिर आ जाती है। यह जानते हुए भी खेद है, कितने ही मांसप्रेमियोंके दिलमें यह बात बैठ गई है कि, मांस खाये बिना स्वास्थ्य, दीर्घजीवन साहस और बल प्राप्त नहीं हो सकता। मांस खानेसे शरीरमें मांसकी वृद्धि होती है, रक्तकी वृद्धि होती है। मांसमें प्रोटीनका अंश अवश्य ही अधिक पाया जाता है, और प्रोटीन खाये बिना स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, शरीर दुर्बल हो जाता है। किन्तु दूध, दाल, रोटी, आदि खाद्य-पदार्थोंसे शरीरको प्रोटीनका पर्याप्त अंश प्राप्त हो सकता है। इसलिये मांस न खाकर दूध, दाल, रोटी आदि खाकर, स्वास्थ्य-रक्षा बहुत अच्छी तरह की जा सकती है।

भारतवर्षमें ऐसी कितनी ही जातियाँ और सम्प्रदाय हैं। जिनमें मांस-भोजनका प्रचार नहीं, यथा महाराष्ट्र-ब्राह्मण, मारवाड़ी, जैन-सम्प्रदाय उत्तर-पश्चिम और मद्रासके ब्राह्मण।

बङ्गाली आमिषभोजी होनेपर भी, बल और क्लेश सहिष्णुतामें किसी प्रकार इनकी बराबरी नहीं कर सकते।

सिंह, बाघका दृष्टान्त देकर अनेक लोग कहते हैं कि, मांस खानेसे ही शरीरमें बल बढ़ता और फुर्त्ती आती है। अवश्य ही सिंह बाघ आदि मांसभक्षी-पशु अत्यन्त बलवान और शीघ्रगामी होते हैं, अनायास ही बड़े बड़े भैसोंको पीठपर लाद कर ले जा सकते हैं। किन्तु दीर्घकाल व्यापी गुरुतर परिश्रमका कार्य हाथी, ऊँट, घोड़ेकी तरह सिंह बाघ नहीं कर सकते। हाथी, ऊँट, घोड़े, सब शाकाहारी हैं। हाथी, ऊँट घोड़े दुर्बल भी बोझ लाद सकते हैं, खींच सकते हैं, और कोसोंतक बोझ लादे हुए या खींचते हुए जा सकते हैं। किन्तु सिंह बाघसे यह काम नहीं हो सकता। जो लोग कहते हैं, कि सिंह, बाघ मांस खाकर बहुत अधिक कूद सकते हैं, उनको यह भी जानना चाहिए कि, वानर, हरिण आदि शाकाहारी प्राणी भी बहुत अधिक कूद सकते हैं।

शाकाहारी और मांसाहारी व्यक्तियोंकी शक्तिकी परीक्षा कुश्ती लड़ाकर, पैदल दौड़ाकर, कई प्रकारसे की गई है, और ऐसी परीक्षाओंमें शाकाहारियोंकी ही विजय हुई है।

सन् १९०८ में लन्दनके वेजीटेरियन एसोसियेशनकी सेक्रेटरी मिस एफ़० आई० लिकल्सने १०००० लड़कोंको केवल शाकाहारपर रक्खा था। लन्दनकी काउण्टी कौंसिलसे उतने ही लड़कोंको मांसाहार दिया जाता था। छः महीनेके बाद, विद्वान डाक्टरोंने इन दोनों विभागके बालकोंके स्वास्थ्यकी

परीक्षा की। उस परीक्षासे यह प्रमाणित हुआ कि, शाकाहारी बालक मांसाहारी बालकोंकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ, अधिक वज़नदार हैं, उनकी त्वचा मांसाहारी बालकोंकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ थी। माँसपेशियाँ अधिक दृढ़ थीं।

दुर्भाग्यवशतः मनुष्य-जाति निर्बल होती जा रही है। यह उत्तेजक पदार्थोंको खा पीकर ही खड़ी है। प्यारे पाठक, मांस, लाभके बदले हानि अधिक करता है। मांस उष्णकारी आहार है। जब तुम बीमार होते हो, और डाक्टरको मालूम होता है कि तुम्हें ज्वर है, तो वह तुम्हें मांस खाने या शराब पीनेके लिये मना करता है। क्योंकि मांस ज्वरको बढ़ा देता है। जो चीज़ रोगीके लिये ही हानिकर है, वह स्वस्थके लिये कैसे हितकर हो सकती है? प्रत्यक्ष स्वस्थावस्थामें जब तुम मांस खाते हो, तब तुम छुपी हुई बुखारकी हालतमें रहते हो, जिसे तुम जान नहीं सकते; क्योंकि तुम उसे शक्तिका लक्षण समझते हो। परन्तु सच जानो, मांस खाते रहनेसे कभी न कभी तुम्हारा स्वास्थ अवश्य बिगड़ जायगा। मांस खानेसे यूरिक-ऐसिड नामका एक विष शरीरमें बढ़ता है। जो लोग मांस शराब आदि खाते पीते हैं उनको मूर्च्छा, गठिया-वात, मृगी, लकवा, दमा; मधुप्रमेह, हिस्टीरिया हिपोकोण्डिया, मेलन-कोलिया, टाइफस, नर्वसफीवर फेफड़ोंमें सूजन (Inflamation of the Lungs) आदि हो जाता है और ऐसे रोगियोंको आराम करना बहुत कठिन होता है, तथा इसमें बहुत समय भी लगता है। बहुत अधिक मांस खानेसे

दाँत भी खराब हो जाते हैं।

प्यारे मांस प्रेमी पाठक! क्या तुमको यह विश्वास है कि, जो मांस तुम खाते हो वह स्वस्थ जीवोंका होता है? शायद तुम्हें यह विश्वास होगा कि, वह स्वस्थ-पशुओंका ही होता है। क्योंकि तुम जानते हो कि, म्युनिसिपेलेटियाँ बेचे जानेवाले मांसकी देखरेख करती हैं। किन्तु वास्तवमें तुम यह नहीं जानते कि कसाई, रोगी पशुको मार कर, उसके रुग्ण अंग-को फेंक देता है, और शेष अंश बाज़ारमें बेचता है। रोग-विज्ञान हमें यह बताता है कि, पशुका कोई भी अंग रुग्ण होने पर उसके समग्र मांस, रक्त और वातरज्जुओंमें रोगका असर रहता है, रोगके कीटाणु रहते हैं। प्राणिधर्म विद्वानोंने यह सिद्धान्त किया है कि, केवल वानस्पतिक आहार ही मनुष्यके पेटमें पच सकता है। एक मनुष्यके पेटमें (Fistula) हो गया था। उसके छेद्से पक्काशयमें होने वाली पचन क्रियाएँ साफ़ दिखाई देती थीं। उससे यह हिसाब तैय्यार किया गया है कि; कौनसा पदार्थ मनुष्यके पक्काशयमें कितनी देरमें पचता है। उस छिद्रसे यह भी देखा गया है कि, वानस्पतिक आहार ही मनुष्यके आमाशयमें पच सकता है। मांस तो केवल गलता रहता है।

मांसका चूहों पर क्या परिणाम होता है,—

इस बातकी परीक्षाकी गई है, और परीक्षामें जो सिद्ध हुआ है वह नीचे दिखाया जाता है।

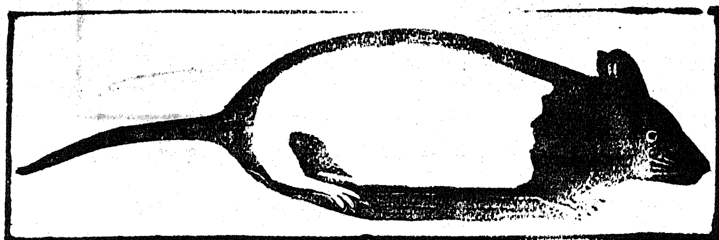
चूहोंकी संख्या	भोजन	उम्र	मृत्यु	वजन (लगभग)	वजन मृत्युके समय	वृक्कोंका वजन
७	घोड़ेका मांस	४-६ महीने	२	१३·३५ ग्राम	१२·५०	१६·४५
६	दूध रोटी	४-६ महीने	...	१२·०२	१२·१२	१२·६५
६	घोड़ेका मांस	३	३	४·१२	४·१२	६·६७
४	मिश्रित भोजन (मांस नहीं)	५	...	२·७५	२·७५	३·१५
७	घोड़ेका मांस	३ सप्ताह	७	·७५	·७५	१·०१
५	बैलका मांस	३ ”	५	·५२	·५२	०·८६
२	”	३ ”	१	·१०	१०	०·१७
८	दूध रोटी	१२ ”	·	१·२०	१·२०	१·५४

ऊपर दिये गये नक्शेसे सिद्ध होता है कि, मांससे वृक्क बढ़ जाते हैं, और मृत्यु भी अधिक होती है।

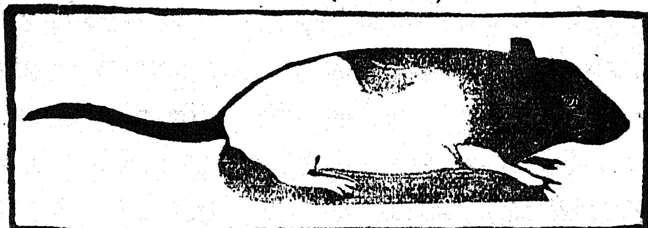
जननेन्द्रिय और सन्तानों पर भी मांसका प्रभाव पड़ता है। चूहोंपर परीक्षा करके यह सिद्ध किया गया है, परन्तु पुस्तक बढ़ जानेके भयसे हम उन परीक्षाओंका फल नहीं लिखते।

२५ चूहोंके बच्चे लगभग एक ही तौलके एक जगह रक्खे गये। उनमेंसे १४ को बैलका मांस और ११ को दूध और रोटी दी जाने लगी। मांस खानेवालोंमेंसे ५ चूहे चार महीनेके भीतर मर गये। बाकी ९ जिन्दा रहे और बढ़ते हुए मालूम हुए; परन्तु दूध-रोटी खानेवाले चूहोंसे उनका वजन कम था। जैसा नीचे दिये चित्रसे विदित होगा।

चित्र नं० ३८ (क)

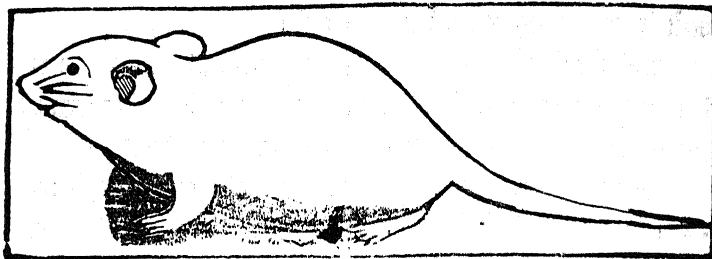


चित्र नं० ३९ (ख)

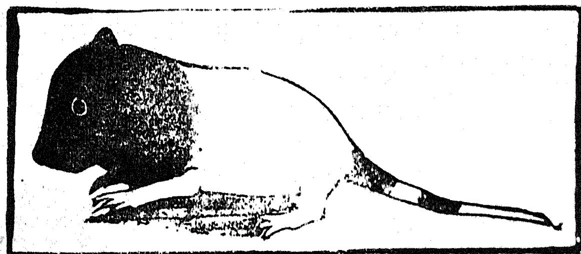


क—को दूध-रोटी और ख को बैलका मांस तीन महीनेतक खिलाया गया। उसका जैसा परिणाम हुआ वह नीचे देखिये—

चित्र नं० ४० (क)



चित्र नं० ४१ (ख)



मांस खाने वाले और दूध-रोटी खाने वाले चूहोंके बच्चे।

क—दूध-रोटी खाने वाले चूहेका बच्चा।

ख—मांस खाने वाले चूहेका बच्चा।

प्यारे पाठक, मांसाहारकी बुराइयोंका यह दिग्दर्शन मात्र है। हम विश्वास करते हैं कि, अब इस आनन्दकारी और उत्तेजक भोजनसे तुम सदा दूर रहोगे। मैंने मांस भोजनके दोष इसलिये नहीं दिखाये हैं कि, उससे स्वास्थ्यको हानि पहुँचती है, बल्कि तुम्हारा यह ख़याल दूर करनेके लिये कि मांस बहुत अधिक पौष्टिक होता है। इस विचारको भी दूर

कर दो कि, कमजोरीके वक्त बहुत अधिक मांस खानेसे शरीरमें फिर नई ताकत आ जाती है।

प्रसिद्ध प्रसिद्ध शरीर-शास्त्र विशारदोंका कथन है कि, मनुष्य अपनी शारीरिक रचनाके अनुसार मांसाहारी है, शाकाहारी नहीं। डाक्टर निकलसका कथन है "नैतिक और मानसिक-विकासमें मनुष्य अन्य प्राणियोंसे श्रेष्ठ है। किन्तु शारीरिक बनावट और उसकी आवश्यकताओंकी दृष्टिसे यह प्राणी है। उसकी तथा फल खानेवाले प्राणियोंके शरीरकी बनावट बहुत कुछ मिलती जुलती है। फल तोड़नेके लिए उसके हाथ होते हैं, खानेके लिए दाँत होते हैं, चबानेके लिये दाढ़ें होती हैं, और पचानेके लिये पक्काशय होता है।"

प्रोफेसर हैकलेका भी कथन है—"मांस खानेवाले प्राणियोंके दाँत, पक्काशय, पञ्जे, और आँतें बतलाती हैं कि, ईश्वरने उसका शरीर मांस खानेके लिये बनाया है, और घोड़ा गाय आदिको घास खानेके लिए।"

डाक्टर आई-एल् निकलसने 'डाइटेटिकक्यौर' नामक अपनी पुस्तकमें लिखा है—"प्राणीका मृत-शरीर खानेकी अपेक्षा शराब पीना अधिक प्राकृतिक है। मनुष्य श्रेष्ठ तभी कहा जा सकता है, जब वह अपने शरीरके लिए अनुकूल भोजन करे। प्राकृतिक-पथसे हट जानेका अर्थ शरीर-स्थितिको बिगाड़ देना है, और यह श्रेष्ठताका लक्षण नहीं। अप्राकृतिक भोजनके परिपाकमें कठिनता पड़ती है, और इससे पचनेन्द्रियाँ निर्बल

हो जाती हैं। कालान्तरमें पचनेन्द्रियोंमें सूजन और रक्तका जमाव भी होता है। बद्धकोष्ठता और अति-उत्तेजनासे आँतें भी बिगड़ जाती हैं। मोटा चरबीदार मांस यकृत् और गुर्दों को नष्ट करता है, इत्यादि।

अप्राकृतिक और रुग्ण--पदार्थ खानेसे (Seurvy)गंडमाला फुफ्फुसरोग, क्षय, चर्मरोग, कैंसर आदि हो जाते हैं। सारांशमें यह कि, मनुष्य-जातिको दुःख पहुँचानेवाले रोगोंमेंसे कोई भी ऐसा रोग नहीं जो, अप्राकृतिक भोजनसे न हो सकता हो। हम अपने दुराचारोंसे ही अपनी हत्या करते हैं।

मितव्ययताकी दृष्टिसे भी मांसाहार शाकाहारसे महँगा है। फिर भी भारतवर्ष जैसे ग्रीष्मप्रधान देशमें मांस जल्दी ही विकृत भी हो जाता है। मांस दो चार दिनभी रक्खा नहीं जा सकता। भारत-वर्षमें ऐसे ग़रीब लोगोंकी संख्या कम नहीं है, जो एक दिनके बने निरामिष खाद्य-पदार्थ बच जानेपर दूसरे दिनके लिये रख छोड़ते हैं। बासी पदार्थ खानेसे प्रायः उनका स्वास्थ्य नहीं बिगड़ता। किन्तु मांस बच जानेपर फेंक देना पड़ता है, अन्यथा बासी मांस खानेसे अनेक रोग पैदा हो सकते हैं।

परिष्कार-परिछन्नताके सम्बन्धमें भी शाकाहार ही मांसाहारकी अपेक्षा श्रेष्ठ स्थान पाने योग्य है। जो लोग मांस खाते हैं, उनके रसोई घरमें मारे गये प्राणियोंकी त्वचा, चर्बी, आँत रक्त, हाड़ आदि चारों ओर फैले रहते हैं और जल्दी विकृत हो

वायुको दूषित करते हैं, घृणा पैदा करते हैं। किन्तु निरामिष भोजन करनेवालोंके रसोई-घरमें तरकारीके छिलके आदि दो दिन भी पड़े रहने पर घृणा नहीं पैदा कर सकते। मांसके सड़ जानेपर जैसी दुर्गन्ध पैदा होती है, वैसी उद्भिज पदार्थोंके सड़नेसे नहीं पैदा होती।

एक अंग्रेज ग्रन्थकारने बहुत ही सुन्दर भाषामें लिखा है:—

"The unperverted tastes of every animal point with unerring certainty to its natural diet. Where ever a decaying carcass taints the air, there will be found the foul creatures that feast on carrion—the hog, the hyena, the wolf, the crow, the burrard, the vulture. Worms and insects finish the feast. The lion and tiger revel in the warm blood of animals they have just slain, but turn away from the carrion."

"Now what are the natural tastes and attractions of man in respect to food? Reader, you shall be my judge. Let me take you by the hand and lead you into this garden. It shall be, if you please, the Garden of Eden. Trees loaded with fruits are around you Vines bending with luscious grapes, beds filled with melons. Here

are apples pears, peaches, plums nectarines, grapes, figs, oranges, bananas, straw-berries, rospberries, and more than I can count. Here also are esculent roots and metritions seeds, fields of waving grain or golden maize, potatoes, beets, turnips. The air is filled with delicious odours; every object is full of beauty. Happy children are gathering fruits or plucking flowers. All around are life and harmony, swectness and purity, peace and happiness. The farm, the garden, the orchard, the vineyard, are full of beautiful associations, and not one object, if it properly belongs there, is offensive to the most refined taste."

"Now let us look upon another picture. A fatid sickening odour fills the air; Shrieks and moans of agony salute you; the gutters rnn full of blood, but you must enter. A raging bull, with his frenzied eye glaring upon his murderers, is dragged up with horrid bellowing; a dull blow falls upon his skull, and the blood gushes from his throat. The strong, honest ox, who

has toiled all his life for man, is murdered. The timid sheep, with painful bleatings, now feels the knife at his throat, and gasps away its innocent life. Calves torn from their mothers, are hung up by their feet, their veins opened, and allowed to slowly bleed to death, that the veal may be white, drained of its blood, and tender from the long death—agonies. Around you are the opened carcasses of these, your follow creatures and your friends—the floor is covered with their blood and entrails."

"What sense is gratified by such a scene as this ? Is it beautiful to the sight, pleasant to the ear, grateful to the smell, or does it awaken any calm or happy feelings ?''

"If a man wishes to take a walk with one he loves, would he go to a garden, or a sloughter—house ? If he wishes to send her a present, would it be a basket of fruits or a string of sausages ?''

"Man loves the vegetable world, and finds it full of beauty and attraction and gratification,

because it is his. His natnre is adopted to it, it is adopted to all his wants, and all his natural desires. It is not so with carnivorous and carrion animals. What cares the lion, or tiger, or wolf, or hyena, or burard, for ornage groves and fig trees, orchards and vines, fields of waving corn, or granaries with their rich winter-stores ?"

"Flesh-eating physiologists and physicians have contended on the necessity, if not the beauty, of eating animal food, but all experience, all science and all philosophy are arrayed against them. At this moment and in all past time, nine-tenths of the whole humau race have lived on a vegetable diet, either eating no flesh at all or making it the rare exception. The great mass of the labour of the world is done on a vegetable diet. In Japan, China, the whole East Indies, Persia, Turkey, all Europe save the sea coasts, all Africa and central Amreica, flesh is seldom or never eaten by the poor, and over much of this territory, not even by the rich. The finest

forms, the best teeth, the strongest muscles, the most active limbs in the world, are fed on a purely vegetable diet; while with regard ot entellectual and moral developoment, it is a curious and enteresting fact that there can scarcely be mentioned a great philosopher or poet of ancient or modern times who has not given his testimony, either in his openions or his practice, in fovour of a vegetarian diet.

केवल हिन्दी जाननेवाले पाठकोंके लिए इसका संक्षिप्त सार यहाँ दिया जाता है।

"प्राणी प्रकृतिकी दी हुई प्रकृतिके अनुसार ही, खाद्य चुनते हैं। यदि कहीं सड़ी-गली दुर्गन्धमयी मृत-देह पड़ी होती है, तो हम वहाँ गीध, कौवे, गीदड़ आदि मांस खानेवाले प्राणियोंका ताण्डव-नृत्य देखते हैं। उनके खानेसे जो कुछ बच रहता है, उसे छोटे छोटे कीड़े खा जाते हैं। सिंह, व्याघ्र आदि प्राणी, प्राणियोंको स्वयम् मारकर उनका रक्त-पान करनेके लोलुप होते हैं। गलित मृत-देह नहीं छूते।"

"खाद्य सम्बन्धमें मनुष्यकी स्वाभाविक प्रवृत्ति क्या है? इसी विषयका विचार करना है। पाठक, आप ही हमारे विरारक हैं। चलिये, मैं आपको इस बागमें ले चलता हूँ। वृक्ष सेव, बेर, अञ्जीर, नारङ्गी आदि फलोंसे लदे हैं। यहाँ कन्द मूल भी

हैं, अनाजोंके भी पुष्पित फलित पौधे हैं। वायु सुगन्ध पूर्ण है। लड़के आनन्दसे फल एकत्र कर रहे हैं, और फूलोंको चुन रहे हैं। चारों ओर जीवन है, ऐक्य है, मधुरता है, पवित्रता है, शान्ति है, और आनन्द है।"

"अब दूसरा दृश्य देखिये। वायु दुर्गन्ध-व्याप्त है। घृणाके भाव मनमें लहराते हैं। खूनकी नालियाँ बह रही हैं। परन्तु आप जरूर भीतर चलिये। एक चीखता हुआ बैल लाया गया। उसका सिर धड़से अलग कर दिया गया। गलेसे खूनके फव्वारे फूट निकले। जिस बलवान निरीह बैलने मनुष्यके लिये अपनी जिन्दगी भर कमाई की थी, वही मार डाला गया। मिमियाती हुई भेड़के सिरपर छुरी फिरी, और उसका प्राण-पखेरू उड़ गया। बछड़े अपनी मातासे अलग कर दिये गये, पाँव बाँधकर लटका दिये गये। उनकी रक्त-वाहिनी नलियाँ खोल दी गईं, जिससे उनका मांस सफेद हो रक्त रहित हो, और दीर्घकाल व्यापी पीड़ासे मुलायम हो। तुम्हारे आस पास, तुम्हारे इन पालतू प्राणियों और मित्रोंकी लाशें हैं, फर्श उनके खूनसे तरबतर है, आँतोंसे ढका है।"

"ऐसे दृश्यसे किस इन्द्रियकी तृप्ति होती है? क्या यह दृश्य नेत्ररञ्जक है, कर्ण सुखद है, सुगन्ध पूर्ण है, मनमें शान्ति या आनन्द पैदा करता है?

"यदि आप अपने प्रिय-बन्धुके साथ घूमने जाना चाहते हैं, तो बताइये बागमें घूमना पसन्द करेंगे या कसाई खानेमें? यदि

आप किसी मित्रको डाली भेजना चाहते हैं, तो फलोंकी डाली भेजना पसन्द करेंगे या मांस की ?"

"प्रकृतिने मनुष्यके लिये शाकपात दिया है, और वह शाक पातको पसन्द करता है और उसीमें वह सुन्दरता, आकर्षण और तृप्ति पाता है। मनुष्यका स्वभाव ही शाकपातपर झुकता हैं, और उससे ही उसकी सारी आवश्यक और स्वाभाविक इच्छायें तृप्त होती हैं। ऐसा मांसाहारी प्राणियोंके साथ नहीं है। क्या सिंह, व्याघ्र, भेड़िया आदि मांसाहारी जीव, नारंगियों-के कुञ्ज, अंजीरोंके वृक्ष, उपवन, वाटिकायें, अन्नसे हरे भरे खेत या अन्नके कोठोंके लिये पर्वाह करते हैं ?"

"मांसाहारी तत्वज्ञानी और वैद्योंने मांस खानेकी आवश्यकताका समर्थन करनेके लिए बहुत सा वादविवाद किया है। लेकिन जगत्के सब विद्यमान शास्त्र, अनुभव, और तर्कशास्त्र इसके विरुद्ध हैं। भूतकालमें और वर्तमानमें भी जगत्की नवांश मनुष्य जाति शाकपात पर जीवित है। या तो वे बिलकुल ही मांसाहार नहीं करते, अगर करते भी हैं तो कभी कभी। जगत्की अधिकांश मज़दूर–जाति शाकपात पर ही निर्भर है। जापान, चीन, समस्त पूर्वी द्वीपान्तर, पेरिस, टर्की, योरूप भर, समुद्र तटवासियोंको छोड़कर और समस्त आफ्रीका और मध्य अमेरिकामें गरीब मनुष्य मांसाहार कभी कभी करते हैं। बहुत करके कभी नहीं करते हैं। और इन देशोंके बहुतसे हिस्सोंमें धनवान भी मांसाहार नहीं करते। जगत्के जितने सुडौल और

पुष्ट देहवाले, मजबूत दाँतवाले, अच्छे स्वास्थ्यवाले, और चपल-इन्द्रियोंवाले मनुष्य हैं, वे सब शाक पातपर ही पले हैं। मानसिक और शुद्धाचरणके विषयमें तो यह एक अद्भुत और मनोरञ्जक बात है कि, जगतमें ऐसा कोई तर्क-ज्ञानी या कवि भूत-कालमें या वर्तमानमें न होगा, जिसने सात्विक-भोजनका समर्थन अपनी रायसे या स्वयम् अनुभवसे न किया हो।"

जेहर्नका कथन है–"अन्य देशोंमें, यदि मैं इस प्रकारका कानून पास करा सका, जिससे कसाइयोंकी दूकानोंका मांस खाना बन्द हो जावे तो, मैं समझूँगा कि मैंने मनुष्य-जातिका ऐसा सर्वोत्कृष्ट उपकार किया, जैसा आजतक गत ५०० वर्षोंमें पार्लामेंटके सुधार या कानूनोंसे नहीं हुआ। इसका जो श्रेष्ठ फल होगा, वह कहा नहीं जा सकता। जो कोई व्यक्ति इस प्रकारका कानून पास करा सकेगा, उसकी कीर्त्ति युगयुगमें गाई जायगी कि, उनके समान मनुष्य-जातिका उपकार किसीने नहीं किया। इससे शराब पीनेकी आदत भी छूट जायगी।"

ईसाइयोंका धर्म-ग्रन्थ बाइबल भी, मांस भक्षणका निषेध करता है। उसमें एक जगह लिखा है—सृष्टिके आदिमें प्रथम स्त्री-पुरुष आदम और हव्वाको ईशाने यह उपदेश दिया है–देखो अन्न पैदा करनेवाले पौधे ओर फल पैदा करनेवाले वृक्ष मैंने तुमको दिए हैं; ये ही तुम्हारे (Meat) खाद्य पदार्थ हैं।"*

* Behold I have given you every herb bearing seeds and trees giving foods, they shall be your meat.

बाइबलमें यह भी लिखा है—"एक वक्त बहुतसे ईसाइयोंको मांस खाते देखकर ईसा मसीहको बहुत क्रोध हुआ, और ईसा-मसीहने रोग फैलाकर उनको दण्ड दिया।"*

"बाम्बे क्रानिकल ५ जून १९१९ में लिखा था—"

(१) "Five persons suddenly died in Bombay after eating beaf."

अर्थात्—गो-मांस खानेके बाद, अचानक ५ मनुष्योंकी मृत्यु हो गई।

(२) "The amount of human suffering which is caused by eating poisoned or diseased-meat is positively distressing Almost every day one reads in the paper of sickness and death resulting from this unhealthy habit."

(३) "The alarming increase of cases of sprue (at Igatpuri) is quite probably due to the abominable quality of our meat" Times of India July 11, 1921.

(४) "When will the public apprehend the significance of the fact that it is the practice, all

* While the flesh was yet between their teeth, ere it was chewed the wroth of cord was kindled against the people and the Lord smite the people with a very great plenge.

over this country, to send animals that the afflicted with disease, to the butcher to save them from dying of their maladies ?" Herald of the Golden Age London December 1903.

(५) There were in the united states America, last year about 1,3000 cases of acute ptomaine poisoning. Nearly all were due to the use of meats. Fully 3,000 of these died within 24 hours after the ingestion of the posion. But while one dies of acute ptomaine poisoning, a thousand die of chronic ptomaine poisoning.

(६) There is clear evidence in medical practice of the part played by meat in causing Dyspepsia, Enteritis and Appendicites ; in favouring the out break of Typhoid and Dysentery, in forming the rallying ground of germs of Tuberculosis and Cancer :—"Some Popular foodstuffs exposed by Dr.—Paul Carton —

इस जगत्में जो विख्यातनामा महज्जन हुए हैं, उनमेंसे अधिकांश शाकाहारी थे। विख्यात दार्शनिक पिथगोरस और उनके अनुयायी शाकाहारी थे। प्रख्यातनामा दार्शनिक प्लेटो और सेनिका भी शाकाहारी थे। निउटनने कभी मांस नहीं

खाया। अफलातून, अरस्तू और मिल्टन भी शाकाहारी थे। मांसाहारका प्रचार दिनों दिन सभ्य कही जाने वाली मनुष्य-जातिमें बढ़ता जा रहा है। यह शुभ लक्षण नहीं, बड़ा ही बुरा लक्षण है। देशकी अधोगतिका और भी बुरा भावी-दृश्य दिखाता है। मांसाहार सभ्य-जातिका नहीं, पिशाचोंका भोजन है। इससे मनुष्य-जातिकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक क्षीणता होती जा रही है। प्यारे पाठक, अब भी समय है, चेतो और मांस खाना छोड़ो। "यक्ष रक्ष पिशाचानं मद्यं मांसं सुरासवं।'

संसारके प्रायः सब देश उन्नतिके मार्गमें बहुत अग्रेसर हो चुके हैं। पर हमारा देश, जो पहिले सबसे आगे था, पीछे पड़ा घिसिट रहा है। हम लोगोंके सामने राष्ट्र और समाजकी उन्नतिका प्रश्न उपस्थित है। इसलिए हमको ऐसे ही पदार्थ खाने पीने चाहिए, जिससे देशकी वर्तमान और भावी-जनता शक्ति-वान् रह सके। देशकी शक्ति बढ़ सके, जो राष्ट्रोन्नतिकी सहा-यक हो।

यदि तुम औसत दर्जेके गृहस्थ हो या परिश्रम करके गुज़र-बसर करते हो, या तुम्हारी ऐसी स्थिति है कि, तुम किफायत-सारी और अन्य रुकावटोंसे मनमानी चीजें खा-पी नहीं सकते, तो शायद यह सोचते होगे कि, यदि तुमको अमीरोंकी तरह क़ीमती पदार्थ खानेको मिलें तो तुम अधिक बलिष्ठ और स्वस्थ हो सकते हो, किन्तु स्मरण रक्खो—सादा खाना अधिक सुपच

होता है।

भोग-विलासके पदार्थ जैसे शराब मांस आदि रोगोंके मूल कारण होते हैं। धनवान् लोग औसत दर्जेके मनुष्योंकी अपेक्षा प्रायःअधिक रोग–ग्रस्त देखे जाते हैं, क्योंकि वे प्रायः ऐसी चीजें खाते-पीते हैं, जो कि होती तो क़ीमती हैं; किन्तु सुपच और अनुत्तेजक नहीं।

केवल सादगी परिमितता और संयमसे तुम्हें सुख, सन्तोष तथा जीवन का अमोल-धन स्वास्थ्य प्राप्त हो सकेगा। सादे और अनुत्तेजक भोजनसे दीनसे भी दीन मनुष्य अपने पक्काशय को स्वस्थ और सुरक्षित रख सकता है, तथा अगणित रोगोंसे बच सकता है।

कितने ही लोग संयम-नियमके साथ नहीं रहते, और इसी-लिए उनके पक्काशयकी अवस्था सदा बिगड़ी रहती है। कितने ही रोगोंका कारण, ढूँढने पर भोजनका नियमित रूपसे न पचना पाया जाता है। कितने ही प्रकारके बात रोग, मूत्राशय (Bladder) यकृत् और बृक्कोंके रोग-शरीरका भारीपन, तथा (Hypochondica) पचन-शक्तिके बिगड़नेके कारण होते हैं। शारीरिक-रसोंका दुष्मिश्रण रक्तकी कमी और उसका शिथिल प्रवाह, संयम रहित-भोजन और अस्वस्थ-पक्काशयके कारण होते हैं।

एक बार किसी महाजनने फादरनिप नामके एक प्रसिद्ध चिकित्सकके पास जाकर अपने स्वास्थ्यका दुखड़ा रोया। उस-

ने अपने भोजनकी अनयमितताका भी पूरा विवरण सुनाया। फादरनिपने कहा-'तुम्हारे लिए दवा-दारूकी तो आवश्यकता है ही नहीं, आवश्यकता है तुम्हारे लिए एक दूसरे पक्काशयकी।'

हमारा जीवन खानेके लिए नहीं है, किन्तु जीवित रहनेके लिए खाते हैं। दुर्भाग्य—वश ऐसे लोगोंकी संख्या भी कम नहीं है, जिनका पेट ही उनका देवता है, और जो खाने के लिए ही जीवित हैं। रोग और अकाल-मृत्यु उनके असंयमके अवश्यम्भावी फल हैं। वे खाते नहीं हैं वे अपनी हत्या करते हैं; अपने ही दाँतों से वे अपने लिए कब्र खोदते हैं।

कब कितनी बार और कैसे खाना चाहिये?

शरीर-धर्म-शास्त्रज्ञोंके अनुसन्धानसे यह सिद्ध हुआ है कि, पक्काशयके काममें कुछ नियमितता है। आमाशयिक रस नियमित समयमें निकलता है। ठीक समय पर खाना खानेकी रीति से इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। आमाशयिक रस आमाशयमें वास्तवमें सर्वदा तैयार होता है, किन्तु जब भोजन पेटमें रहता है, तब वह अधिक बनता है। अर्थात्—भोजनके नियमित समय में आमाशयिक रस अधिक परिमाणमें बनने लगता, और पक्काशयकी दीवारोंके खिंचनेसे क्षुधाका भाव मालूम होता है। यदि ऐसे समयमें पक्काशयमें भोजन नहीं पहुँचता, तो आमाशयिक रस आँतोंमें चला जाता है, और क्षुधाका भाव नष्ट हो जाता है। इसीको हम क्षुधा-शान्त होना कहते हैं। क्षुधा शान्त होने पर यदि कोई व्यक्ति खाना खाता है—फिर भी वह जल्दी

जल्दी और मामूलीसे अधिक पिछले आहारको पूरा करनेके लिए खाना खाता है, तो उसके दुष्परिणाम उसे मालूम होने लगते हैं। आनन्दकारी भाव उत्पन्न होनेके बजाय, जो क्षुधामें खाना खानेसे मालूम होता है, उसके सिरमें दर्द, सुस्ती, तबीअतका भारीपन, कै होनेका भाव, पक्काशयमें बोझ आदि सा मालूम होता है।

इसलिए प्यारे पाठक! स्वास्थ्य के लिहाज़से तुमको भविष्य में भोजनके समयका पाबन्द होना चाहिए।

स्वस्थ-मनुष्य, जिनको शारीरिक–परिश्रम विशेष नहीं करना पड़ता, किन्तु मानसिक-परिश्रम अधिक करना पड़ता है, एक दिनमें तीन बार भोजन कर सकते हैं। उनको सवेरे ७—८ बजे कुछ कलेवा या जलपान करना चाहिए। किन्तु यह ख्याल रहे कि, खानेकी चीजें हलकी और सुपच हों। किन्तु बिस्तरेसे उठते ही खाना खाना ठीक नहीं। बिस्तरेसे उठकर नित्य-क्रियासे निवृत्त हो, खुली हवामें कसरत या शारीरिक परिश्रम करना चाहिए। जिससे समस्त शरीर भोजनके लिए आवश्यकता प्रकट करे।

दोपहरका भोजन १२—१ बजे क्षुधाके अनुसार करना और तीसरा-शामको ७—८ बजे करना चाहिए। शामका भोजन सुबहके भोजनके सामन ही हलका और थोड़ा होना चाहिए।

जो लोग बहुत अधिक शारीरिक-परिश्रम करते हैं, लड़के जो बढ़ रहे हैं, और वे लोग जो कि रोगसे मुक्त होकर स्वास्थ्य

प्राप्त कर रहे हैं, वे दो बारसे अधिक अर्थात् सवेरे १० बजे और शामको ४ बजे खाना खा सकते हैं, किन्तु यह ख़याल रहे कि, मुख्य-भोजन और माध्यमिक-भोजनमें तीन घण्टेका अन्तर रहे, जिससे पहिले के भोजनके पचनेमें बाधा न पड़े।

उन लोगोंके लिए, जिनको बदहज़मी की शिकायत रहती है, तीन बार खाना बहुत अधिक है। उनको सिर्फ़ दो बार खाना, खाना चाहिए। एक सबेरे ११ बजे और दूसरा शामको ५ बजे। डाक्टर निकल्स अजीर्ण-रोगियोंको सबेरे ८ बजे और शामको ४ बजे खानेकी शिफारिश करते हैं। किसी भी दशामें दोपहरके थोड़े ही समयके अन्तर में, अधिक भोजन दो बार न करना चाहिए। डाक्टर निकल्स अपनी 'डाएटेरिक क्योर' नामक पुस्तकमें लिखते हैं—"सभी अजीर्ण-रोगी यदि २४ घण्टे में एक या अधिकतर दो बार खाना खानेसे सन्तुष्ट रहें, तो आरोग्य हो सकते हैं।

जब तुम्हें भूख न हो कभी भोजन न करो।

यह नियम कर लो कि, जब भूख न हो खाना न खाओ। बिना प्यास लगे पानी न पीओ। भोजन के समय भूख होनेके विचार से पहिले, भोजनके समय इस बातका ख़याल रक्खो कि, दूसरे भोजनके दो-या तीन घण्टे पहिले भूख मालूम होने लगे।

ऐसे पदार्थ मत खाओ, जिसको तुम अपने पूर्व अनुभवसे जानते हो कि, वह तुम्हारी प्रकृतिके मुवाफिक नहीं। ऐसी बातों में अनुभव सबसे अच्छा मार्गदर्शक है। वह भोजन . जिसे तुमने

परन्तु खा
होती, ज
लेता।

मनु
ठोस और
कदके मनु
को बालक
सुस्त आद
वाले मनु
वालेको अ
फतार रोग
प्यारे पाठ
करो।

सदा
प्रबन्ध करो,
हों, और जि
जो उसकी
अनाजको अ
स्थितिके अ
चरपरी चट
यदि खाओ
पोषक बनाने

माना है, यदि तुम्हारे सामने लाया जाय,
वह तुम्हारी प्रकृतिके योग्य नहीं।
ष प्रयोजनीय है कि, तुम्हें एक बारमें खाना
: तुम बहुत ही थोड़ा खाते-पीते हो, तो तुम
-पदार्थका पर्याप्त परिमाण नहीं देते। यदि
ग्राते हो, तो तुम अपने पक्काशय और सारे
रहुँचाते हो। अपनी शारीरिक और मान-
पर पाचन-क्रियाका भारी भार रखकर;
शान्त करनेके लिये, जितना खाना आवश्य-
त खाओ। भूख शान्त होनेपर प्रकृति स्वयं
ा निर्देश देती है। उसकी इस आज्ञा की
र्ग तथा अजीर्णसे पैदा हुए अन्य रोग हैं।
को, जिनको अजीर्णका रोग है, अपने लिए
हुए कि, बिलकुल तृप्त हो जानेके पहिले
जब पक्काशयपर पचन-क्रियाका अधिक
की दशा सुन्न-अङ्ग की सी हो जाती है;
ड़ता है। अधिक भोजनके लिये अधिक
चाहिए। परन्तु आमाशयिक-रस मामूली-
है। इस बातका तुमको अफ़सोस न
एक या दो बार ही भोजनकरके जीवन

को अपनी क्षुधा शान्त करनी चाहिए,

किन्तु खानेकी इच्छा न खोनी चाहिए। तुम यहाँ पूछ सकते हो कि, आपका ऐसा कहनेका मतलब क्या है ? क्या क्षुधा और खानेकी इच्छा एक ही भावका नाम नहीं ? नहीं, ये दोनों भिन्न भिन्न भाव हैं। खानेकी इच्छा वह है जो किसी पदार्थके स्वादका आनन्द लेनेके लिये हो। स्वस्थ-व्यक्तिको क्षुधा न होनेपर भी खानेकी इच्छा रहती है, किन्तु वह भूख न होनेसे अपनी इच्छा नष्ट नहीं करता। क्षुधा पक्काशयकी दीवारों या झिल्लियोंके संकोचसे पैदा होती है। बहुतसे मनुष्योंमें यह सङ्कोच शिथिल होता है। इसलिये उनको क्षुधाका बहुत ही थोड़ा भाव मालूम होता है। दूसरे मनुष्योंमें यह सबल होता है, और इसलिए उनको क्षुधाका विशेष भाव मालूम होता है।

इसलिये वह हमारी क्षुधा है, 'खानेकी इच्छा' नहीं, जिसे हमें शान्त करना चाहिए। यदि तुम भूख शान्त होनेपर खाना न खानेका नियम कर लो, तो तुम्हारी खानेकी इच्छा बनी रहे। यदि तुम इस सलाहपर ध्यान नहीं दोगे, तो तुम्हारी वह इच्छा प्रत्येक बार खाना खानेके बाद नष्ट हो जायगी। यह इस बातका बहुत ही अच्छा उदाहरण है कि, तुमने बहुत अधिक खा लिया है। अधिक खाना खानेकी आदत हो जानेपर तुमको यह शिकायत होती है कि, तुमको खाना खानेकी इच्छा नहीं। इस इच्छाको लानेके लिये दूसरी बार भोजन कम करो, और जबतक इच्छा न मालूम हो इस क्रमको जारी रक्खो।

कुछ रोगोंसे पीड़ित होनेमें मनुष्यको क्षुधा तो रहती है,

परन्तु खानेकी इच्छा नहीं। और यह इच्छा तबतक नहीं मालूम होती, जबतक मनुष्य प्राकृतिक-स्वास्थ्यको नहीं प्राप्त कर लेता।

मनुष्यको अपने शरीरके तौलका २० से २५ हिस्सा तक ठोस और द्रव पदार्थ खानेकी जरूरत पड़ती है। इसलिए भारी कदके मनुष्यको मामूली कदके मनुष्यकी अपेक्षा और वय-प्राप्त-को बालकी अपेक्षा अधिक भोजन चाहिए। मिहनती आदमीको सुस्त आदमीसे अधिक भूख मालूम होती है। निठल्लू बैठे रहने वाले मनुष्यकी अपेक्षा शारीरिक या मानसिक परिश्रम करने वालेको अधिक भोजनकी जरूरत होती है। चार-पाईमें गिर-फ्तार रोगीकी अपेक्षा स्वस्थ-मनुष्य अधिक खाता है। इसलिए प्यारे पाठक, अपनी जीवन-स्थितिके अनुसार भोजन किया करो।

सदा एक प्रकारका भोजन मत किया करो। किन्तु ऐसा प्रबन्ध करो, जिससे तुम्हारे भोजनमें भिन्न भिन्न प्रकारके पदार्थ हों, और जिससे तुम्हारे शरीरको वे सब पदार्थ प्राप्त हो सकें, जो उसकी बनावट और पोषणके लिये जरूरी हैं—साग और अनाजको अपने भोजनकी नींव समझो। ऐसे भोजनमें अपनी स्थितिके अनुसार घी, दूध, आदि शामिल करो। मसाले या चरपरी चटनियोंको भोजनके पदार्थोंमें मत मिलाओ, फिर भी यदि खाओ ही तो बहुत ही कम। भोजनको स्वादिष्ट और पोषक बनानेके लिए, शक्कर या नमक मिलाओ, किन्तु नमक

मिलाओ तो बहुत थोड़ा। शरीर-यन्त्रके चलनेसे दिन-भरमें जो चीज़ मल-रूप होकर शरीरसे बाहर निकल जाती है, उसको पूरा करनेके लिए, तुम इन चीज़ोंमें पोषणका अधिक अंश पाओगे।

खाद्य-पदार्थोंको धीरे धीरे और अच्छी तरह दाँतोंसे कुचल कर खाओ। खानेके समय जल्दी मत करो। भोजन करनेकी रीति सदोष होनेके कारण, कई प्रकारके अजीर्ण रोग हो जाते हैं। भोजनको अच्छी तरह न कुचलने, उसमें थूकको अच्छी तरह न मिलने देने, जल्दीसे कौर निगल जानेका दोष लोगोंमें अधिक पाया जाता है। अँग्रेजीमें एक बहुत पुरानी कहावत है, कि "जो खाद्य पदार्थ अच्छी तरह चबाकर खाये जाते हैं, उनकी पाचन-क्रिया आधी हो जाती है।" जब भोजन दाँतोंसे अच्छी तरह कुचले बिना खाया जाता है, तब पक्काशय पर पचन-क्रियाका केवल दूना ही भार नहीं पड़ता; बल्कि आमाशयिक रसके लिए भोजनको पूर्ण करना कठिन हो जाता है। बड़े और खुरखुरे अंश कोमल कलाको उत्तेजित (Irritate) करते हैं। प्रायः वे लोग जिनके दाँत बुढ़ापेके कारण गिर जाते हैं, नकली दाँत लगवाते हैं, और इस तरह दाँतोंके न होनेसे होनेवाले अजीर्णसे अपनेको बचाते हैं। जब भोजन दाँतोंसे कुचला जाता है, तब थूक अधिक परिमाणमें निकलता और भोजनमें मिलता है। रोटीका श्वेतसार, शकर और डेक्स-ट्रिनमें बदल जाता है। शकर हो जानेसे वह आमाशयमें

जल्दी पचता है। यदि भोजनमें थूक अच्छी तरह नहीं मिलता, तो वह आमाशयकी पचन-क्रियाके उपयुक्त नहीं होता, वह पक्वाशयको भाररूप हो जाता है। उससे शरीरको पोषण प्राप्त नहीं होता, जिसकी शरीरको बहुत ज़रूरत होती है। यही नहीं, बल्कि जो भोजन पचनेन्द्रियोंमें अच्छी तरह नहीं पचता; वह शरीरके लिए विष-रूप होता है। यकृत् और वृक्क मलके साथ उसे भी शरीरसे अलग कर देते हैं। इसलिए तुमको अच्छी तरह दाँतोंसे कुचल कर खाना खाना चाहिए। कड़े पदार्थको अच्छी तरह दाँतोंसे कुचलना ही पड़ता है। दाँतोंसे कुचलनेसे उनमें थूक मिल जाता है। इससे वे असुविधाके बिना निगले जा सकते हैं। खानेमें जल्दी करनेसे भोजनके पदार्थ न अच्छी तरह दाँतोंसे काटे और कुचले ही जाते हैं, और न उनके खानेमें स्वाद ही आता है। इसलिये खानेमें जल्दी न करो।

खाने-पीनेकी चीजें न बहुत अधिक गर्म और न बहुत अधिक ठण्डी होनी चाहिएँ। यह भोजनके सम्बन्धका एक उपयोगी नियम है। इस नियमका सदा पालन करो।

विशेष मानसिक या शारीरिक-परिश्रमके अनन्तर ही फ़ौरन खाना न खाओ। इससे पाचन-क्रियामें बाधा पड़ती है। अधिक ज़ोश, चिन्ता या भयके समय अम्ल-पित्त पैदा होनेमें बाधा पड़ती है; इसलिये ऐसी अवस्थाओंमें खाना न खाना चाहिये।

खानेके बाद भी किसी प्रकारका शारीरिक या मानसिक

परिश्रम न करना चाहिये। खानेके बाद थोड़ा सो जाना अच्छी बात है। डाक्टर नीलका कथन है—"स्वस्थ-मनुष्य भोजनके बाद स्वभावतः आँखें बन्द कर लेता है। और तुम देखोगे कि, पशु भी ऐसा करते हैं।" किन्तु खाना खानेके बादकी झपकी एक घण्टेसे अधिक न रहनी चाहिए। अन्यथा फुर्त्ती और प्रसन्नताके बजाय भारीपन और थकावट सी मालूम होगी। अजीर्णके रोगियोंके लिए मध्यान्ह-भोजनके बाद झपकी लेना ठीक नहीं। उनके लिये खाना खानेके बाद, एक मील टहलना अधिक उपयोगी है। दो पहरके खानेके बाद, ज़रा भी झपकी लेनेसे उनकी तबीअत भारी मालूम होने लगेगी।

ब्यालू अर्थात् रातके भोजनके बाद ही सो जाना उपयोगी नहीं। ब्यालू और सोनेके समयमें दो या तीन घण्टेका अन्तर रहना चाहिए। ब्यालूमें जितना ही अधिक खाना खाया जाय, उतना अधिक ब्यालू और सोनेके समयमें अन्तर होना चाहिए।

खानेके बाद किसी व्यक्तिको फिर खानेके लिए मत दबाओ या लाचार करो।

रसोई-घर—भोजन स्वच्छ-स्थानमें पकाना और खाना चाहिए। चौका लगाकर भोजन बनाने और खानेकी प्रथा बहुत ही अच्छी है। इससे धूल, मिट्टी, जिनमें रोगोंके कीटाणु रह सकते हैं, उड़कर भोजनको दूषित नहीं कर सकते। रसोई-घरमें ऐसी व्यवस्था भी करनी चाहिए, जिससे मक्खियाँ या कीट-पतङ्ग भीतर न घुसने पावें। प्रायः मक्खियाँ

भोजनकी सामग्रियों पर बैठकर उनको अनेक प्रकारके संक्रामक रोगोंके कीटाणुओंसे दूषित कर देती हैं। ऐसे दूषित-पदार्थ खानेसे हैजा, पेचीस, टाइफाइड, अतिसार, आदि संक्रामक रोग हो जाते हैं। हलवाइयोंकी दूकानोंमें जो मिठाइयाँ खुले बरतनोंमें रक्खी जाती हैं, और जिनपर मक्खियाँ और ततैये भिनका करते हैं, सड़ककी धूल उड़कर जाती है, वे खाने-योग्य नहीं होतीं।

रसोई-घरका द्वार जालीदार किँवाड़ या चिकसे बन्द होना चाहिए। इससे मक्खियोंसे रक्षा हो सकती है। रसोई-घरमें मकड़ियोंके जाले न होने चाहिएँ।

रसोई-घरमें ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे सूर्यका प्रकाश उसके भीतर पहुँच सके, धुआँ जल्दीसे बाहर निकल जाय और अच्छी तरह वायुका सञ्चार होता रहे।

रसोई घर बहुत साफ़ रहना चाहिये। उसे रोज़ पोतना चाहिए।

रसोइया—रसोइया मैला कुचैला न होना चाहिए। उसे स्नानसे पवित्र रहना और साफ़ कपड़े पहिनना चाहिए। रसोइयोंको सप्ताहमें दो बार हज़ामत बनवाना और नाखून कटाना चाहिए। रसोइया अच्छी रसोई बनानेमें बहुत चतुर होना चाहिए। अनाड़ी और मैले कुचैले रसोइयेकी बनाई रसोई न स्वादिष्ट ही बनती, और न शरीरके लिए बहुत उपयोगी ही होती है। इसलिए तनख्वाह चाहे अधिक देना पड़े परन्तु

रसोइया होना चाहिए रन्धनकलामें चतुर। स्वस्थ और स्वच्छता प्रेमी। रसोइयोंमें मिष्ठ-भाषण और विनय भी होना चाहिए।

हम हिन्दू-गृहस्थोंकी गृह-लक्ष्मियोंसे बढ़कर हमारे शरीरका हित चाहनेवाला और मधुर, स्वादिष्ट रसोई-बनाने वाला दूसरा रसोइया नहीं होता।

पकाना—लोग अन्न और शाक-भाजी प्रायः पका कर खाते हैं। पकानेसे ये पदार्थ स्वादिष्ट; मुलायम और क्षुधाकारक बन जाते हैं। इससे शरीरमें उनका परिपाक पूर्णतः और सहजमें होता है। किन्तु हमें दाँतोंसे काटने-कुचलनेका भरपूर परिश्रम लेना भूल न जाना चाहिए। पकानेसे कीटाणुओंका भी नाश हो जाता है। कच्चा श्वेतसार, अच्छी तरह पच नहीं सकता। पकानेसे सेल्यूलोजकी, जो हमारे शरीरमें नहीं पचता, तहें फट जाती हैं, और श्वेतसार निकल आता है। इसलिये भोजन पकानेकी क्रिया स्वास्थ्यकी दृष्टिसे बहुत उपयोगी है।

हमारे देशमें जिस रीतिसे भात तैयार किया जाता है, वह ठीक नहीं। इस देशमें प्रायः घर घर भातसे माँड़ निकालनेकी रीति है। चाँवलमें एक तो वैसे ही आमिष-जातीय अंश कम होता है। दूसरे माँड़ निकालनेसे उसके आमिष-जातीय अंशका प्रायः दसवाँ हिस्सा निकल जाता है। माँड़ निकालनेसे शर्करा और लवण जातीय पदार्थ भी कुछ निकल जाता है। इसलिये भात ऐसा तैयार करना चाहिए, जिससे माँड़ निकालनेकी जरूरत न हो। इस विषयमें अपनी गृह-

लक्ष्मियों या रसोइयोंको शिक्षा देनी चाहिए। कुछ दिन ही अभ्यास करने पर उनको इस बातका अनुभव हो सकता है कि, कितने पानीमें कितना चावल, छोड़नेसे माँड़ निकालनेकी ज़रूरत नहीं होती।

भात और दालको अलग अलग न पकाकर खिचड़ी पकाना अधिक उपयोगी है।

रोटी दोनों ओरसे अच्छी तरह सेकनी चाहिए। सेकते समय इस बातकी सावधानी रखनी चाहिए कि, वह जलने न पाये। जली या कच्ची रोटी खाने योग्य नहीं होती। क्योंकि वह शरीरका आवश्यक पोषण नहीं कर सकती।

दाल खूब अच्छी तरह पकाना चाहिए, जिससे वह पानीके साथ अच्छी तरह मिल जाय। तुअरकी दाल ज़रा देरसे पकती है। इसलिये कोई कोई मनुष्य उसे जल्दीके मारे अच्छी तरह नहीं पकाते। ऐसी दाल खाना स्वास्थ्य और शरीरके लिए उपयोगी नहीं होता।

भोजन-पात्र—यहाँ हम भोजन पकानेके पात्रोंका भी विचार करते हैं। पीतल और ताँबेके पात्रोंमें भोजन पकाना बहुत अच्छा नहीं। यदि पकाया ही जाय, तो इन धातुओंके पात्रोंको बहुत साफ़ रखना चाहिए। खट्टे पदार्थ खासकर पीतलके पात्रमें न पकाना चाहिए। क्योंकि खटाईसे पीतलके घुलने और द्रवाद्य-पदार्थमें मिलनेका भय रहता है। ताँबेके पात्रोंमें कलाई करा लेना अच्छा होता है। टीन, निकल और

अल्यूमीनियमके पात्रोंमें, भोजन पकाना बहुत ही कम आपत्तिकारक है। भोजन-पात्रोंको सदा राखसे माँजना चाहिए, सड़ककी मैली और कीटाणु-युक्त धूलसे नहीं।

सफ़ाई—खाद्य-पदार्थ बहुत स्वच्छता के साथ पकाने चाहिएँ। इस देशकी स्त्रियाँ बहुधा कलछीसे खाद्य-पदार्थ चला कर जमीन पर रख देती हैं, और फिर उसी कलछीसे खाद्य-पदार्थ चलाती हैं। दाल पकाते वक्त उस पर जो बरतन ढक दिया जाता है, उसे कोई काम पड़ने पर खींच कर जमीन पर रख देतीं, और अनन्तर ढँक देती हैं। इससे खाद्य-पदार्थ दूषित हो जाते हैं। रसोईके पात्र, थाली, कटोरा, आदि सदा स्वच्छ रखने चाहिएँ; और उनमें खाद्य परोसनेके पहिले उनको गर्म पानीसे धो लेना चाहिए। पात्र पोंछनेका कपड़ा बहुत साफ़ होना चाहिए। खाद्य-पदार्थोंको मैले हाथ या मैले कपड़ेसे भी बचाना चाहिए। हाथ से, खानेकी चीजें कोई नहीं परोसनी चाहिएँ। कारण हाथके नाखूनोंमें मैल और कीटाणु रह सकते हैं, जो भोजनको दूषित कर सकते हैं। इसीसे शास्त्र में लिखा है—

"लवणं व्यंजनं चैव, घृतं तैलं तथैवच।
लेह्यं पेयं च विविधं, हस्त दत्तं न भक्षयेत्॥"

अर्थात्—नमक, व्यञ्जन, घी, तैल और चाटने, पीनेकी चीजें हाथसे दी हुई न खानी चाहिएँ। सारांश, खाद्य-पदार्थोंको मैले-पनसे बिलकुल बचाना चाहिए।

खाद्य-पदार्थों की रक्षा—भोजन ताज़ा करना चाहिए, परन्तु यदि किसी कारण-वश खाद्य-पदार्थ, सम्पूर्ण या कुछ उसी समय उपयोगमें न आ सकें तो उसको हिफ़ाजतके साथ ढँक कर रखाना चाहिए। गन्दी-वायु, धूल, मिट्टी, कीड़े, मकोड़ों से, उसे दूषित होनेसे बचाना चाहिए।

अन्य कतिपय बातें—(१) सड़े, गले, या सूखे पदार्थ (मेवे छोड़ कर) खाने योग्य नहीं होते। ऐसे पदार्थोंमें भोजन के गुण नष्ट हो जाते हैं। उनमें रोगोत्पादक कीटाणु भी रह सकते हैं। इसलिए ऐसे पदार्थ खाना स्वास्थ्यके लिए बहुत अनुपयोगी है।

(२) भोजन सदा प्रसन्न और एकाग्र मनसे करना चाहिए। उस समय मनमें किसी प्रकार की चिन्ता, ईर्ष्या, द्वेष, आदिको स्थान न देना चाहिए।

(३) भोजनके समय पानी बहुत थोड़ा पीना चाहिए। भोजनके समय बहुत अधिक पानी पी लेनेसे पाचक रस पतले पड़ जाते हैं, इससे उनकी शक्ति क्षीण होती है।

(४) भोजन करनेके बाद दाँतों और मसूढ़ोंको खूब साफ़ कर लेना चाहिए। तमाखू खाने वालेके दाँतोंके बन्धन ढीले पड़ जाते हैं। इससे खाद्य-पदार्थोंके अंश या रेशे उनके बीचमें अटक जाते हैं। यदि वे अलग नहीं किये जाते, तो वहीं सड़ते हैं, और रोग पैदा करनेके कारण बनते हैं।

सातवां अध्याय.

स्वास्थ्यके लिये हमें क्या पहनना चाहिए?

पोशाक।



स्त्र पहननेसे, हमारे शरीरको कई प्रकारके लाभ पहुँचते हैं। हमारा शरीर सर्दी और गर्मीसे बचा रहता है, उसका नमीसे भी बचाव रहता है, आसपासकी वस्तुओंके साधारण उपयोगमें उसे किसी प्रकारकी हानि नहीं पहुँचती। उसे एक प्रकारका सौन्दर्य्य प्राप्त होता है, तथा लज्जा-निवारण होता है।

इस अध्यायमें हमें मुख्यतः वस्त्र-सम्बन्धी विवेचन करना है। किन्तु, तरह तरहकी पोशाकोंके गुण-दोष बतलाना सरल नहीं है। समग्र संसारमें 'रुचिर्वैचित्र्य' का मसला नज़र आता हैं। अर्थात्—सबकी रुचि एक सी नहीं दिखाई देती। जिस वस्तुको एक व्यक्ति पसन्द करता है, उसे ही दूसरा व्यक्ति नापसन्द करता है। जिस तरह भोजनमें प्रत्येककी रुचि भिन्न भिन्न होती है, वैसे ही वस्त्रोंके सम्बन्धमें भी समझिये। अच्छी और बुरी चालोंके सम्बन्धमें भी बहुत कुछ कहना है। एक आदमी भीतर और बाहर ऊनके कपड़े पहन सकता है,

किन्तु और लोग नहीं। बहुतसे लोग सनका कपड़ा भीतर पह-नते हैं, और बहुतसे साफ़ किये हुए कपासका। इसलिये आरोग्य-शास्त्रके अनुकूल सबकी चाह, समान और पर्याप्त रूपसे पूर्ण करनेवाले वस्त्रोंका निश्चय करना सन्देहपूर्ण है। ऊन, कपास, सन आदिके बने हुए वस्त्रोंके गुण-दोषका विचार बुद्धिमान अपनी इच्छानुसार करते रहें। मैं बुद्धिमान नहीं, सादे विचारका आदमी हूँ, और मैं अपने अनुभवसे कह सकता हूँ कि, वस्त्रोंके सम्बन्धमें सबकी रुचि समान होना सम्भव नहीं है।

जो लोग अपनी तन्दुरुस्तीका जियादः फ़िक्र रखते हैं, उनको मेरा यही उपदेश है कि, सब अच्छे वस्त्रों या पोषाकोंकी परीक्षा करके सबसे अच्छेको काममें लाओ।

आरोग्य-शास्त्रके नियमानुकूल हमारे पहननेके वस्त्र प्रवेश-नीय और झिरझिरे होने चाहियें। इस सम्बन्धमें डा० मैक्स-वान पेटनकोफरका कथन है—"हमारी त्वचा इसलिए बनाई गई है कि, हमेशा उसका वायुसे संसर्ग बना रहे। हमारे कपड़ोंसे वायुका संसर्ग नहीं रुक जाना चाहिए। वायुके संसर्ग से बचना वस्त्र पहननेका उद्देश्य नहीं है, बल्कि हमारी त्वचा पर सरदी गरमीका असर कम करना है।"

हम त्वचासे भी साँस लेते हैं, और फेफड़ोंसे भी। तथापि त्वचा-द्वारा साँस लेनेकी क्रियाका हमें ज्ञान नहीं होता। हम त्वचासे आक्सिजन भीतर खींचते हैं, और कार्बोनिक-ऐसिड-

गेस बाहर निकालते हैं। रोमकूपोंके भीतर रक्त और वायुमण्ड-लकी हवाका विनिमय (अदल-बदल) हो जाता है।"

त्वचा भी शरीरका मल बाहर निकालती है। वह त्वचाके चिकने पदार्थोंको सिवेसिक-एसिडको तथा गर्मी और दहन-क्रियासे उत्पन्न हुए पदार्थों आदिको बाहर निकाल देती है।

रासायनिक-परिवर्त्तनसे बचे हुए विषैले पदार्थ त्वचा-द्वारा बाहर किये जाते हैं। अनुभवसे यह जाना गया है कि, इन पदार्थोंको शरीरमें जमा होने देना बहुत बुरा है। अतः त्वचाका कार्य रोक देना बहुत बुरा है, और इसका बहुत भयङ्कर परिणाम होता है।

इसलिए हमारे वस्त्र ऐसे होने चाहिएँ, जो त्वचाकी श्वा-सोच्छ्वास–क्रियामें बाधा न पहुँचावें। उसे रोक न दें; बल्कि त्वचा तक हवा पहुँचानेके लिए और त्वचाको शरीरका मला-दि निकालनेके लिए, मार्ग खुला रहे।

यदि हम इसी दृष्टिसे आजकलकी पोशाकोंके सम्बन्धमें विचार करें, तो कहना पड़ेगा कि, अधिकांश पोशाकें उपयुक्त नहीं होतीं।

गर्मीके मौसममें जब हम अपना कुरता खोलने लगते हैं तो हमें गर्म, खुश्क और बँधी हुई हवा मालूम होती है, जिससे घबराहट मालूम होने लगती है। इससे यह प्रकट होता है कि, शरीरकी भाप हानिकारक वायुके रूपमें कुड़तेके नीचे जमा हो जाती है। वह बहुत सघन बने हुए हमारे कुरते और बाहरके

कपड़ोंमेंसे बाहर नहीं निकलने पाती। त्वचासे निकलनेवाली वायु-रूपी भाफका मार्ग गाढ़े कपड़े रोक देते हैं। ऐसे वस्त्र पसीनेसे तर होते ही फूलकर, अप्रवेशनीय हो जाते हैं। जिससे और भी जियादा हानि पहुँचती है।

ऊन या सर्जके वस्त्र भी, किसी न किसी अंशमें बुरे ही होते हैं। बाजारोंमें इतने मोटे और भारी ऊनी कपड़े मिलते हैं, जो न तो हवाको त्वचा तक पहुँचने देते हैं, और न त्वचामेंसे निकलनेवाली गैसोंको बाहर निकलने देते हैं।

इससे यह सिद्ध होता है कि, ऐसे वस्त्र स्वास्थ्यको हानि पहुँचाते हैं। जब त्वचा-द्वारा श्वास-प्रश्वासका काम बहुत ही कम होता है, तभी शरीर और कुरतेके बीचकी जगह भाफसे भर जाती है, और नीचेका गाढ़ा कपड़ा पसीनेसे तरबतर होकर देहसे चिपक जाता है। कभी कभी पसीनेकी नमी ऊपरी वस्त्र तक भी जा पहुँचती है, और उसकी भी दशा नीचेके वस्त्र जैसी हो जाती है।

मोटे वस्त्र पहननेसे या तो नमीका भाफ़ होना बन्द हो जाता है, या बहुत कुछ घट जाता है। इससे शरीरके चारों ओर ठण्डे भापकी दुर्गन्ध फैली रहती है, जो नाना प्रकारके रोग पैदा करती है। इससे शरीरके प्राकृतिक कार्य भी न्यूनाधिक रूपसे अव्यवस्थित हो जाते हैं।

हमारी त्वचा भी उष्णता-मानको ठीक रखनेकी एक साधन है। यह काम त्वचाको कपड़ोंसे लपेटने या कसकर

बाँधनेसे नहीं होता। यदि पोशाक ढीली और सछिद्र है, तो उससे साधारणतः शरीर गर्म रहेगा। तापक्रमके परिवर्त्तनसे शरीरकी रक्षा होगी, और त्वचा होकर शरीरकी कुछ गरमी बाहर निकल जायगी। खूब मोटे कपड़ोंसे शरीरको गर्म रखनेके कारण ही ठण्ड लग जानेका डर रहता है। कारण ठण्ड हमें तभी दबाती है, जब हम खूब गरम रहते हैं। जब हम ठण्डे रहते हैं, तब ऐसा बहुत कम होता है।

चिड़ियोंकेपर तथा पशुओंके बाल उनकी त्वचाको तापक्रमके परिवर्त्तनसे बचाते हैं, किन्तु वायुका मार्ग नहीं रोकते। हमारी पोशाकें भी ऐसी ही होनी चाहिएँ।

हमारी पोशाकोंमें निम्न-लिखित गुण होने चाहिएँ।

(१) शरीर गर्म रहे।

(२) उष्णताकी निर्वाहकता होती रहे।

(३) अंग-प्रत्यङ्गोंके परिचालनमें कठिनता न पड़े।

(४) त्वचा तक हवा नियमित रीतिसे पहुँचे।

(५) शरीरको मैल, धूल आदिसे बचावे।

(६) शरीरसे निकलनेवाली भापका मार्ग खुला रक्खे। इनमेंसे अधिकांश गुण उन सूती और सनके कपड़ोंमें होते हैं, जो सछिद्र होते है। इसके अतिरिक्त वे त्वचाकी नमी और चिकने प्रत्राही पदार्थको भी सोखते हैं।

यदि हम ऊनके गुणोंकी ओर देखते है, तो वह ऊपरी वस्त्रके लिए ठीक जँचता है। नीचे पहननेके लिए ऊनी वस्त्र

उपयुक्त नहीं होता। फिर भी यथासम्भव कोट-आदिके लिए भी सछिद्र ऊनी-वस्त्र पसन्द करना चाहिये।

कपड़ोंकी पसन्दगीमें आबहवा, तापक्रम, ऋतु, उम्र, लिङ्ग, धर्माचार और रिवाजका भी विचार करना पड़ता है। मल्लाह, मछुआ आदि अधिकतर भीतर और बाहर ऊनी कपड़े पहनते हैं। उनको यह मालूम हो गया है कि, उनके लिये वनस्पतिके रेशोंके कपड़े लाभदायक नहीं है, क्योंकि उनके पहननेसे ठण्ड लग जानेका डर रहता है। समुद्रकी गीली हवा उनके वस्त्रोंको भिगो देती है, जिससे ऊनका उत्तेजक दूषण जो उसमें सूखी अवस्थामें विद्यामान रहता है, बिलकुल नष्ट हो जाता है। ऐसे लोगोंको ऊनी कपड़े पहननेसे त्वचाकी उत्तेजना नहीं मालूम होती। अरबके लोग ऊनी चोंगा पहनते हैं, जो उनके चारों ओर लटकता रहता है। वह न तो वायुका आवागमन ही रोकता है, और न बहुत जियादा गरमी ही सोखता है।

नाजुक-बदन, बीमार और बुड्ढे मनुष्य बरसात या ठण्डके मौसममें ऊनी या रेशमी वस्त्र भीतर भी पहन सकते हैं, किन्तु वस्त्र पतला और सछिद्र होना चाहिये। जवान और बलवान मनुष्योंके लिए, जो जियादा गरमी पैदा कर सकते हैं, हर ख़यालसे सूती कपड़े ही अच्छे होते हैं।

स्वास्थ्यकी दृष्टिसे यहाँ साफ़ा, पगड़ी, टोपी, आदिका विचार करना भी आवश्यक है। सिरके वस्त्रों पर ही, अधिकतर गंजका दोषारोपण किया जाता है। स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुष

ही अधिकतर गंजे देखे जाते हैं। यद्यपि यह सच है कि, गंज कितने ही अन्य कारणोंसे हो जाता है, किन्तु इसका प्रधान कारण सिरके वस्त्र पगड़ी, साफ़ा, आदि हैं।

औरतोंके सिर पर हलकी पतली साड़ी पड़ी रहती है, जिससे हवा सिरकी त्वचा तक पहुँचती रहती है, इसीसे बिरली ही स्त्रियाँ गंजी देखी जाती हैं। यद्यपि सिरको खुला रखना ही स्वास्थ्य-प्रद है, तथापि फैशन, देशकी रिवाज और आबहवाका खयाल करना भी ज़रूरी है। बङ्गालियोंमें नंगे सिर रहनेका आम-रिवाज है। इसीसे बिरले ही बङ्गाली गञ्जे देखे जाते हैं। भारतके अन्य प्रान्तोंमें नंगे सिर रहनेका रिवाज नहीं है। किन्तु यथासाध्य नंगे सिर रहनेकी आदत डालना बहुत ही अच्छा है। क्योंकि बालोंकी बढ़ती, और जड़ोंपर हवा और प्रकाशका बहुत अच्छा असर पड़ता है। वास्तवमें बङ्गालियोंका यह रिवाज स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अनुकरणीय है।

साफा और पगड़ी पहननेसे वायुका संसर्ग सिरको समग्र त्वचासे नहीं होता, जिससे बालोंकी जड़ोंकी भाफ बाहर नहीं निकलती, और सिरके अग्रभागमें रक्तका बहाव कम हो जाता है। रक्तका बहाव कम हो जानेसे, बालोंकी जड़ोंको यथेप्सित पोषक-तत्व प्राप्त नहीं होते, जिससे बाल झड़ने लगते हैं। अतएव साफा और पगड़ी पहनना स्वास्थ्यकर नहीं है। साफ़ा और पगड़ीकी तरह प्रचलित-टोपियाँ भी गञ्ज पैदा करती हैं। पतले कपड़ोंकी देशी टोपियाँ स्वास्थ्यकी दृष्टिसे बहुत

अच्छी होती हैं। किन्तु उनके पहननेका प्रचार बहुत कम और हेय हो गया है। यह बड़े दुःखकी बात है।

वस्त्रोंका बदलना—यह देखा जाता है कि, जो वस्त्र त्वचासे संस्पृष्ट रहता है, वह शरीरका बहुत सा हानिकारी मल जो पसीनेके रूपमें निकलता है, सोखता है। मल संस्पृष्ट हो जानेसे उसके छिद्र बन्द हो जाते हैं, और वह दुर्गन्धयुक्त हो जाता है। इसलिए नीचेके वस्त्रोंको शीघ्र बदलनेकी ज़रूरत होती है। शीतऋतुमें, नीचेके वस्त्रको हफ्तेमें एक बार बदलना चाहिये। क्योंकि इस ऋतुमें पसीना बहुत ही कम निकलता है। किन्तु ग्रीष्म-ऋतुमें, जब त्वचाकी श्वसन-क्रिया बढ़ी रहती है, यथासाध्य नित्य नीचेका वस्त्र बदलना चाहिए। ग्रीष्म-ऋतुमें नीचेका वस्त्र नित्य बदल देनेसे स्वास्थ्य का वृद्धि-विकास अच्छा होता है। इस ऋतुमें नीचे पहननेके लिए कमसेकम दो वस्त्र रखनेकी ज़रूरत पड़ती है। नीचेका एक वस्त्र उतार कर, पानीसे स्वच्छ करना चाहिए, और दूसरा वस्त्र पहनना चाहिए। दूसरे दिन पहने हुए वस्त्रको भी पानीसे साफ़ करना चाहिए, और धुले हुए वस्त्रको काममें लाना चाहिये।

हिन्दुओंमें नित्य स्नान करके धोती बदलनेका नियम है। इस नियम पर धर्मका अटूट सिक्का लगा है। किन्तु वास्तवमें त्वचासे संस्पृष्ट रहनेवाले सब वस्त्रोंको नित्य बदलनेकी जरूरत होती है, केवल धोती ही नहीं। हमारे आचार्योंका मत भी

ऐसा ही है।

रङ्ग—हल्के प्राकृतिक रंगके कपड़े पहनना अच्छा होता है। कारण वे गहरे और खासकर काले रंगके कपड़ोंकी अपेक्षा, कम गरमी खींचते और निकालते है।

बिस्तर आदि—बिस्तरोंको सूखा और गरम रखना बहुत आवश्यक है। ठण्डा बिस्तर नमी पैदा करता है। वह शरीर और हवामें से नमी खींचता है। नम बिस्तर बू मारने लगता है। जो मनुष्य ऐसे बिस्तर पर सोता है, उसे एक तो दूषित वायु साँस लेना पड़ता है, दूसरे उसके शरीरकी गर्मी खिंच जानेके कारण उसकी शक्ति भी क्षीण होती है। इससे उसका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।

सोनेका बिस्तर रोज धूपमें डाल देना अच्छा है। इटाली के निवासियोंके बिस्तर दिन भर धूपमें पड़े रहते हैं। उनकी यह चाल अनुकरण करने योग्य है।

हमें हमारे जीवनका तीसरा हिस्सा बिस्तर पर बिताना पड़ता है। इसलिए हमारे स्वास्थ्य पर बिस्तरका बहुत असर पड़ता है। स्वास्थ्य-लाभके लिए बिस्तरको साफ़ रखना भी बहुत आवश्यक है। गद्देको मैलसे बचानेके लिए, उस पर सदा चादर बिछाना चाहिए। गद्देपरकी चादरको कमसे कम एक हफ्तेमें बदल देना चाहिए। इसी तरह तकियेके गिलाफ़को भी प्रति सप्ताह बदल देना उपयोगी है। ग्रीष्म-ऋतुमें ओढ़ने और बिछानेके चादरोंको हर तीसरे रोज़ बदल देना चाहिए। शीत-

ऋतुमें ऊनी कम्बल, जो छेददार, पतले और हलके होते हैं, ओढ़ना अच्छा होता है।

रातके वक्त सिर ढक कर सोनेकी आदत शरीरके लिए बहुत हानि-कारक है। यह आदत लड़कपनसे पड़ती है। छोटे बच्चे जब किसी कारणसे रुष्ट होकर रोने लगते हैं, तो लोग उनको तरह तरहके डर दिखा कर, शान्त करनेकी चेष्टा करते हैं। इस से उनके कोमल हृदय पर डरका सिक्का जम जाता है, और वे डरके मारे सिर ढककर सोते हैं। बड़े होने पर भी, उनकी यह आदत नहीं छूटती। यह आदत बहुत ही ख़राब है। इसलिये बचपनसे ही छोटे बच्चोंको इस बुरी आदतसे बचाना चाहिए। प्राप्त-वयस्कोंको भी इस आदतको छोड़नेकी चेष्टा करनी चाहिए। ठंडके मौसममें सिर खुला रहनेसे ठंड जरूर मालूम होती है। परन्तु ठंडका असर हम रातकी टोपी पहन कर सहजमें दूरकर सकते हैं।

मोजे और जूते—पाँव शरीरमें एक मुख्य भाग है। वह शरीरमें रक्त बाँटने वाला एक मुख्य अंग है। बहुतसे लोगोंको यह शिकायत होती है कि, उनके पाँव ठंढे और गीले रहते है। इससे यह सिद्ध होता है कि, पावोंके लिए उपयुक्त मोजे और जूते नहीं मिलते। आज कल जाली दार मोजे बहुत कम मिलते हैं।

यहाँ ग्रीष्म और वर्षाऋतुमें मोजे पहनने की ज़रूरत नहीं रहती। किन्तु विलायतमें, जो एक ठंडा देश है, बारहों महीने

पावोंको ठंडसे बचाने के लिए मोजे पहनना पड़ता है। वहाँ की देखा देखी यहाँ भी बारहों महीने मोजे पहननेका रिवाज फैल रहा है। वहाँ और यहाँ की आबोहवाका अन्तर कोई नहीं देखता, यह बड़े खेदकी बात है! विलायतमें बारहों महीने मोजा पहनना स्वास्थ्यप्रद है, किन्तु यहाँ नहीं। ग्रीष्म ऋतुमें यहाँ मोजा पहनना अनावश्यक ही नहीं हैं, बल्कि स्वास्थ्यके लिए हानिप्रद भी है। यहाँ हमें केवल शीत-ऋतुमें पाँवों को ठंडसे बचानेके लिये मोज़ा पहनना चाहिये।

आजकल रँगे हुए और पालिश किये हुए जूते जो बाजारोंमें मिलते हैं, वे स्वास्थ्य-वर्द्धक नहीं होते। उनसे वायु पावोंकी त्वचा तक नहीं पहुँच सकता, और पावोंसे निकलनेवाली भाफको बाहर आनेके लिये मार्ग नहीं मिलता।

पादत्राणके लिये खड़ाऊँ सबसे अच्छा होता है, किन्तु इस नकलची युगने खड़ाऊँ पहननेका रिवाज उठा दिया है, और लोगोंने बूटोंको अपना लिया है।

आजकल कुछ लोग चप्पल पहनने लगे हैं। चप्पल पहनना अवश्य स्वास्थ्य-वर्द्धक है। हम चप्पल पहननेकी सिफारिश करते हैं।

यथासाध्य चमड़ेके जूते नहीं पहनना चाहिए। जूते ऐसे पहनना चाहिए, जिनका तला चमड़ेका हो, और ऊपरी भाग टाट, किरमिच, ऊनया कपड़ेका। ऐसे जूते अलबत्ता टिकाऊ नहीं होते, परन्तु स्वास्थ्यकर होते हैं।

आठवां अध्याय.

हानि-कारक पदार्थ।

तम्बाकू ।



न् १४६२ के नवम्बर महीनेमें कोलम्बसने क्यूबा-द्वीप-की तलाशमें अपने दो मल्लाह भेजे थे। उन लोगोंने वापस आकर उसे आश्चर्यकी अनेक बाते सुनाईं। उन आश्चर्यकी बातोंमेंसे, तम्बाकूका व्यवहार भी एक था। उन लोगोंने कोलम्बससे कहा "क्यूबाके जङ्गली-मनुष्य कुछ पत्ते इकट्ठे कर मरोड़ते है, मरोड़े हुए पत्तोंका एक सिरा मुँहमें रखते है और दूसरे सिरेपर आग लगाकर नाक और मुँहसे धुआँ छोड़ते हैं।" तम्बाकूके व्यवहारकी बुरी आदतका यह पहला दृश्य था, जिसे सभ्य-जातिने देखा। वही आदत अब प्रायः मनुष्य मनुष्यमें व्याप्त हो रही है।

तम्बाकू सूँघनेका व्यावहारिक मूल— यह मालूम होता है कि सन् १४६४ में कोलम्बसने अमेरिकाकी जङ्गली-जातियोंको तम्बाकू सूँघते भी पाया था। रूसके पेन नामक एक फकीरने, जो कि कोलम्बसके साथ था, लिखा है,— "वे पत्तियोंका चूर्ण करते, और सूराखदार एक लकड़ीके द्वारा उसे साँसके साथ खींचते हैं। लकड़ीका एक सिरा नाकके भीतर और दूसरा चूर्णपर रखते हैं।

तम्बाकू खानेका व्यावहारिक मूल—सन १५०३ में जब स्पेनवाले पारागायके तटपर उतरे, तब वहाँके बहु-संख्यक निवासी उनका सामना करनेके लिये ढोल बजाते, पानी फेंकते पत्तियाँ चबाते, और पत्तियोंके रससे मिला थूक स्पेनवालोंकी ओर फेंकते निकले। पत्तियाँ और किसी वृक्षकी नहीं, तम्बाकूकी थीं। तम्बाकूकी पत्तियाँ चबानेका उनका उद्देश्य यह बतलाया जाता है कि, थूकमें मिला हुआ तम्बाकूका ज़हरीला रस उनके यहाँ घुस आनेवालोंकी आँखोंपर पड़े, और वे देख न सकें। इसके व्यवहारका पूर्व-उद्देश्य रक्षा-साधन था। किन्तु अब तम्बाकू खानेका उद्देश्य स्वास्थ्यनाशक कहा जा सकता है।

पहले पहल अमेरिकावालोंने जङ्गली-जातियोंसे तम्बाकूका व्यवहार सीखा था। अनन्तर उसका प्रचार यूरोपमें हुआ। मुगल-सम्राट् जहाँगीरके शासन-कालमें यूरोपियनोंसे इसका व्यवहार भारतीयोंने सीखा।

प्यारे पाठक, यदि तुम तम्बाकू खाते, पीते या सूँघते हो तो खाने पीने या सूँघनेके पहले ठहर जाओ, और सोचो कि क्या बुद्धिमान् और सभ्य-मनुष्य जातिको, उस कर्मकी, जो नासमझ जङ्गली जातियोंका है, नकल करके रुपया बर्बाद करना, समय नष्ट करना, और अपना स्वास्थ्य बिगाड़ना उचित है?

तम्बाकूमें निकोटिन नामक ज़हर होता है, जो सूखी पत्तियों-को भट्टीमें चढ़ाकर निकाला जाता है। आधसेर तम्बाकूके विषसे

३०० आदमियोंकी हत्या की जा सकती है। निकोटिनका एक बूँद कमरेके फर्शपर टपका देनेसे कमरे भरका वायु विषाक्त हो जाता है।

त्वचाके द्वारा विष-प्रयोग--तम्बाकूका विष बहुत तीव्र होता है। त्वचाके ऊपर उसकी गीली पत्तियोंका लेप लगानेसे भयङ्कर लक्षण प्रत्यक्ष होते हैं। यदि सिगार खोल डाला जाय, और उसकी पत्तियोंका लेप पेटकर लगाया जाय तो बेहद जी मचलाने लगे। कै करनेके लिए यह तरकीब निकाली गई थी। युद्ध-कालमें डरपोक सिपाही बीमार बननेके लिए अपनी बाँहके नीचे, तम्बाकूकी पत्तियाँ दबाये हुए पाये गये हैं।

जिस चीज़का ऊपरी लेप ही ऐसा भयानक होता है, उस चीज़का रस या धुआँ क्यों न हानिकारक होगा? तम्बाकूके धुएँमें निकोटिनके सिवा प्रूसिक-ऐसिड, कारबोनिक-ऐसिड आदि अन्य विष भी मिले रहते हैं।

फेफड़ोंके द्वारा विष-प्रवाह—उड़नेवाला विष साँस के द्वारा जितना शीघ्र शरीरमें प्रभाव डाल सकता है, उतना शीघ्र अन्य किसी मार्गसे नहीं। कारण कि फेफड़ोंमें कोई चौदह सौ वर्ग फीट आयतनकी कला होती है, जो गैसोंको ग्रहण कर लेती है। हम पीछे लिख आये हैं कि शरीरका समग्र रक्त फेफड़ोंमें शुद्ध होनेके लिए तीन मिनटमें आता है। इससे फेफड़ोंकी कलामें तम्बाकूका विष पहुँचते ही वह रक्तमें मिलकर

तीन मिनटके भीतर ही शरीरके समग्र भीतरी अवयवोंको विषाक्त कर देता है। तम्बाकू पीनेसे केवल तमाखू पीनेवालेका ही स्वास्थ्य नहीं नष्ट होता, बल्कि पास बैठे हुए लोगोंके स्वास्थ्यको भी धक्का पहुँचाता है। क्योंकि तम्बाकूका ज़हरीला धुआँ, हवामें मिलकर साँसके द्वारा उनके शरीरके भीतर जा पहुँचता है।

खाने और सूँघनेके समय जब तम्बाकूका सम्पर्क कलासे होता है, तब उसके विषका शोषण उसी प्रकार होता है, जैसा त्वचा पर लेप लगानेसे, किन्तु बहुत शीघ्रताके साथ। खानेमें थूकके साथ पेटके भीतर गये हुए विषका शोषण होता है।

तम्बाकूके विषका प्रभाव—पहले पहल तम्बाकू खाने-पीनेसे वान्ती होती तथा सिरमें चक्कर आता है। यह तम्बाकूके विषत्वका परिचायक है। शरीरमें तम्बाकूका विष बहुत अधिक व्याप्त हो जानेसे, वान्ति होती है, दस्त आते हैं, शरीरमें पीलापन दौड़ जाता है, आँखें निकल आती हैं। शरीर शिथिल हो जाता है, हृदय समुचित रीतिसे काम नहीं करता, साँस लेनेमें वाधा पड़ती है, इत्यादि। जिन लोगोंको तम्बाकू खाने-पीनेकी आदत नहीं है, उनपर उसकी कम मात्रासे भयङ्कर लक्षण दिखाई देते हैं। किन्तु जिनकी तम्बाकू खाने-पीनेकी आदत है, उनपर बहुत तेज-तम्बाकूके व्यवहारसे ऐसे लक्षण प्रकट होते हैं!

तमाखू पीनेसे होनेवाली हानियाँ इंग्लैण्डके सबसे नामी

वैज्ञानिक और चिकित्सक—डाक्टर बी० डबल्यू० रिचर्डसनने तम्बाकू पीनेसे निम्न-लिखित हानियाँ बताई हैं:—

(१) रक्त बहुत पतला हो जाता है, और लाल रक्त कणोंमें परिवर्त्तन हो जाता है।

(२) पक्वाशयकी कार्य-कारणी-शक्ति क्षीण हो जाती है। इससे निर्बलता आती और जी मचलाता है।

(३) दिल और फेफड़े कमज़ोर हो जाते हैं, वे नियमित रीतिसे कार्य नहीं करते।

(४) ज्ञानेन्द्रियोंमें क्षीणताका विशेष सञ्चार होता है। आँखोंकी पुतलियाँ फैल जाती है। आँखोंके नीचे काला पीला दिखाई देता है। कानोंमें स्पष्ट सुनाई नहीं देता। कानोंमें कई प्रकारके आवाज सुनाई देते हैं।

(५) मस्तिष्कसे मल निकलने और उसके पोषणमें वाधा पड़ती है।

(६) शरीरकी नाड़ियाँ शिथिल हो जाती हैं, और इससे रसपिण्डोंसे रस पैदा करनेके लिये, जिनपर उनका पूरा प्रभाव रहता है, उनमें की पर्याप्त शक्ति नहीं रहती।

(७) मुँहकी कलामें गड़बड़ पैदा होती है। गलेकी कौड़ी बढ़ जाती है, और उसमें जखम हो जाता है। कला, लाल खुश्क और कभी कभी छिल जाती हैं : मसूढ़े भी कमज़ोर पड़ जाते हैं। सिकुड़ जाते और सछिद्र हो जाते हैं। मुँहसे बदबू आती है, और दाँतमें मैल जमकर दाँत जल्दी गिर जाते हैं।

(८) फेफड़ोंको (Bronchial surface) उत्तेजना पहुँचती और कफ़ बढ़ता है।

डाक्टर रिचर्डसन् अन्यत्र कहते हैं कि "निकोटिनसे रक्त-कणोंको जो हानि पहुँचती है, वह अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा किसी पुराने तम्बाकू पीनेवालेके रक्तमें देखी जा सकती हैं।" वे लिखते हैं:—

रक्तमें प्रभाव–"रक्त स्वाभाविक दशासे पतला हो जाता है, और बहुतसी दशाओंमें पीला पड़ जाता है। ऐसी दशाओंमें समस्त शरीरमें रक्तका यह नाकिस रङ्ग बँट जाता है, और इससे बाहरी त्वचा जर्द और सूजी हुई मालूम होती है। किन्तु मुख्य परिवर्त्तन रक्त-कणोंमें होता है। तम्बाकूके धुएँके शोषणसे उनमें बहुत शीघ्र परिवर्त्तन होता है। अणु-वीक्षण-यन्त्रसे परीक्षा करनेपर यह देखा गया है कि, उनकी गोल शकल नष्ट हो गई, वे चपटे हो गये, उनमें सिरे निकल आये, और आपसमें एक दूसरेसे लगे रहनेके बजाय, जो कि कुछ हद तक अच्छा लक्षण है, वे तितर बितर हो गये हैं।

तम्बाकू पीनेवाले बालककी भीतरी दशा— वास्तवमें अभीतक किसीने तम्बाकू पीनेवाले बालकके भीतरी यन्त्रोंकी परीक्षा नहीं की है, किन्तु छोटे छोटे प्राणियोंके भीतरी यन्त्रोंमें तम्बाकू पहुँचाकर परीक्षा की गई है। परीक्षामें मस्तिष्क पीला, और खूनसे खाली पाया गया, आमाशयमें उभड़े हुए लाल धब्बे दिखाई पड़े। फुफड़े पीले हो रहे थे, रक्त

बहुत पतला हो गया था और हृदयमें रक्त जमा हो रहा था, तथा बहुत धीरे २ एवम् कँपते हुए अपना कामकर रहा था। इस परीक्षासे तमाखू पीनेवाले बालकोंके शरीरकी, भीतरी दशाकाभी अनुमान किया जा सकता है।

तम्बाकू शरीरकी वृद्धि रोकती है—जिन बालकोंके शरीरका वृद्धि विकाश हो रहा है, बीड़ी या सिगरेट पीना उनके लिये बहुत हानिप्रद है, क्योंकि तम्बाकू शरीरकी वृद्धिको रोकती है। माता-पिता और शिक्षकोंका यह कर्त्तव्य है कि, वे बालकोंको तम्बाकूके व्यसनसे दूर रक्खें। किन्तु खेद है प्रायः वे ही बालकोंमें, तम्बाकूका व्यसन पैदा करनेके कारण और उदाहरण होते हैं। जब शिक्षक या पिताको ही तम्बाकू खाने पीनेका दुर्व्यसन होता है, तब वे बालकोंको कैसे दुर्व्यसनसे रोक सकते हैं? स्वास्थ्यकी दोहाई कैसे दे सकते हैं? बुरे दृष्टान्त ही दूसरोंके चरित्रको बिगाड़ते हैं।

तम्बाकू रोगोंका कारण है—तम्बाकू एक ऐसा ज़हर है, जो कि श्वास पर प्रभाव डालता पाचन शक्ति क्षीण करता, स्वाद और गन्ध जाननेकी शक्ति बिगाड़ देता, रक्तको नष्ट करता, मस्तिष्कमें वाधा पहुँचाता, दिलको दबाता, नाड़ियोंको उत्तेजित करता, पुट्ठोंको बर्वाद करता, यकृतके काममें रुकावट डालता, दृष्टिक्षीण करता, त्वचा पर धब्बा पैदा करता, और प्रत्येक मांस-तन्तु और इन्द्रियको जिससे उसका सम्पर्क होता है, हानि पहुँचाता है। उसका प्रभाव

जीवन-ज्योतिको क्षीण करता, ज्ञान-शक्तिको नष्ट करता, आयु नष्ट करता, और शरीरका अन्त करता है।

डाक्टर एडवर्ड स्मिथने तम्बाकूके विरुद्ध वक्तृता देते हुए कहा है:—"तम्बाकूके सेवनसे पूर्णतया रोगकी ओर शरीरकी प्रवृत्ति होती है। यह कहना असम्भव है कि, इसके द्वारा संसारका अबतक कितना अधिक अनिष्ट हो चुका है।"

तम्बाकू पीनेसे गलेमें घाव हो जाता है—मुँह और गलेकी चिपचिपी झिल्ली (कला) पर अरुणता और नीरसता तम्बाकूके ज़हरीले गरम धुएँका परिणाम है। कुछ धूम्रपान प्रेमी कहते हैं कि, तम्बाकू पीनेसे गला साफ़ होता है। यदि गलेमें घाव हो गया हो तो साफ़ हो जाता है। किन्तु उनका यह कथन अनेक दशाओंमें सिर्फ तम्बाकू पीनेका बहाना है। तम्बाकूसे गलेका घाव कभी आराम नहीं होता। बल्कि उससे बढ़ता है।

तम्बाकू और क्षयी—यह संसार स्वीकार करता है कि, दूषित वायु साँस लेनेसे फुफ्फुसोंमें रोग हो जाता है। यह भी सिद्ध हो चुका है कि, दूषित-वायु साँस लेना क्षय रोगका प्रधान कारण है। कारण, इससे रक्त और फुफ्फुसोंमें विषमय तत्त्वोंका प्रवेश होता है। इससे सिद्ध होता है कि, तम्बाकूका ज़हरीला धुँआ जो कि दिन भरमें न मालूम कितनी बार घूँटा जाता है, फुफ्फुसोंके रुग्ण होनेका निश्चित हेतु है। विलायतके मेट्रोपोलिटन फ्री हास्पिटलके प्रधान डाक्टरने पब्लिक-हेल्थ

नामके पत्रमें इस विषयमें इस विषयको समर्थन करते हुए लिखा है:—"तम्बाकू पीनेवाले युवकोंको बहुधा क्षय-रोग हो जाता है।"

तम्बाकू हृदयकी बीमारीका एक कारण है— नाड़ीसे हृदयकी दशाका परिचय प्राप्त होता है। हृदय पर तम्बाकूका जो प्रभाव पड़ता है, वह नाड़ीमें व्यक्त होता है। तम्बाकू पीनेवालेकी नाड़ीसे यह स्पष्ट व्यक्त होता है कि, उसका हृदय निर्बल हो गया है, उसकी शक्ति क्षीण हो गई है। अथवा उसपर विषका प्रभाव पड़ गया है। तम्बाकू पीनेकी बुरी आदतसे, अकसर दिल धड़कनेकी बीमारी और हृदय-सम्बन्धी अन्य भयानक रोग हो जाते हैं।

तम्बाकू और अजीर्ण—बहुतसे मनुष्य यह समझते हैं कि, तम्बाकूके व्यवहारसे अजीर्ण-रोग दूर होता है। परन्तु वास्तवमें यह बात नहीं है। तम्बाकूके व्यवहारसे बहुत करके अजीर्ण रोग घर दबाता है। तम्बाकूके व्यवहारसे आमाशयकी क्रिया शिथिल पड़ जाती है, और आमाशयके रसका उत्पादन बहुत कम होता है। तम्बाकू पीनेवाला या खानेवाला तम्बाकू पीकर भूख शान्त कर सकता है। यद्यपि शरीरको भोजनकी आवश्यकता रहती है, किन्तु तम्बाकूके अचैतन्य प्रभावके कारण क्षुधा शांत हो जाती है। इससे पचनेन्द्रियोंकी दशा बिगड़ जाती है, और अजीर्ण जैसा भयङ्कर रोग घर दबाता है।

तम्बाकू कैंसरका एक कारण है—तम्बाकू खाने या पीनेसे बहुत कर गाल होंठ और जीभमें कैंसर रोग प्रत्यक्ष होता है। कैंसर एक असाध्य रोग है। भारतमें गाल, होंठ या जीभ पर कैंसर होनेका एक मात्र कारण तम्बाकू खाना है। विलायतमें गालोंपर कैंसर होनेका कारण तम्बाकू ही है। अन्तर इतना ही है, कि यहाँ तम्बाकू खानेसे, और वहाँ (Clay pipe) द्वारा तम्बाकू पीनेसे होता है। अबतक विज्ञानकी लीला-भूमि पश्चिमात्य देशमें भी इसका कोई निश्चित इलाज आविष्कृत नहीं हुआ है।

तम्बाकूसे लकवेकी बीमारी हो जाती है—तम्बाकूके व्यवहारसे, शरीरकी नसें और मांसपेशियाँ निर्बल हो जाती हैं। नाड़ियाँ और पुट्ठोंकी अशक्तता ही लकवेका कारण होती है। इससे दृष्टि-वातरज्जुओंमें एक प्रकारका लकवा हो जाता है। इससे आँखोंकी ज्योति क्षीण हो जाती है।

नसोंकी कमजोरी—तम्बाकूके व्यवहारसे वातरज्जु निर्बल हो जाते हैं। जो लोग तम्बाकू खाते पीते या सूँघते हैं, उनके वातरज्जु अधिकतर निर्बल हो जाते हैं। इससे कुछ लोग बहुत ही जल्दी अधिकतर उत्तेजित हो जाते हैं। कुछ सहज ही भयभीत हो जाते हैं, कुछ लोगोंका हाथ कँपता है, इत्यादि। ये सब वातरज्जुओंकी निर्बलताके लक्षण हैं। थोड़ी देरतक ऐसा मालूम होता है कि, तम्बाकूके खाने पीनेसे शरीरमें शक्ति

आ गई है, किन्तु वह शक्ति वास्तवमें "ढोलकी पोल" वाली कहावत चरितार्थ करती है। वास्तवमें मनुष्यके लिये तम्बाकूका खाना पीना अस्वाभाविक है। अर्थात् मनुष्यके शरीर सङ्गठनके अनुकूल नहीं।

जिन रोगोंका वर्णन, इस अध्यायमें किया गया है, उनके अलावा भी अनेक रोग तम्बाकूके व्यवहारसे, मानव-शरीरको जर्जरित करते हैं। किन्तु इस अध्यायमें जो कुछ लिखा गया है, वह यह दिखानेके लिये काफ़ी है कि, तम्बाकू सेवनका दुर्व्यसन मनुष्य-जातिके लिये कल्याणकारी नहीं। जो युवक तम्बाकू खाने पीनेकी आदत डाल रहे हैं, उनको इसके दोषोंको जानकर सावधान हो जाना चाहिये। ऐसे युवकोंके मातापिता और अभिभावुकोंको भी चाहिये कि, वे इस दुर्व्यसनसे उनकी रक्षा करें।

तम्बाकूके व्यवहारका परिणाम सन्तानों पर पड़ता है।—माता पिताकी ऐसी कोई आदत नहीं, जिसका प्रभाव सन्तान पर तम्बाकूके व्यवहारकी आदतकी अपेक्षा अधिक पड़ता हो। एक हृष्ट-पुष्ट मनुष्य तम्बाकूको जीवन पर्य्यन्त खा—पी सकता है, और यह ख्याल कर सकता है कि, उससे कोई हानि नहीं पहुँचती। किन्तु यह देखा जाता है कि, उसकी सन्तानें जिनका शरीर, उसके वीर्यसे हृष्ट-पुष्ट होना चाहिए, निर्बल होता है। उनके शरीरकी दशा देखकर तरस आता है। तम्बाकूका व्यवहार करनेवाले माता पिताकी संतान

उनके समान हृष्ट-पुष्ट नहीं होती। यदि इस दुर्गुणमें फँसे हुए व्यक्तियोंकी सन्तानें भी तम्बाकूकी वैसी ही प्रेमिणी हुईं, तो उनको देखकर किस देश-प्रेमीके हृदयमें दुःखकी ज्वाला न धधक उठेगी। अनुभवी डाक्टर पिडलाकका कथन है—"जो मनुष्य तम्बाकूके व्यसनमें लिप्त होकर अपने स्वास्थ्य तथा शारीरिक और मानसिक शक्तियोंका नाश करनेकी कमर बाँधता है, उसके दुर्गुणके प्रभावका अन्त उसके शरीरके साथ ही हो जाय, तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। किन्तु ऐसा होता नहीं। ऐसी कोई आदत ही नहीं जिसका प्रभाव सन्तान पर, तम्बाकूके व्यवहारकी अपेक्षा अधिक पड़ता हो। तम्बाकूका व्यवहार करनेवाले लोगोंकी सन्तानोंकी वेदना, असामयिक-मृत्यु, नाटाकद, और क्षय, उन्माद, आदि रोग तम्बाकूके दुर्व्यसनसे पैदा हुई, उनके माता-पिताकी निर्बलता और अस्वास्थ्यके पर्याप्त प्रमाण हैं।

इस सम्बन्धमें डाक्टर बी० डबल्यू० रिचर्डसनका कथन है—"स्त्री-पुरुषोंके एक बड़े समूहको जीवनके आरम्भिक-कालसे ही तम्बाकू खाने-पीनेका पूर्ण प्रेमी बनाओ। अनन्तर ऐसे स्त्री-पुरुषोंको आपसमें विवाह-सूत्रसे बाँध दो, और देखो कि उनके द्वारा कैसी अयोग्य सन्तानें पैदा होती हैं?"

तम्बाकू खाने पीने वाले सब लोग क्यों नहीं मर जाते? बहुधा यह आपत्तिकी जाती है कि, यद्यपि रासायनिक और वैज्ञानिक परीक्षाओंसे तम्बाकू सबल विष

सिद्ध होता है, तथापि हज़ारों मनुष्योंका अनुभव इस सिद्धान्त को कटता है। यदि तम्बाकूमें ऐसा ज़हर होता, तो उसके ज़हर से मृत्यु बहुत अधिक होनी चाहिए। इसका उत्तर यह है कि, शरीरमें एक यह गुण है कि, वह स्थितिके अनुसार बन जाता है। इससे, क्रम क्रमके उपयोगसे बड़े तेज ज़हर भी वह धीरे धीरे बरदाश्त करने लगता है। हमारी रायमें तम्बाकू खाने-पीने वाले, तम्बाकूके ज़हरसे ही मरते हैं। हाँ यह बात जरूर है कि, तम्बाकूके ज़हरका शरीर पर पूरा प्रभाव पड़नेमें समय लगता है।

तम्बाकूके दुर्व्यसनसे छुटकारा पानेका उपाय

—तम्बाकूके दुर्व्यसनसे छुटकारा पानेका एक मात्र उपाय यही है कि, उसका सेवन एकबारगी छोड़ दो। ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत कम है, जिनमें क्रमसे छोड़नेकी इन्द्रिय-निग्रह-शक्ति तथा धैर्य और लक्ष है। क्रम क्रमसे छोड़नेका पथ दुस्तर है। पूरी तौरसे एकबारगी छोड़ देना क्रम क्रमसे छोड़नेकी अपेक्षा, शरीर और मनके लिये अधिक असुविधाजनक है। इस बातका जरा भी हृदयमें भय न लाना चाहिए कि, एकबारगी परित्याग करनेसे जानके लाले पड़ेंगे। इससे चाहे कुछ तकलीफ या असुविधा मालूम हो, किन्तु जीवनके लिये कोई भयकी बात नहीं। दो चार दिन धैर्य रखनेसे ही विजय प्राप्त हो जायगी, और घृणित तथा ह्रासकारी दुर्व्यसनके अत्याचारसे छुटकारा मिलेगा। एक दम तम्बाकू छोड़ देनेसे कुछ भी हानि नहीं

होती। जेलमें पहुँचतेही कैदियोंसे तम्बाकू छुड़ा दी जाती है। उनको कोई भी शारीरिक हानि नहीं पहुँचती है, बलिक समयान्तरमें लाभ ही पहुँचता है। वे बहुत तन्दुरुस्त हो जाते हैं। विलायत आदि देशोंमें १८ वर्षकी अवस्था तकके बालकोंको तम्बाकू पीनेसे कानून रोकता है। परन्तु भारतमें छोटे छोटे बच्चे भी धुआँ उड़ाते फिरते हैं। उनको इस दुर्व्यसनसे रोकनेके लिए यहाँ कोई कानून नहीं। यद्यपि सरकारने तम्बाकू पर थोड़ा महसूल बढ़ा दिया है, पर उससे कुछ प्रभाव नहीं पड़ सकता। वास्तवमें विलायतकी तरह, यहाँ भी कानून पास होनेकी अत्यंत आवश्यकता है।

(२) शराब

शराब पीनेसे स्वास्थ्यको कैसा गहरा आघात पहुँचता है, यहाँ इस विषयका हम संक्षिप्त-रीतिसे वर्णन करेंगे।

शराब प्राणीमात्रके लिए विष है—यदि जलके एक हज़ार भागमें एक भाग मद्यसार मिला दिया जाय और उस जलसे कोई पौधा सींचा जाय, तो वह सूख जायगा। तुम शराबके पीपेमें मक्खी, मेंढ़क या चूहेको छोड़ कर उसकी मृत्यु अपनी आँखोंसे देख सकते हो। शराब जिस तरह पौधों और छोटे प्राणियों के लिए विष है, उसी तरह मनुष्यके लिए भी विष है। किन्तु मनुष्य शरीरपर उसका प्रभाव क्रम क्रमसे पड़ता है। फिर भी, बहुत अधिक शराब एक बारमें ही पी जानेसे, आनन-फानन मृत्यु हो जाती है।

शराब ज्वालग्राही है,—त्वचा पर शराब लग जाने से बड़े जोरकी जलन होती है। जो चीज़ वाह्येन्द्रिय परही जलन पैदा करती है, वह आभ्यन्तरिक कोमल इन्द्रियोंको जलानेसे क्यों बाज आयगी? आभ्यंतरिक इन्द्रियों पर उसका बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ता है।

शराबसे चेतनता नष्ट होती है,—शराबसे शरीर में पहिले उत्तेजना पैदा होती है। पीछे उससे संज्ञा लुप्त होती है। जिस समय मनुष्य थक जाता है, उस समय वह श्रमका भाव, श्रमित-शक्तिको पूर्व-दशामें परिणति देकर नहीं, शराबसे ज्ञानेन्द्रियोंको कुण्ठित करके दूर करता है।

शराब क्लोरोफार्मका काम देता है—अच्छी कड़ी शराब दो तीन मिनट तक मुँहमें रखनेसे रसनाज्ञान नष्ट हो जाता है। उस समय नीमकी पत्तियाँ भी कड़वी नहीं मालूम होती हैं। अच्छी चरपरी लाल मिरची भी चरपरी नहीं मालूम होती। अधिक शराब पीलेनेसे दर्द भी नहीं मालूम होता। शराबके भर पूर नशेमें अस्त्रोपचार किया जा सकता है। उस समय रोगीको तकलीफ़ नहीं मालूम होती। यदि किसी किसीको मालूम भी होती है, तो बहुत ही थोड़ी। एक अस्पतालमें एक स्त्रीको अच्छी कड़ी शराब पिला कर, उसकी दोनों आँखों पर अस्त्रोपचार किया गया था। स्त्री को दर्दकी ज़रा भी शिकायत न थी।

शराब भोजनका काम देती है—शराब भोजन का काम दे सकती है। उसमें भोजन सम्बन्धी समस्त प्रकारके अंश होते हैं। किन्तु उसके अनेक दूषण मुख्यत: उसके द्वारा यकृत्का नष्ट होना, उसके भोजन सम्बन्धी गुणों पर पानी फेरता है।

शराब रक्तको दूषित करता है,—(१) परीक्षासे यह बात सिद्ध हुई है, कि मनुष्य जिस समय शराबकी हालतमें होता है, उस समय मूत्र-मार्गसे उतना अधिक मल बाहर नहीं निकलता, जितना शाराब न लेने पर निकलता है। इससे यह सिद्धान्त स्थिर किया गया है कि, शराब शरीरका भीतरी मल बाहर निकलनेमें बाधा डालता है। शरीरका मल बाहर न निकलनेसे रक्त दूषित हो जाता है।

(२) शराब, उदरसे रक्तमें बहुत जल्द पहुँच जाती है। वहाँ रक्त-कणोंसे उसका संघट्ट होता है। इससे कितने ही रक्त-कण नष्ट होते हैं। यदि इस बातकी परीक्षा करनी हो, तो अंगुली में सुई चुभो कर एक बूँद रक्त निकालो, और उसे काँचके एक टुकड़े पर फैला दो। अनन्तर अणुवीक्षण-यंत्र उठाओ, और उसके द्वारा रक्त-बिन्दु पर दृष्टि निक्षेप करो। ऐसा करनेसे तुमको रक्त-बिन्दुमें अगणित कण दिखाई देंगे। इसके अनन्तर शराबकी एक बूँद लहूके उस बूँद पर टपका दो, इससे रक्त-कण पाँच मिनटमें ही खण्ड खण्ड दिखाई देंगे।

यदि तुम किसी शराबीको ये बातें सुझाने की चेष्टा करोगे,

तो वह प्रायः यही उत्तर देगा कि, थोड़े से रक्त-कणोंके नाशसे क्या हानि हो सकती है ? कारण उसको समझमें, शराबके आगे रक्त-कणोंकी कुछ भी महत्ता नहीं। रक्त-कण जीवन के मुख्य साधन हैं। साँस लेनेके लिए काफ़ी हवा न मिलनेसे शरीरकी जैसी अनिर्वचनीय दशा हो जाती है, ठीक वैसी ही दशा, परिणाममें रक्त-कणों के नाशसे प्राप्त होती है। क्योंकि रक्तकण समस्त शरीरमें प्राण-प्रद वायु पहुँचाने के मुख्य साधनोंमें से एक हैं। उनके नाश से शरीरके किसी भी अवयवमें प्राण-प्रद वायु नहीं पहुँचता। रक्त, कारबोलिक अम्लगैसकी अधिकतासे दूषित हो जाता है।

(३) शराबसे रक्त जम भी जाता है। रक्तके जमे हुए अंश रक्त-श्रोतमें प्रवाहित होकर, कैपिलरीज़ नामकी पतली नाड़ियोंमें पहुँचते हैं, और वे वहाँ पहुँच कर रक्त-प्रवाहका पथ बन्द कर देते हैं। इससे देहमें फुन्सियाँ या बड़े ब्रणोंके दर्शन होते हैं। कभी कभी बहुत अधिक रक्त जम जाता है। और रक्तके जमे हुए अंश मस्तिष्ककी बड़ी धमनीमें पहुँच कर, उसका रक्त सञ्चालनका पथावरोध करते हैं। इससे आनन फानन मनुष्यका देहावसान हो जाता है। बहुत अधिक शराब पी लेनेसे प्रायः ऐसा होता है।

(४) जो चरबी (घी, मक्खन) हम खाते हैं, उसकी पचन-क्रियामें शराब वाधा पहुँचाती है। इससे चरबीका पूर्ण परिपाक नहीं होता, और वह अपरिपक्वावस्थामें ही रक्तमें जा

मिलती है। इससे शराबीके रक्तमें चरबीका अंश बहुत अधिक बढ़ जाता है। यही रक्त समग्र शरीरमें दौड़ता है, और इससे हृदय, यकृत, धमनियों मूत्र-पिण्डों और वास्तवमें शरीरके समग्र अवयवोंमें चरबी जमा हो जाती है, जिससे शरीरको हानि पहुँचती है।

शराबीका हृदय—शराब रक्तमें प्रविष्ट होकर हृदयके कामकी व्यवस्था करने वाली नाड़ियोंके केन्द्रोंमें पहुँचती है। उसका प्रभाव इनपर बहुत बुरा पड़ता है। क्लोरोफार्म, मस्तिष्ककी जैसी दशा बदल देता है, शराब उनकी वैसी ही दशा कर देती है। उस समय दिल बिना गवर्नर वाले स्टीम-एञ्जिनका सादृश्य धारण करता है। वह बहुत तेजीसे धड़-कता है। रक्त सञ्चालन करने वाली पतली छोटी नाड़ियोंपर शराबका प्रभाव, अधिकतर इसका कारण है। उनपर अधि-कार रखने वाले वातरज्जु (Nerves) सुन्न और चौड़े हो जाते हैं, इससे हृदयकी अधिक धड़कनमें रुकावट कम पड़ती है। धड़कन बढ़ जानेसे बहुतेरे अज्ञ-मनुष्य यह समझते हैं कि, उनके हृदयकी शक्ति बढ़ गई है। किन्तु वास्तवमें यह उनका भ्रम मात्र है। हृदयकी शक्ति नहीं, हृदयका काम बढ़ता है। शक्तिका नाश होता है। शराबके कारण हृदयकी बढ़ी हुई धड़कनकी गिनती मालूम हो सकती है। डाक्टर बार्कने परीक्षाओंके द्वारा यह जाना है कि, जिस मनुष्यका हृदय २४ घण्टेमें १०६५६० बार धड़कता है, उसीका दिल सिर्फ दो तोला मद्य-

सार पी लेनेसे ४३० बार अधिक धड़कता है।

शराबीका नाड़ी-स्फुरण—शराबीका नाड़ी-स्फुरण बहुत कमज़ोर और अव्यवस्थित होता है। बहुत थोड़ा परिश्रम करनेसे भी, शराबीका नाड़ी-स्फुरण बढ़ जाता है। शराबसे हृदयको बड़ी हानि पहुंचती है। उसकी कार्य-कारिणी-शक्ति मंद हो जाती है। वह रुग्ण हो जाता है।

सूजन—शरीरके समस्त अवयवोंमें रक्त पहुँचाना धमनियोंका काम है। इस काममें अनेक वातरज्जु धमनियोंको मदद देते है। जिन केन्द्रोंसे ये वातरज्जु निकलते हैं, उनको शराब क्षुब्ध कर देती है। इससे रक्त-कण फैल जाते हैं। ऐसा होनेसे अनेक अवयवोंमें जरूरतसे अधिक रक्त पहुँचता है। फल यह होता है कि, उनमें खून जम जाता है, और सूज जाते हैं। इस प्रकार फुस्फुस, यकृत, हृदय और शरीरकी अन्य इन्द्रियाँ रोगसे आक्रान्त हो जाती हैं। इसी कारण शराबीके चेहरे पर लाल धब्बे दिखाई देते हैं। नाक फूल उठता है, उस पर गहरी ललाई छा जाती है। इस सिद्धान्तको प्रकट हुए जमाना गुजर चुका है कि, शराबी हैजा, प्लेग और इसी प्रकारके अन्य शीघ्र प्राणान्तक रोगोंके प्यारे शिकार होते हैं।

शराबीका मस्तिष्क—मस्तिष्क, अपनी स्वस्थ-स्थितिमें बहुत ही कोमल होता है। इतना कोमल होता है कि, उसे काटनेके लिये कर्रा बनाना पड़ता है। उसे कर्रा बनानेके

लिए कई हफ्तों तक, महीनों तक भी, अलकोहलमें डुबा रखना पड़ता है। किन्तु शराबीके मस्तिष्कको काटनेमें कोई कठिनता नहीं पड़ती। वह उसके जीवन कालमें ही कर्रा हो जाता है। एक शरीर शास्त्रज्ञका कथन है कि, वह केवल स्पर्श मात्रसे अँधेरेमें शराबीका मस्तिष्क पहिचान सकता है। विलायतके एक डाक्टरका कथन है कि 'एक वक्त पोष्ट-मार्टममें शवके मस्तिष्कमेंसे शराबकी बू निकल रही थी, जिस समय उसपर दियासलाई लगाई गई, वह भकसे जल उठा।' कभी कभी मस्तिष्कमें शराबकी इतनी अधिक मात्रा पायी जाती है कि, उससे शराब निकाली जा सकती है।

किन्तु इससे यह न समझ लेना चाहिए कि, प्रत्येक मनुष्यका, जो कि थोड़ी बहुत शराब पीता है, मस्तिष्क कर्रा हो जाता है। मस्तिष्कको कठोरता शराब लेनेकी आदत पर अवलम्बित है। तथापि शराबसे मस्तिष्कमें अनेक प्रकारके रोग हो जाते हैं। लोको मोटर ऐटेक्सिया (Loco motor ataxia) नामक दुसाध्य रोग प्रायः शराब पीनेसे ही होता है।

शराब पीनेसे मस्तिष्क फूल भी जाता है। इससे वातरज्जुओंसे रक्त बहने लगता है। जब धमनियोंकी दीवारें (Walls) चरबीके जमावसे बहुत निर्बल हो जाती हैं, तब इस प्रकारका रोग, बड़ा ही भयानक रूप धारण करता है।

शराबका वातरज्जु पर प्रभाव—वातरज्जुओं पर शराबका बहुत ही भयानक प्रभाव पड़ता है। शराबके प्रभावसे

वे बहुत ही शिथिल हो जाते हैं। जिन लोगोंको शराब लेते मुद्दत बीत चुकी, उन लोगोंके हाथमें प्रायः कँप-कँपी देखी जाती है। हाथके प्यालेसे शराबके कितने ही बूँद छलक कर, जमीनमें जा टपकते हैं।

शराबीका आमाशय—शराबीका आमाशय पोला और उसका रङ्ग बादामी होता है। शरीर-शास्त्रज्ञोंने अनेक छोटे जीवोंके आमाशयके भीतर छेदकर, वहाँ होनेवाले परिणामोंका अध्ययन किया है। १९ वीं शताब्दीके आरम्भके लगभग, सलेक्सिससेण्टमार्टिन नामक एक मनुष्यके पेटमें गोली लगी थी। उसके आमाशयमें गोलीकी चोटसे एक स्थायी-छिद्र हो गया था। उस छिद्रके द्वारा आमाशयकी पचन-क्रिया स्पष्ट दिखाई देती थी। शराबका आमाशयमें क्या प्रभाव पड़ता है? इस विषयका ज्ञान, मार्टिनके आमाशयके द्वारा डाक्टर बोमौएटने प्राप्त किया था। डाक्टर बोमौएटका कथन है कि, जब कभी मार्टिन शराब पी लेता था, तब उसके आमाशयका रंग लाल हो जाता था।* पचन-क्रियामें भी परिवर्त्तन होता था।" शराबकी तरह ही राई मिर्च तथा अन्य मसालोंसे एक ऐसी उत्तेजना पैदा होती है, जिससे आमाशयकी क्रिया कुछ और की और हो जाती है। शराब या मसालोंके व्यवहारकी आदत होनेसे उसका लालरंग स्थायी हो जाता है। इससे मन्दाग्निका

* स्वस्थ आमाशय और शराबी आमाशयका चित्र इस पुस्तकके प्रथम खण्डमें देखिये।

रोग हो जाता है। शराबसे केवल उत्तेजना ही नहीं पैदा होती, बल्कि भोजनकी पाचन-क्रियामें भी बाधा पड़ती है।

बहुत अधिक शराब पीनेवालेका आमाशय--बहुत अधिक शराब पीने वालेके रुग्ण आमाशय पर छोटे छोटे क्षत निकला करते हैं। उन क्षतोंकी पीड़ा शराबीको मालूम नहीं होती। कारण उसके आमाशयके वातरज्जु सुन्न हो जाते हैं। बहुत अधिक शराब पीने वाले व्यक्तियोंके आमाशयकी कला भी फूल उठती है।

शराबीका यकृत—शराबीके यकृतकी दशा अपूर्व हो जाती है। वह सिकुड़ जाता है। उसमें कठोरता आ जाती है। उस पर जायफलके मानिन्द दाने उठ आते हैं और वह बिलकुल बेकाम हो जाता है। उसमें दर्द ज़रा भी नहीं होता।

शराब शक्ति नाशक है—मज़दूर, पथिक, और सिपाही इस ख़यालसे शराब पीते हैं कि, उससे शरीरमें नई शक्ति आ जाती है। जिस समय मजदूर काम करनेसे थक जाता है, उस समय वह श्रम दूर करनेके लिए शराबके प्याले चढ़ाता है। शराब पीनेपर वह अपनेको शक्ति-सम्पन्न समझता है। उसकी बढ़ी हुई शक्ति वास्तवमें ख़याली है। परीक्षासे यह सिद्ध हुआ कि, शराबकी हालतमें मनुष्य उतना भारी बोझ नहीं उठा सकता, जितना भारी बोझ वह उस समय उठा सकता है, जब कि शराबके नशेमें नहीं होता। वास्तवमें शराबसे मांसपेशियों की शक्ति क्षीण हो जाती है।

शराबसे मांसपेशियां चरबीमें बदल जाती हैं—शराबसे शरीरकी जो खराबियाँ होती हैं, उनमेंसे मांसपेशियोंका चरबीमें बदल जाना उल्लेखनीय है। शराबसे शरीरकी सब मांसपेशियाँ, या कुछ ही पेशियाँ हृदय और रक्तवाहक नलियाँ चरबीमें बदल जाती हैं। कारण, उनपर अधिकार रखनेवाले वातरज्जु सुन्न हो जाते हैं। यह शारीरिक क्षति पूरी नहीं की जा सकती। इससे शीघ्र या कुछ समयके अनन्तर मृत्यु होना निश्चय है।

शराब शारीरिक उष्णता नष्ट करती है—शराब त्वचाकी शिराओंको फैलाती है। इस कारण उनमें अधिक रक्त दौड़नेसे गरमी मालूम होती है। परन्तु शरीरकी गरमी जल्दी उड़ जानेसे शरीरको हानि पहुँचती है, और इससे कभी कभी मृत्यु भी हो जाती है। शराबका एक प्याला पीते ही, उष्णताका जो भाव मालूम होता है, वह धोखा मात्र है। कुछ क्षण तक गरमी बढ़ती हुई मालूम होती है, किन्तु उष्णता—मापक-यन्त्रसे प्रकट होता है कि, गरमी घट रही है।

शराबसे शरीरके समस्त अवयवों और इंद्रियोंको हानि पहुँचती है— शराबसे शरीर-यन्त्रके सभी कल पुर्जे बिगड़ जाते हैं। कानमें अजीब अजीब आवाजें सुनाई देती हैं। आँखोंके नीचे काले धब्बे दिखाई देते हैं। अलकोहलिक एमौरोसिस नामकी बीमारी हो जाती है, और आँखें

बिगड़ जाती हैं, तथा कुछ दिनोंमें अन्धा हो जाना पड़ता। शराबसे अनेक प्रकारकी त्वचाकी बीमारियाँ पैदा होती हैं। विशेषतया अँगुलियों अँगूठों या पिंडुलियोंकी हड्डियोंमें एक्जेमा हो जाता है। न बुझनेवाली प्यास रक्तको खर्च करती हुई मालूम होती है, और उस प्यासको शराबके सिवाय कोई चीज़ नहीं बुझा सकती, परन्तु वह भी थोड़ी ही देरके लिये। यही कारण है कि, बहुत अधिक शराब लोग पीते हैं। इससे मूत्रेन्द्रियोंपर कार्यका बहुत अधिक भार पड़ता है।

यकृत और मूत्र-पिण्डोंके काममें विघ्न पड़ता है। एक दिन वे खूनके जमावके कारण बिलकुल बेकाम रहते हैं। दूसरे दिन वे काम करने लायक होते हैं, और उनको दूना काम करना पड़ता है।

शराब आयु नष्ट करती है—यह सिद्ध करना बहुत सरल है कि शराबसे आयु क्षीण होती है। न्यूयार्कके डाक्टर विलियर्ड पार्करने मृत्यु-लेखा देकर यह सिद्ध किया है कि, शराब न पीनेवालोंकी अपेक्षा शराब पीनेवाले ५० फी सैकड़ा अधिक मरते हैं।

उन्माद—शराबियों और पागलोंकी मानसिक स्थिति प्रायः एक सी ही होती है। दिन रात नशेमें चूर बने रहनेकी बुरी आदतसे, मानसिक परिवर्त्तन स्थायी हो जाता है। इससे मनुष्य पागलखानेकी हवा खानेके पूर्ण योग्य बन जाता है।

जलोदर—शराब पीनेवाले अनेक लोगोंको जलोदर रोग

हो जाता है। कारण शराबसे यकृत और मूत्र पिण्डोंकी दशा बिलकुल ही बिगड़ जाती है। शराबसे यकृतकी जैसी दशा हो जाती है, वह हम पीछे लिख चुके हैं। यकृतकी ऐसी दशाका प्रभाव पोर्टलवेन पर पड़ता है। यकृतकी केशवाहिनी शिरा-ओंके सिकुड़ जानेसे रक्ताभिसरणमें वाधा पड़ती है। इससे जलोदर रोग हो जाता है, जो असाध्य होता है।

क्षयरोग—शराबसे क्षय रोग भी हो जाता है। शराबसे जो क्षय रोग पैदा होता है, वह आरोग्य नहीं होता। क्षय रोगसे शराबीकी मृत्यु शीघ्र और अवश्य होती है।

शराबका प्रभाव सन्तानों पर पड़ता है—

"कितनी ही दशाओंमें ऊपरी दृष्टिसे शराबियोंका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ नहीं मालूम होता, किन्तु उनकी सन्तानोंको देखो। क्या वे उनकी ही तरह स्वस्थ और सबल दिखाई देती हैं? वास्तवमें "पिताका दुष्कर्म सन्तानोंमें प्रत्यक्ष होता है।"

शराबसे शरीर तो नष्ट होता ही है, किन्तु धन और धर्म भी नष्ट होता है। यूरोपीय महासमरके समयसे वहाँके लोग शराबसे होनेवाले घातक परिणामोंका अनुभव करने लगे हैं। वे जान गये हैं कि, इससे धन नष्ट होता है और शराबके व्यसनसे काम करनेवाले और नियम-निष्ठ-व्यक्ति अविश्वास पात्र हो जाते हैं। रूसकी सरकारने अपने यहाँ शराबका बनाना बेचना और खर्च करना बन्द कर दिया है। फ्रांसमें युद्धारम्भके कुछ ही दिनों बाद, शराब पीनेका निषेध हुआ। अब वहाँ कोई शराब नहीं

छूने पाता। अमेरिकाके संयुक्त राज्योंके कितने ही प्रदेशोंमें शराबका बनाना, खरीदना, बेचना और पीना बिलकुल बन्द कर दिया गया है। हाँ, सिर्फ दवाओंके काममें शराब लाई जाती है, हमारे भारत-सम्राट्ने भी शराब पीनेसे हाथ खींच लिया है।

क्या भारतमें शराब बनाने, बेचने, और खरीदनेका निषेध नहीं किया जा सकता? यद्यपि शराब पर सरकारने कुछ महसूल बढ़ा दिया है, किन्तु इससे शराबखोरी बन्द नहीं हो सकती।

शराब, प्रजाके उन्नति-पथकी विशेष बाधक है। यदि लोग शराब छोड़ दें तो, वे बचतके रुपये, वास्तविक उपयोगी प्राकृतिक भोजनमें, उपयुक्त वस्त्रोंमें, अपने लड़कोंकी शिक्षामें, अपनी और अपने कुटुम्ब समाज तथा देशकी उन्नतिमें, खर्च कर सकते हैं। इससे देशका बड़ा हित हो सकता है।

(३) चाय और काफी।

संसारमें जहाँ सभ्यताका प्रवेश है, वहाँ चाय और काफ़ीका भी प्रवेश अवश्य है। चायका प्रचार इस देशमें निरन्तर बढ़ता जा रहा है। बम्बई प्रान्तमें चायका, और मद्रास प्रांतमें काफ़ीका अधिक प्रचार है। चायकी माँग अधिक देखकर कितनी ही लिमिटेड कम्पनियाँ चायकी खेती करनेके लिये स्थापित हुई हैं। बड़े बड़े शहरोंमें अब चाय खातिर-तवाजो की एक मुख्य चीज़ हो गई है।

वास्तवमें चाय और काफ़ी दोनों उत्तेजक ओषधियाँ हैं।

जब रोगीको जगा रखनेकी ज़रूरत होती है तब डाक्टर तेज़ चाय या काफ़ी पिलाते हैं। चाय और काफ़ीका खाद्य-मूल्य कुछ भी नहीं है। इसलिये इनका सेवन शरीरके लिये हितकर नहीं है। जब हमें जागरण करना हो, तब अलबत्ता हम चाय या काफ़ी पी सकते हैं। इससे हम किसी तरहकी तकलीफके बिना जागरण कर सकते हैं।

चाय और काफ़ी दोनों मस्तिष्क और वातरज्जुओंको उत्तेजित करती हैं। जिससे मस्तिष्कमें रक्तका संचालन बढ़ जाता है। इससे मस्तिष्क उत्तेजनाकी अवस्था तक, मानसिक कार्य अधिक सुचारुता और स्फूर्तिके साथ करता है, और उसमें नये नये विचारों और कल्पनाओंके भाव जाग्रत होते हैं।

किन्तु चाय और काफ़ी पीनेसे शरीरको जितनी हानि पहुँचती है, उतना लाभ नहीं पहुँचता। वास्तवमें चाय या काफी पीनेकी आदत कोई अच्छी आदत नहीं है। चाय या काफी पीनेसे शरीरको केवल दो प्रकारके लाभ होते हैं, एक तो मस्तिष्क में रक्तका संचालन अधिक होनेसे उसमें नई स्फूर्त्ति आ जाती है। दूसरे शरीरके भीतरी अवयवोंकी सेंक होती है, जो शरीरके लिये बहुत उपयोगी है। गरम दूध या गरम पानी पीकर भी, शरीरके भीतरी अवयवोंकी सेंक की जा सकती है। शरीरको चायका गरम सेंकसे जैसा लाभ पहुँचता है, वैसा ही गरम दूध या गरम पानीका सेंकसे भी।

चाय और काफी पीनेसे शरीरको हानि अधिक पहुँचती

हैं। चाय या काफी पीनेवाले प्रायः स्वस्थ नहीं रहते। उनको कोई न कोई शिकायत बनी ही रहती है। चाय या काफी पीनेवालोंके सिरमें प्रायः दर्द रहता है। उनको खाना हज़म नहीं होता, हाथ-पैर ठण्डे रहते हैं, दिलके धड़कन (Palpitation of the heart) की शिकायत रहती है, अङ्ग भारी रहते हैं, इत्यादि इत्यादि।

डा० ई० स्मिथ, डा० रिचर्डसन तथा अन्य चिकित्सकोंका कथन है कि "चाय और काफी हृदयके कार्यको बढ़ा देती हैं। फेफड़ोंको बहुत अधिक कार्बोलिक-ऐसिड गैस बाहर निकालना पड़ता है, शरीरमें उष्णताकी कमी हो जाती है, और गुर्दोंके काम बढ़ जाते हैं। यदि चाय और काफीमें कहवाइनका बहुत अधिक अंश रहता है, तो मनुष्यका जी मचलाता है, चक्कर आते हैं, और अन्तमें मनुष्य बेहोश हो जाता है, और मर भी सकता है।" डा० एडवर्डस्मिथ दो आउंस काफीका काढ़ा, जिसमें कहवाइन ७ ग्रेन था, पीकर बेहोश हो गये थे।

चायके मौलिक—चायमें दो मुख्य मौलिक होते हैं। टेनिन और कहवाइन। टेनिन एक कसैला पदार्थ है। वह शरीरके लिए बहुत ही हानि-कारक है। वह चमड़ा कर्रा करने के काममें आता है। वह शरीरके भीतर पहुँच कर आमाशयकी झिल्लीको चिमड़ा करता है। इससे आमाशयमें भोजन का परिपाक सहजमें नहीं होता, और न इसका पोषण झिल्ली कर सकती है। टेनिन फिर आमाशयसे आँतोंमें जाकर उनकी

झिल्लीको भी कर्रा करता है।

कहवाइन एक प्रकारका उत्तेजक है। किन्तु शराब तम्बाकू आदि उत्तेजकोंसे उसकी क्रिया भिन्न है। वह केवल मास्तिष्कको ही उत्तेजित करता है।

काफीके मौलिक—काफीके मौलिक कहवाइन केफिओल और टेनिन हैं। काफीमें कहवाइनका अंश बहुत कम अर्थात् सैकड़े पीछे ०·६ से २ तक रहता है। केफिओल एक उत्तेजक तेल है, जो गुर्दोंको हानि पहुँचाता है। वह कहवाको स्वादिष्ट और सुगन्धित बनाता है। काफीमें टेनिनका अंश बहुत अधिक होता है, किन्तु उसका गुण चायके टेनिनसे भिन्न होता है। कहवाके टेनिनमें चिमड़ा या कर्रा करनेका गुण नहीं होता।

चाय बनानेकी विधि—हिन्दुस्तानमें बहुधा दूध और चीनी मिला कर चाय तैयारकी जाती है। कुछ लोग केवल नमक मिला कर तैयार करते हैं। चाय तैयार करनेमें बहुत ही शीघ्रता करनी चाहिए। कोई पाँच मिनटके अन्दर ही तैयार हो जानी चाहिए। सारांशमें खौलते हुए, पानीमें चायकी पत्तियाँ छोड़ कर बहुत जल्दी ही बर्तनको उतार लेना चाहिए। और दूसरे पात्रमें काढ़ेको छान कर, चीनी और दूध मिला देना चाहिए। खौलते हुए पानीमें कहवाइन तुरन्त ही घुल जाती है, पर टेनिनका घुलना पाँच मिनटके बाद शुरू होता है। काढ़ेमें टेनिनको न घुलने देना बहुत ही आवश्यकता होता है।

चीनमें चायकी दो चार पत्तियाँ ही खौलते जलमें छोड़ते हैं, और दूध तथा शकरके बिनाही उसे पीते हैं। फ्रांसके लोग हलकी चाय थोड़ा सा दूध डाल कर पीते है, शकर कोई डालते हैं कोई नहीं। यदि चाय पीना ही हो, तो घरमें ही तैयार करना चाहिए। बाजारमें होटलों या फेरी-वालोंसे चाय लेकर नहीं पीना चाहिए। होटल वाले और फेरीवाले चायको गरम रखनेके लिए उसे निरन्तर आग पर चढ़ा रखते हैं, जिससे उसमें टेनिन का अंश सर्वथा घुला रहता है।

काफी तैयार करनेकी विधि—काफीकी पत्तियाँ, पत्तियाँ नहीं हैं। बीज हैं। वह भूनकर तैयार की जाती है। कहवा उसी दिन और उतना ही भूनना चाहिए, जिस दिन जितना काढ़ा बनानेकी ज़रूरत हो। काफीका काढ़ा मिट्टीके बर्तनमें तैयार करना चाहिए। काफी तीन प्रकारसे तैयार की जाती है।

१—जैसे चाय तैयार की जाती है, वैसे कहवा भी तैयार किया जाता है।

२—बर्तनके मुहँ पर छन्ना लगाकर काफीका चूर्ण रक्खा जाता है, और ऊपरसे खौलता हुआ पानी छोड़ा जाता है।

३—काफी ठण्डे पानीमें छोड़ दी जाती है। अनन्तर वह उबाली जाती है। इस विधिमें छाननेकी ज़रूरत नहीं होती। अधिकतर टर्कोंमें इसी विधिसे काफी तैयार की जाती है।

फ्रांसमें खानेके बाद काफीका थोड़ासा काढ़ा, जिसमें शकर

नहीं डाली जाती, पीनेका रिवाज है। इङ्गलैण्डमें दूध मिला कर काफी पीते हैं।

काफी और चाय सर्वत्र भोजनके बाद पीयी जाती है। हमारे देशमें खाली पेट, चाय और काफीका काढ़ा लोग पीते हैं। इससे और भी हानि होती है !!



सफलता।



धिकांश बालक क्रमशः मनुष्य हो जाते हैं; और किसी विषयमें सफलता पानेका पक्का उद्देश निश्चित किये बिना ही जीवन बिताते हैं। उनको सफलताका विस्तृत-ज्ञान भी नहीं होता। ऐसे लोगोंके लिए मैं यह परिच्छेद नहीं लिख रहा हूं। यह परिच्छेद उन नवयुवकोंके हितके लिए है, जो जीवनमें सफलता पानेकी लालसा रखते हैं, और अपने बाद कुछ ऐसा चिन्ह छोड़ जाना चाहते, जो उनके मनुष्य-जीवनकी सफलता प्रकट कर सकें।

सच्ची सफलता क्या है—पहले हमें यह जानना चाहिए कि, सच्ची सफलता क्या है? कोई कहेगा कि, जमीदार हो जाना ही सफ़लता है! किसीके खयालमें बैंकर बन जाना और हजारों रुपये सूदसे कमाना ही सफलता है। कुछ लोग अच्छे वकील या व्याख्याता होनेपर, या राज्यमें अच्छी जगह पा जानेपर, अपनेको सफ़ल समझते हैं।

वे लोग जो इस प्रकारकी सफलता प्राप्त करते हैं, किसी ख़यालसे सफल समझे जा सकते हैं। किन्तु जमीदार, बैंकर वकील या व्याख्याता हो जाने, अथवा सरकारमें कोई बड़ा ओहदा पा जानेकी गणना सच्ची सफलतामें नहीं की जा सकती। सफलताके लिए जो सीमा आवश्यक है, उस तक पहुँचनेके प्रयत्नमें निष्फलता प्राप्त करना, ऐसी सफलता पानेकी अपेक्षा अधिक सफल होना है।

वह मनुष्य सच्ची सफलता कभी नहीं पा सकता जो केवल सफलताके लिए यत्न करता है। सफलता पानेकी अपेक्षा जिस मनुष्यके जीवनका उद्देश्य अधिक ऊँचा नहीं है, वह सम्भवतः सफलता प्राप्त न कर सकेगा। ऐसा मनुष्य ऐश्वर्य की आकांक्षामें प्रवृत्त होकर ऐसा मार्ग पकड़ेगा जिससे वह इच्छित परिणाम तक पहुँच सके। किन्तु सच्ची सफलता पाने वालेमें ऐसी बात नहीं पाई जाती।

सच्ची सफलताके लिए प्रयत्न नहीं किया जाता, किन्तु वह सच्चे और श्रेष्ठ सिद्धान्तोंमें दृढ़ रहने और जीवनको कर्त्तव्य-

पालनमें बितानेसे यश-विधायक-उपहार रूपमें प्राप्त होती है। पूर्ण-सफलता प्राप्त करनेवाला वह मनुष्य है, जिसे अपने सिद्धान्तोंकी सफलतामें आनन्द प्राप्त होता है। जिन सिद्धातोंको उसका अन्तःकरण ठीक और सच्चा बताता है, उनपर वह कठिनाइयाँ सहने, दुखोंका सामना करने पर भी, दृढ़ रहता है। सफलताके ख़यालसे नहीं किन्तु, अपने कर्तव्य-पालनके ख़यालसे। वह उस तथ्यके विजयमें ही अपनी विजय समभता है, जिसका वह अटल अनुयायी था।

संसार जिसे सफलता समभता है, वह सब मनुष्योंको नसीब नहीं होती। किन्तु उन सब मनुष्योंको, जो कि सच्चे और अकृतिम सिद्धान्तोंमें दृढ़ थे, और सब प्रकारके पापों और दुराचारोंके पक्के विरोधी थे। जीवनको निष्फल गया न समभना चाहिए, बल्कि अधिकांशमें सफल समभना चाहिए।

वह मनुष्य जो सफलता प्राप्त करता हुआ मालूम होता है, वास्तवमें सदा सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। किन्तु वह मनुष्य जो कि, जीवनको निष्फल बिताता हुआ मालूम होता है, सच्ची सफलता पा सकता है। हम फिर कहते हैं कि, वह मनुष्य जो कि जीवनको विशेष सफल बनावेगा, वह मनुष्य न होगा, जो उत्साह और सच्चे प्रेमके साथ अपने कर्तव्य पालनके लिए चेष्टा करता है, और सर्वदा और सर्वत्र सच्चे और पवित्र-सिद्धान्तोंको प्रतिपादित करता है। इस प्रकारका मनुष्य, उन सिद्धान्तोंके कारण जिनको वह दृढ़ताके साथ

ग्रहण करता है, प्रेम और सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाता है। तथा सच्ची और अकृत्रिम सफलताके सर्वोच्च-शिखर पर पहुँच जाता है।

लक्ष्य स्थिर करो—केवल सफलता पानेके लिये शक्तिकी सारी पूँजी खर्च कर देना जरूरी नहीं है। प्रत्येक व्यक्तिको, जो कि अपना जीवन सफल बनाना चाहता है, सबसे पहले अपना लक्ष्य स्थिर करना चाहिये। ऐसा कोई सुनिर्द्धारित-उद्देश्य होना चाहिये, जिसकी पूर्त्तिके लिये चेष्टा करनी चाहिए। जिस मनुष्यके जीवनका कोई उद्देश्य नहीं, वह उस जहाज़के समान है, जो किसी बन्दर या देश विशेषके लिये रवाना नहीं होता। जिसमें पतवार या माझी नहीं होते। जो हवा और लहरोंका, दयाके लिये मुँह ताकता है, और जो किसी चट्टानपर टकरा सकता, या अपूर्व और वीरान किनारे पर जा लगता है।

संसारमें जो लोग अपनी कीर्त्ति-कौमुदी छिटका गये हैं, उनमेंसे प्रायः प्रत्येकके जीवनका उद्देश्य केवल एक था। नेपोलियन और वाशिङ्गटनने केवल एक ही उद्देश्यमें दृढ़ रहकर, और उसकी पूर्त्तिके लिये प्रत्येक प्रकारकी शक्तिका उपयोग कर, सफलता प्राप्त की थी। उद्देश्य चाहे जो हो, किन्तु उसका सुनिर्द्धारित होना परमावश्यक है। जिस मनुष्यके जीवनका उद्देश्य स्थिर और सुनिश्चित नहीं होता, वह मृगतृष्णाकी ओर दौड़नेवाले रेगिस्तानके मुसाफिर या कुहरेपर निशाना मारने-

वाले व्यक्तिके समान है। लक्ष्य पक्का, स्पष्ट और सुनिर्द्धारित होना चाहिए। वह इतना ऊँचा और श्रेष्ठ होना चाहिए, जिसके लिये सबसे अधिक और श्रेष्ठ यत्न, जिसे मनुष्य कर सकता है, कर सके।

उद्देश ऐसा होना चाहियें, जिस तक पहुँचना सम्भव हो। प्रत्येक मनुष्य प्रेसीडेण्ट या गवर्नर नहीं हो सकता। राजकीय पद पानेके लिये चेष्टा करना किसीके लिये अच्छा है या नहीं, वास्तवमें यह बात पूर्णतया संदिग्ध है। राजनीतिकी चक्की चलाना सेवा-वृत्तिपर अवलम्बित राजनीतिज्ञोंका काम है। अपना हित चाहनेवाला कोई भी विचार-शील मनुष्य राजनीति-की चक्की चलानेकी ओर अपना जीवन प्रयुक्त नहीं करेगा। सुनागरिक, समाजका उपयोगी सदस्य, और सत्याग्रही बननेकी ओर लक्ष रक्खो। और अनुकूलता और समयके अनुसार लक्ष्य ऊपर उठाते जाओ।

उद्देश्यमें एकाग्रता—मनुष्यको अच्छी चेष्टाओंके योग्य एक उद्देश्य निश्चित कर लेना चाहिये। उसकी पूर्त्तिके लिये समस्त शक्तियोंका व्यवहार करना चाहिए। निर्द्धारित-उद्देश्य की पूर्त्तिके लिये प्रत्येक प्रकारके धर्म-सङ्गत मार्गका अवलम्ब लेकर चेष्टा करनी चाहिए, धैर्य और परिश्रमकी आवश्यकता पड़नेपर भी चेष्टाका त्याग न करना चाहिये। यदि नैतिक-बल और मानसिक दृढ़ताकी आवश्यकता हो, तो उसके लिये अपनी आत्माको सुसज्जित करना उचित है। उसे अपनी

शक्तिको इधर उधर बाँट कर शिथिल न बना लेना चाहिए। सारांशमें, मनुष्यको एकबारगी अतिके लिये चेष्टा न करनी चाहिए। ऐसा करनेसे वह सफलताका कोई अंश भी प्राप्त न कर सकेगा। चित्तको एकाग्रता मिलना सबसे कठिन है। साधारण मनुष्योंका चित्त, नवीन दृश्यों और सुन्दर मनोमोहनी सामग्रियोंको देखकर लालायित बन जाता है। जो सच्ची सफलता पानेके लिये चित्तका आवश्यक निग्रह करता है, एक ही उद्दोश्यपर अपने चित्तको दृढ़ रखता है, वह अपने उद्देश्यपर इस प्रकार अटल रहता है कि, मृत्युके सिवाय उससे उसे कोई भी हटा नहीं सकता। उद्देश्यकी एकाग्रता तथा इन्द्रिय-निग्रह सफलताका रहस्य है।

पूर्णता—जो कुछ कहना चाहिए उसे पूरी तरह करना चाहिए। यद्यपि यह सच है कि, प्रत्यक्ष सफलता बिलकुल अपूर्ण और कृत्रिम-कार्यसे प्राप्त हो सकती है। तथापि कार्यको पूर्ण रीतिसे करनेकी सत्यता किसीने कभी अस्वीकार नहीं की। भारतीय, बहुधा कार्यको पूर्ण रीतिसे करना नहीं जानते। जर्मन निवासी जिस कार्यको हाथमें लेता है, उसकी पूर्त्तिके लिये सामान जुटाता है, और अन्तमें उसे सुचारुताके साथ पूरा कर छोड़ता है, और अपने पीछे होनेवाले कार्यकर्त्ताओंके लिये अच्छा नमूंना प्रस्तुत कर जाता है।

लड़ाईकी तैयारियोंके सम्बन्धकी प्रत्येक छोटी मोटी बात-पर ध्यान देनेसे ही नैपोलियनने बड़ी बड़ी लड़ाइयाँ जीती थीं।

वह प्रत्येक प्रकारके सम्भवनीय अवसरके लिये पहलेसे ही होशियार रहता था। हर तरहकी आपत्ति सहनेके लिये तैयार रहता था। जीवन-युद्धमें भी यही बात है। हर एक बातपर पूरा ध्यान देने, और कम महत्वके मालूम होनेवाले कामोंके करनेमें भी दुख उठानेकी आदतोंसे प्रायः उस पूर्णता या सिद्धिकी उपलब्धि होती है, जिसकी प्राप्ति दीप्तिमान् किन्तु अनियमित और कभी कभी की जानेवाली चेष्टाओंसे नहीं होती।

यद्यपि ऐसा होता है, तथापि यह जान लेना चाहिए कि मनुष्यमें उक्त गुणकी मात्रा बहुत अधिक होनेसे सफलतामें सहायता पहुँचनेके बजाय, आगे बढ़नेमें बाधा आ पड़ती है। वह मनुष्य जो कम महत्वके कार्य पूरे करनेमें अपनी समस्त शक्ति लगा देता है, उस आदमीकी तरह है, जो घर और माल-असबाब जलता हुआ देखकर भी, सागपातकी रक्षाके किये बागीचेसे गौएँ भगाता फिरता है।

ईमानदारी—ईमानदारी उन्नतिका एक अच्छा साधन है। बहुतसे नवयुवक, जिनमें उनके प्राप्त-पदके योग्य कोई खास विद्या नहीं, कोई विशेष गुण नहीं, उन्नतिकी ओर अग्रेसर होते देखे गये हैं। यद्यपि बेईमानोंकी बेईमानीसे संसारका विश्वास बहुत कुछ उठ गया है, और उठता जा रहा है; तथापि कोई भी नवयुवक जो ईमानदारीका अटल प्रेमी बनेगा; विशेष विद्या बुद्धि न होनेपर भी समाजमें, उपयुक्त और प्रतिष्ठित आसन ग्रहण करेगा।

अनुभवसे सीखना चाहिए—संसारमें भूलें सबसे होती हैं। प्रखर-बुद्धिशाली और पूर्ण सावधान व्यक्तियोंसे भी भूलें हो जाती हैं। किन्तु बुद्धिमान-व्यक्ति एक बार भूल हो जाने से आगेके लिये सावधान हो जाते हैं। उस मनुष्यसे, जिसे साधारण ज्ञान भी नहीं है, बार बार वही भूल होती है। उसका अनुभव जिस बातका अनुसरण करनेके लिये उसे सलाह देता है, वह उसकी ओर ध्यान नहीं देता। एक दार्शनिकने एक बार कहा था,—'अनुभव एक अच्छी शिक्षाशाला है, किन्तु मूर्खोंके लिये नहीं। दुर्भाग्यवश ऐसे भी लोग हैं, जो अनुभवसे भी शिक्षा ग्रहण नहीं करते।

जिस समय हमसे कोई भूल हो जाय, उस समय हमें उसके कारण ढूँढने चाहिएँ। कारण मालूम होनेपर उनको चित्तमें धारणकर लेना चाहिए, और दूसरी बार फिर भूलके गड्ढेमें न लुढ़कनेके लिये सावधान रहना चाहिए।

बहुत सी बातें हम अनुभवसे सीख सकते हैं, और उनको हमें सीखना चाहिए। कुछ बातें आत्मानुभवसे जैसी अच्छी तरहसे सीखी जा सकती हैं, वैसी अन्य मार्गोंसे नहीं। जीवन-का समय बहुत थोड़ा होनेसे, मनुष्य प्रत्येक बातकी परीक्षा या अनुभव नहीं कर सकता। इसलिये उसको यथा-सम्भव अपने पूर्वजोंके अनुभवसे लाभ उठाना उचित है। वास्तवमें वह बुद्धि-मान् आदमी है, जो अपने समकालीनों और पूर्वजोंके अनुभवसे लाभ उठाता है। और संसारकी अनेक बातोंका असली ज्ञान

प्राप्त कर लेता है। ऐसा मनुष्य उस मनुष्यकी अपेक्षा जो अपने अनुभवके अनिश्चित फलोंके विश्वाससे बाल बराबर भी हिलना नहीं जानता, अधिक उत्तमतासे कार्य कर सकता है।

बुद्धि, शक्ति, और भाग्य—लोगोंको यह कहते सुना करते हैं,—'उसकी बुद्धि-शक्ति बहुत अच्छी थी' 'वह भाग्यवान् पुरुष था।' लोग कहते हैं कि, बुद्धि-शक्ति और भाग्यमें ऐसा जादू भरा जोर है कि,जिसके द्वारा अधिकांश सफल-मनुष्य अपने साथियोंकी अपेक्षा उन विभागोंमें अधिक उन्नति पा लेते हैं, जिनमें उन लोगोंने विशिष्टता प्राप्त की है। यह कथन भूलसे भरा है। कुछ आदमी खास तौरसे, कुछ बातोंके लिये लायक होते हैं, यह बात अस्वीकार नहीं की जा सकती। मनुष्यको वह काम करना उचित है, जिसके लिये वह योग्य हो, और जिसमें उसे सफलता पानेकी अधिक सम्भावना हो। जिस काममें एक आदमी विफल हो जाता है, उस काममें एक दूसरा आदमी जिसकी बुद्धि-शक्ति अच्छी होती है, सफलता पा लेता है। इसका कारण केवल उसकी बुद्धि-शक्ति नहीं है। कारण और भी हैं। वह अपने तुल्य-व्यापारवाले विफल-मनुष्यकी अपेक्षा अधिक धैर्य, उद्योग, और गम्भीरताके साथ कार्यका अनुसरण करता है, और विशेष रीतिसे अपना दीमाग़ लड़ाता है। येही बातें भाग्यके साथ भी लगी हैं।

भाग्य उसी मनुष्यका जगता है, जो समयके लिये तैयार रहता है। समय आनेपर जो मनुष्य आवश्यक तैयारियाँ

करना शुरू करता है, वह विफल-प्रयास होता है। भाग्यवान् मनुष्य वह नहीं होता, जो किसी कार्यको करनेके लिये लापरवाहीके साथ किसी बातकी प्रतीक्षा करता रहता है। बल्कि वह होता है जो उसके लिये, जिसके द्वारा कार्य-साधन संभव होता है, अपनेको तैयार करता है। और कार्य पूरा करनेके लिए निरन्तर चेष्टा करता रहता है। ऐसा मनुष्य जिस कार्यकी ओर लक्ष करता है, उसीको पूरा करता है।

मुस्तैदी और शक्ति—जिस कामको हाथमें लो उसे दिल देकर करो। संसार अर्द्धोत्साही मनुष्योंसे, ऐसे मनुष्योंसे, जिनको यह भी विश्वास नहीं हैं कि, वे जग रहे हैं या स्वप्न देख रहे हैं। ऐसे मनुष्योंसे, जिनमें अपनेको मनुष्यताके सर्वोच्च शिखर पर पहुँचानेवाली शक्तियाँ हैं, किन्तु उनके सुस्त दिल, उनको उच्च लक्ष्यकी ओर जीवनको प्रवृत्त नहीं होने देते। उस मनुष्यको जिसका उद्देश्य जीवनको उन्नत और श्रेष्ठ बनाना है, अपनी प्रत्येक शक्ति कार्यके लिये उत्तेजित रखनी चाहिए, और जीवनके अखाड़ेमें, विजय पाने या लड़ाईमें मर जानेके दृढ़ विचारके साथ ताल ठोंककर घुस जाना चाहिए। इसके लिये, जीवन-तरंग पर उतराने या उसके नीचे डूब जानेकी ज़रूरत नहीं होती, किन्तु उठती हुई बाढ़का सामना करने और जलकी गति रोकनेकी जरूरत होती है, इसके लिए दृढ़-हृदय और दृढ़-शरीरकी आवश्यकता है।

मितव्ययिता—वह मनुष्य, जिसकी अवस्था ४० वर्षकी हो चुकी है, और जिसने अपने तथा अपने कुटुम्बके निर्वाहके लिए काफी धन नहीं बना लिया है, या तो असाधरण आपत्तियोंके चङ्गुलमें फँसा था, या फजूल खर्च करता था। स्वस्थ-मनुष्य, साधारण मज़दूर होनेपर भी बीस वर्षोंकी कमाईसे काफी धन बचा सकता है। बहुतसे लोग दुर्भाग्यके कारण नहीं, बल्कि फजूल खर्चके कारण दीनतासे दुखी देखे जाते हैं। हम ऐसे बहुतसे लोग देखते हैं। जो मेहनती होने और अच्छी मज़दूरी पानेपर भी गरीबीके धक्के सह सकते हैं। टके टकेके लिये दाँत काढ़ते दिखाई देते हैं। ऐसे लोग, उसी तरह अन्य लोग भी जो अच्छे खजानेके मालिक होतेहैं, सर्वदा समय, स्वास्थ्य, और धनका अपव्यय किया करते हैं। समय, स्वास्थ्य, और धन, ये तीनों बहुमूल्य हैं। समय मूल्यवान क्यों है? कारण, वह धनके बराबर है। यदि समय वृथा नष्ट न किया जाय तो वह ऐसे कामोंमें लगाया जा सकता है, जिससे मनुष्यका हित या संसारका उपकार हो सकता है। इसलिये समयका इस प्रकार व्यवहार करना हमारा कर्त्तव्य है, जिससे हमारा या दूसरोंका यथासाध्य हित-साधन हो सके।

जिन चीजोंकी हमें वास्तवमें आवश्यकता नहीं है, ऐसी चीजें खरीद करनेमें हम अक्सर रुपये बर्बाद किया करते हैं। हमारे खर्चका सम्भवतः तीन चौथाई हिस्सा न हमारे स्वास्थ्यके काम आता, और न हमें कोई आराम देता है। हम अपने

बहुतसे रुपये भोग विलासमें खर्च कर देते हैं, और जिससे हमारा हित नहीं अहित होता है, और इस प्रकार हमें दोहरी हानि उठानी पड़ती है।

स्वास्थ्यको नष्ट करना रुपये-पैसे नष्ट करनेकी अपेक्षा अधिक हानिकारक है। रुपया-पैसा मेहनतके साथ उद्योग करनेसे फिर मिल जाता है, परन्तु खोया हुआ स्वास्थ्य-रत्न बहुत सी दशाओंमें फिर नसीब नहीं होता। हानिकारक भोग-विलासके क्षणिक आनन्दसे हमें, घण्टो, दिनों, महीनों, सालों और यावज्जीवन भी दुःख और कष्ट सहने पड़ते हैं। समस्त प्रकारकी सम्पतियोंसे स्वास्थ्य-सम्पति बढ़कर है। हमारे गुणों और बरकतोंके लिये भी स्वास्थ्य आवश्यक है। इसलिये स्वास्थ्यकी सबसे अधिक क़दर करनी चाहिए और साव-धानीके साथ, उसकी रक्षा करनी चाहिए।

'जो गुण हैं तो अनेक हैं गाहक'—बहुतसे लोगों को यह कहते सुना करते हैं, कि संसार उनकी क़दर नहीं करता। उनके दोस्त उनकी योग्यताओंको, जोकि, उनकी, दृष्टिमें, उनमें, हैं, कबूल नहीं करते। उनको अपनी बुद्धिका चमत्कार दिखानेके लिये मौका ही नहीं मिलता। वास्तवमें, उनमें जो गुण हैं, वे केवल उनकी ही दृष्टिमें हैं। और लोग उनमें वे गुण नहीं सम-झते। यदि अपनी योग्यताओंका निश्चय करनेका मौका हमारे हाथ लगे और हम अपनेमें कोई भी खास योग्यता न सिद्ध कर सकें, तो हमें यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि, हममें वे

योग्यताएँ नहीं हैं, जिनके होनेका हमें विश्वास था। गुणकी क़द्र अवश्य और अवश्य होती है। सच्चा गुण छुपा नहीं रहता। किसी न किसी दिन वह अवश्य ही प्रकट हो जाता है। यदि हममें कोई गुण होगा, आज नहीं कल, कल नहीं परसों, एक न एक दिन वह अवश्य ही प्रकट होगा। और एक नहीं, दूसरा, और दूसरा नहीं तीसरा, कोई न कोई उसकी क़द्र अवश्य करेगा। गलीमें पड़े हुए हीरेका मूल्य सब रास्ता चलने वाले नहीं जानते। किन्तु यदि उस पर किसी जौहरीकी निगाह जा पड़ती है, तो वह उसे उठा लेता है। रूमालसे उसकी धूल पोंछता है, और मखमल लगी सन्दूकचीमें बड़े यत्नके साथ रखता है। सारांशमें, गुणका क़द्रदान कोई न कोई अवश्य ही मिल जाता है। संसारसे अभी गुण-ग्राहकता उठ नहीं गयी है। जो लोग कहा करते हैं, "गुण ना हिरानो गुण गाहक हिरानो है" उनमें वास्तवमें कोई गुण नहीं होता। बोधा कविका यह कहना बहुत ही ठीक है, 'जो गुण हैं तो अनेक हैं गाहक।'

आत्म-निर्भरता और भाग्य—आत्म-निर्भरता मनुष्यकी उन्नति और सफलताकी साधक है। अङ्गरेजीकी एक कहावत है कि "God help those who help themselves" ईश्वर उनकी ही सहायता करता है, जो स्वयं अपने भरोसे पर काम करते हैं। जो लोग स्वयं कोई कर्तव्य या उद्योग न करके दैवकी आशामें बैठे रहते हैं, वे कुछ भी नहीं कर सकते। उन पर ईश्वर दया करनेकी ज़रूरत नहीं समझता। महात्मा

तुलसी दासका कथन है:—

"कादर मन कर एक अधारा।
दैव दैव आलसी पुकारा ॥"

जो लोग अकर्मण्य होते हैं, जिन्हें परिश्रम करनेमें भय या लज्जा आती है, अथवा जो ईश्वरीय कृपाके अपात्र होते हैं, वे ही हाथ पर हाथ रख कर ईश्वरीय कृपाके भिक्षुक बनते हैं। यह ठीक है कि, कभी कभी रास्ता चलते रुपयोंकी थैली हाथ लग जाती है। या ऐसी ही और कोई अनचीता लाभ हो जाता है, परन्तु इस प्रकारके लाभकी आशामें निश्चेष्ट बैठे रहना मूर्खता है। यदि तुम ईश्वरसे सहायता चाहते हो तो, कमर कस कर कार्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण हो। और तब देखो कि, ईश्वर तुम्हारी कितनी सहायता करता है। अपने अन्तः-करण से मिलने वाली सहायता मनुष्यको सबल और दूसरोंसे मिलनेवाली सहायता निर्बल बनाती है। सदा स्मरण रक्खो कि,—

"अपने सहायक आप हो, होगा सहायक प्रभु तभी;
बस चाहनेसे ही किसीको सुख नहीं मिलता कभी।"

* * *

"आने न दो अपने निकट औदास्यमय उत्तापको;
आत्मावलम्बी हो, न समझो तुच्छ अपने आपको।"

—मैथिली शरण गुप्त।

आत्म-विश्वास—आत्म-विश्वास और आत्मनिर्भरता

का घनिष्ट सम्बन्ध है। आत्मविश्वासके बिना कोई उत्कृष्ट कार्य नहीं हो सकता। यदि तुम सफलता पाना चाहते हो, तो आत्म-विश्वासका अवलम्ब लो।

आत्म-सम्मान--अहंवाद या आत्म-प्रशंसा सभ्यता या सुजनताके बिलकुल विरुद्ध है। परन्तु आत्म-सम्मान चरित्रमें एक गुण है। आत्म-सम्मानसे, अन्य लोगोंसे भी सम्मान प्राप्त होता है। आत्म-सम्मानका पक्का प्रेमी आप स्वयं जितना अपना आदर करता है, उतना उसे दूसरोंसे नहीं प्राप्त होता। आत्म-सम्मान और अहंवाद भिन्न भिन्न चीजें हैं। अहंवादसे मनुष्य अपनेको कुछका कुछ समझने लगता है। वह अपनेमें वे गुण समझता है, जो उसमें प्रायः नहीं होते। आत्म-सम्मानसे मनुष्य अपने गुणोंकी क़द्र आप ही करने लगता है। अपनी योग्यताओं और सच्चे गुणोंका ज्ञान प्राप्त करता है। उद्देश्य सम्बन्धी उसका यथार्थत्व और आत्म-विश्वास उसकी सफलताके सहायक बनते हैं। अपनी योग्यताओंका सम्मान और विश्वास स्वयं न करनेसे जीवनमें कायरता आ जाती है, और दृढ़ता चली जाती है। आत्म-विश्वास प्राप्त कीजानेवाली वस्तु सम्बन्धी पूर्ण निश्चय और उसकी प्राप्ति सम्बन्धी आवश्यक यत्नों और उपायोंका फल है।

आत्म-सम्मान जीवनको पवित्रता और धर्म्माचारकी ओर प्रवर्त्तित करनेका मुख्य हेतु है। अन्तःकरण और आत्म-निन्दामें मनुष्यको पापसे बचानेवाली एक विशेष शक्ति है। ऐसे

कार्य्यों और विचारोंसे, जो तुम्हारे स्वतः सम्मानको घटा देते हैं, तुम्हारे हृदयमें ग्लानिकी लहरें लहराते हैं। विशेष सावधानीके साथ दूर रहकर, आत्म-सम्मानका सम्वर्द्धन करो। ऐसा करनेसे तुम दूसरोंसे प्रतिष्ठा और प्रशंसा पानेके योग्य हो सकोगे, और समय आने पर तुम्हारे गुणोंकी क़दर की जायगी।



होलकर हिन्दी ग्रन्थमाला

यह ग्रन्थमाला श्रीमंत इन्दौर नरेशके उदार आश्रय द्वारा हिन्दीमें उत्तमोत्तम ग्रन्थ-रत्नोंको गूँथनेके लिये स्थापित हुई है। इस ग्रन्थमालाके ग्रन्थोंके प्रायः बहुतसे शिक्षा-विभागोंने अपने-अपने यहाँ स्थान दिया है और हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनकी परीक्षाओंमें भी इसके ग्रन्थ सम्मिलित हैं। पुस्तकोंका मूल्य भी बहुत कम रखा गया है। अब तक निम्न-लिखित ग्रन्थ-रत्न-माला में गूँथे जा चुके हैं।

१. भारत विनय—लेखक हिन्दी-प्रसिद्ध कवि मिश्र बन्धु। मूल्य ॥-)

२. स्त्री-जीवन—लेखक सूरजमलजी जैन, मूल्य ।≈)

३. इंदौर राज्यका इतिहास—लेखक रा० ब० डा० सरजू-प्रसादजी। मूल्य ।≈)

४. स्वास्थ्य—लेखक रा० ब० डाक्टर सरजूप्रसादजी। मूल्य ≡)

५. आरोग्यप्रदीप—लेखक रा० ब० डाक्टर सरजूप्रसादजी कई रंगीन चित्र हैं। मूल्य ।≈)

६. विज्ञान और आविष्कार—लेखक सुखसंपत्तिरायजी भण्डारी। मूल्य १≈)

७. जर्मनीमें लोक शिक्षा—लेखक श्रीयुक्त पशुपाल वर्मा। मूल्य ॥)

८. इन्दौर राज्यका भूगोल—विषय नामसे ही प्रकट है। मूल्य ।≡)

९. जगद्गुरु भारतवर्ष। मूल्य २)

१०. वैज्ञानिक जीवनी—मूल्य १)

११. मेघदूत-विमर्श—लेखक हिन्दीके लब्ध-प्रतिष्ठ विद्वान् रामदहिन मिश्र। १२ हाफटोन चित्रों सहित। मूल्य २॥)

१२. योरुपका आधुनिक इतिहास—पृष्ठ संख्या ५००, मूल्य सादीका २॥) सजिल्दका ३)

१३. कुल लक्ष्मी—स्त्री-शिक्षाकी महत्वपूर्ण पुस्तक मूल्य ॥)

१४ स्वास्थ्य-विज्ञान—लेखक राय बहादुर डाक्टर सरजू प्रसादजी तिवारी। मूल्य २।)

१५ स्वस्थ शरीर—(प्रथम खण्ड) लेखक रायबहादुर डाक्टर सरजूप्रसादजी तिवारी। कई रङ्गीन चित्रों सहित मूल्य २) रेशमी जिल्द २॥)

१६ योरोपके राजकीय आदर्शोंका विकाश। ले० गोपाल दामोदर तामसकर। मूल्य २)

१७ ग्राम संख्या—ले० शंकररावजोशी। मूल्य ॥।)

१८ स्वप्नदोष—लेखक पं० गणेशदत्त शर्म्मा गौड़ विद्यावाचस्पति। १९ सादे और रंगीन चित्रों सहित। मूल्य १॥) रेशमी जिल्द २) रु०

१९ कम्पनी व्यापार प्रवेशिका—लेखक श्री० कस्तूरमलजी बांठिया। मूल्य १)

२० बर्क और केण्टका तत्वज्ञान—ले० श्री पशुपालजी वर्म्मा। मूल्य ॥)

२१ वाँ ग्रन्थ आपके हाथमें है।

इनके अतिरिक्त और भी उत्तम-उत्तम पुस्तकें छप रही हैं।

पुस्तकें मिलने का पता—

श्रीमध्य-भारत हिन्दी-साहित्य-समिति, तुकोगंज, इन्दौर।